ISSN 2349 - 137X

शब्द लोक

प्रतिध्वनि कला संस्कृति की

वर्ष 4 अंक 7
2017 - 18

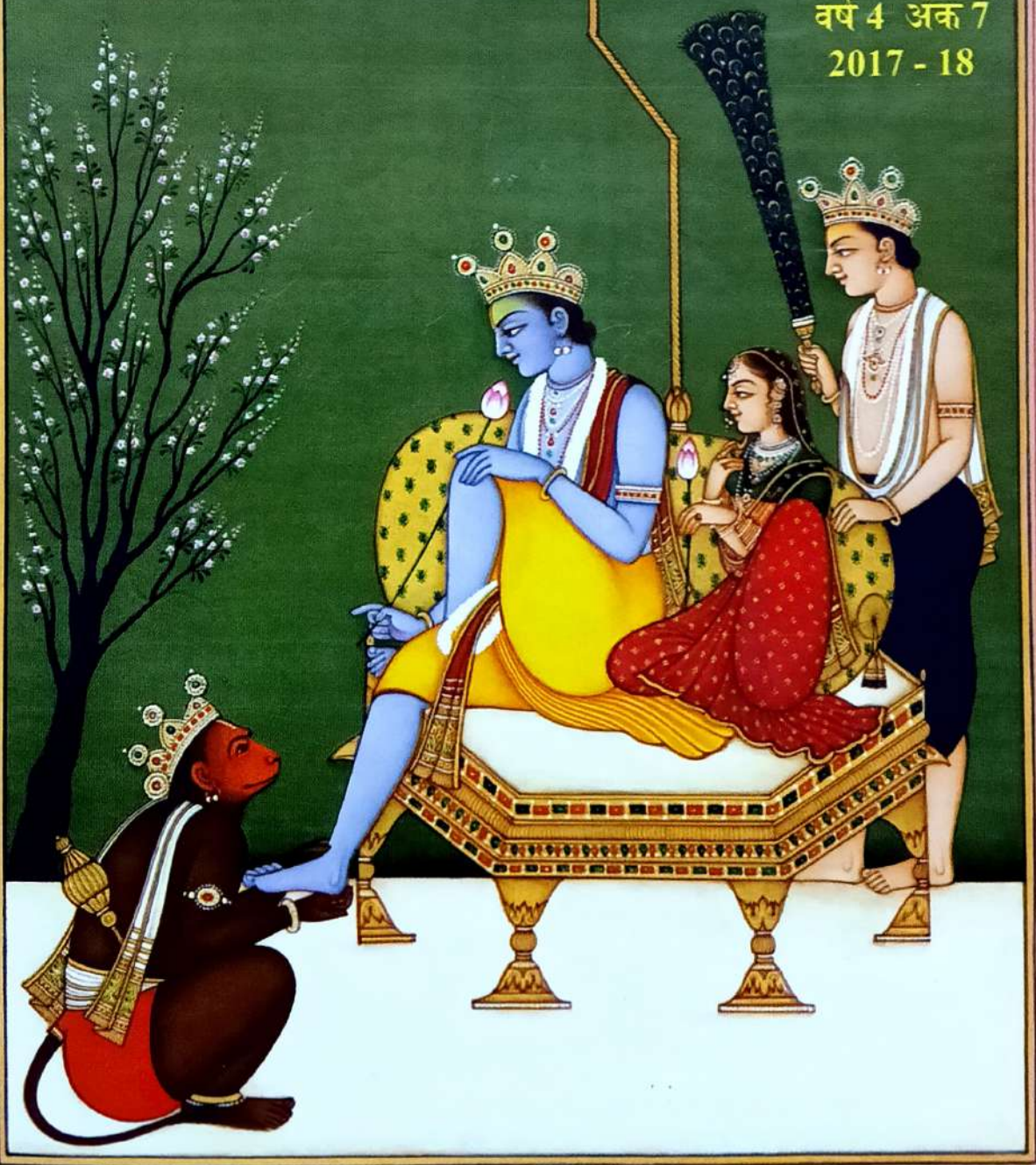

अनहद लोक

प्रतिध्वनि कला संस्कृति की

सम्पादक

डॉ. मधु रानी शुक्ला

सम्पादक मण्डल

डॉ. आशा अस्थाना, डॉ. राजेश मिश्र, डॉ. मनीष सी, मिश्र

व्यंजना

आर्ट एण्ड कल्चर सोसायटी

109 डी/4, अबूबकर पुर, प्रीतमनगर, सुलेमसराय,

इलाहाबाद - 211011

अनहद लोक

प्रतिध्वनि कला संस्कृति की

सम्पादक : डॉ. मधु रानी शुक्ला
सम्पादक मण्डल : डॉ. आशा अस्थाना, डॉ. राजेश मिश्रा, डॉ. मनीष मिश्र

सम्पादकीय सहयोग एवं कला संयोजन : शाम्भवी शुक्ला
आवरण पृष्ठ : डॉ. आर.एस. अग्रवाल

मुद्रक : विकास कम्प्यूटर एण्ड प्रिंटर्स, नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

वितरक : पाठक पब्लिकेशन, महाजनी टोला, इलाहाबाद
0532- 2402073

प्रकाशक
व्यंजना
आर्ट एण्ड कल्चर सोसायटी
109 डी/4, अबूबकर पुर, प्रीतमनगर, सुलेमसराय,
इलाहाबाद
मो. : 9838963188, 9454843001
E- mail- melodyanhad@gmail.com
madhushukla-11@gmail.com
मूल्य : 200/- प्रति अंक
वार्षिकः 500/-
तीन वर्षः 1500/-
आजीवनः 20,000/-
पोस्टल चार्जेज अलग से

© सर्वाधिकार सुरक्षित
- रचनाकारो के विचार मौलिक हैं
- समस्त न्यायिक विवाद का क्षेत्र इलाहाबाद न्यायालय होगा

मार्ग दर्शन :

पं. देबू चौधरी, डॉ. सोनल मानसिंह, प्रो. चित्तरंजन ज्योतिषी,
डॉ. कमलेश दत्त त्रिपाठी, पं. विश्वमोहन भट्ट, पं. भजन सपोरी, पं. रोनू मजुमदार, प्रो. ऋत्विक् सान्याल, प्रो. दीप्ति ओमचारी भल्ला,
पं. विजय शंकर मिश्र, पं. अनुपम राय, श्री एस. पी. सिंह

संयोजन सहयोग :

डॉ. के. शशि कुमार, डॉ. रामशंकर, डॉ. शान्ति महेश, डॉ. निशा झा

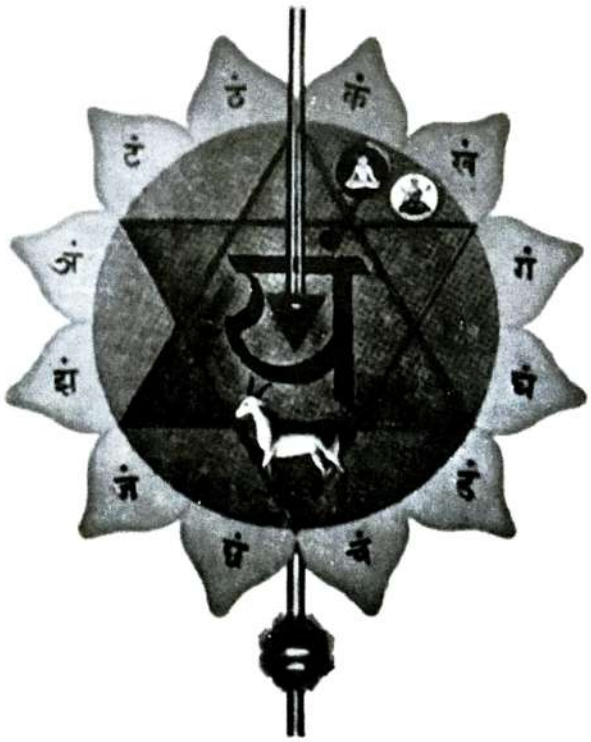

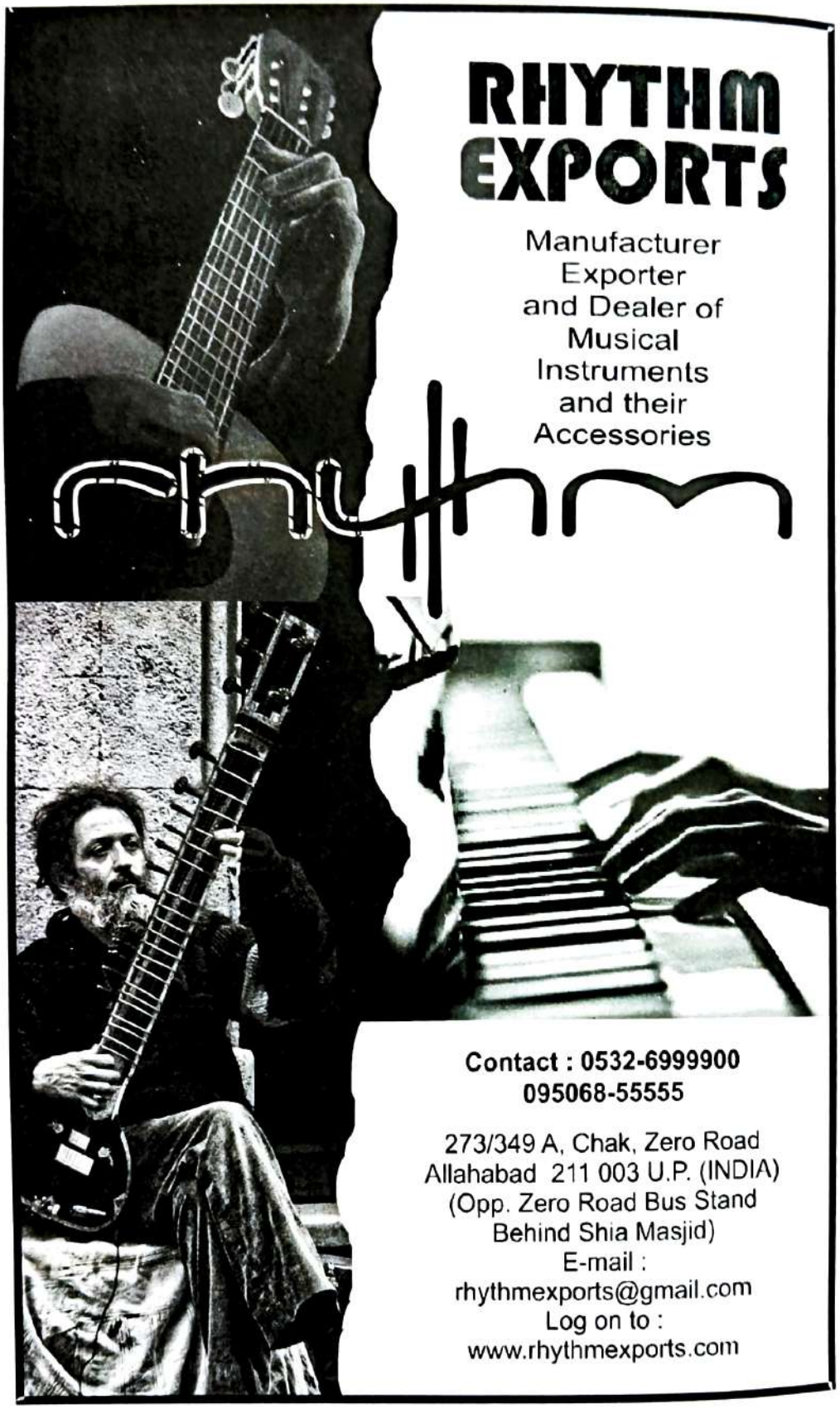
RHYTHM
EXPORTS
Manufacturer
Exporter
and Dealer of
Musical
Instruments
and their
Accessories
rhythm
Contact : 0532-6999900
095068-55555
273/349 A, Chak, Zero Road
Allahabad 211 003 U.P. (INDIA)
(Opp. Zero Road Bus Stand
Behind Shia Masjid)
E-mail :
rhythmexports@gmail.com
Log on to :
www.rhythmexports.com

जन-जन के राम, जन-जन में राम

लोक शब्द वैदिक काल से दिव्य तथा पार्थिव दो रूपों में प्रयुक्त हुआ है दिव्य रूप में वह आध्यात्मिक शक्तियों से सुसमृद्ध, सृजनकर्ता आनन्ददायक तथा पार्थिव रूप में 'जन' के रूप में प्रतिष्ठित हुआ। पौराणिक मान्यता के अनुसार सप्त उर्ध्व तथा सप्त अधःलोकों में व्याप्त 'लोक' का सार्थक मूल्य है जो धार्मिक, मनोवैज्ञानिक, आत्म संचालक तत्व से समन्वित होकर लोक का निर्माण करता है। विश्वव्यापी श्लोक 'में काल देश की सीमा रहित सम्भव-असम्भव, दृश्य अदृश्य सभी समाहित है। सृष्टि के विस्तार से प्रलय तक विस्तृत लोक दर्शन जीवन को दर्पण की भाँति प्रतिबिंबित करता है इसमें मानस संवाद होकर अनुभूतियों में परिणित हो जाता है सांसारिकता निःसीम होकर सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, आध्यात्मिक मूल तत्वों पर केन्द्रित हो जाती है जिसमें जीवंतता है, गतिशीलता है जो लोकमानस को उर्ध्वगामी चेतना प्रदान कर उच्च आदर्शों पर प्रतिष्ठित करती है। इस विश्वव्यापी लोक में लोक मंगल की भावना से त्रेतायुग में जन्में राम वीरता, भातृप्रेम, मित्रता, आदर्श नीतिज्ञ न्याय प्रियता की अद्‌भुत मिसाल हैं। दैदिव्यमान, अलौकिक सौन्दर्य से ओतप्रोत राम को मर्यादा पुरुषोत्तम कहा गया भारतीय जीवन दर्शन एवं संस्कृति के सच्चे प्रतीक राम लोक कल्याण हेतु से ही अवतरित राजसी सुविधाओं को त्याग सामान्य जन के रूप में भूमिका का निर्वहन करते हुए नारायणत्व को प्राप्त करते हैं घट घट वासी राम जहाँ सगुण भक्तिधारा में श्जन जन के राम के हैं वहीं निर्गुण भक्तिधारा के उपासकों ने 'जन जन में राम के रूप में देखा। राम नाम में ही छन्दात्मक लयबद्धता है जो जाति, धर्म, सम्प्रदाय की सीमा से परे है। साहित्य, कला, संस्कृति में राम को विविध रूपों में देखा गया बाल्मीकि, तुलसी, कबीर, रहीम, भास, भवभूति, कालिदास, मैथिलीशरण गुप्त, निराला, कम्बन रामायण, कृतिवास रामायण, मैक्समूलर, जोन्स, कीथ, ग्रिफिश, बरान्निकोव आदि की दृष्टि ने राम के विविध पक्षों को रखा। राम शास्त्रीय संगीत, लोक गीत, लोक गाथा, लोक नाट्य, चित्रकला, मूर्तिकला, वास्तुकला आदि में कला सर्जना के आधार रहें हैं।

दिनांक 30-04-2017 को अयोध्या शोध संस्थान के संयुक्तत्वाधान में व्यंजना आर्ट एंड कल्चर सोसायटी एवं झुनझुनवाला ग्रुप ऑफ इन्सटीट्यूश्न्स ने दो दिवसीय अन्तर्राष्ट्रीय अन्तर्विषयी संगोष्ठी 'लोक संस्कृति में राम' का आयोजन किया। संगोष्ठी के उद्घाटन सत्र में अयोध्या शोध संस्थान के निदेशक डॉ. योगेन्द्र प्रताप सिंह ने समस्त अतिथियों का स्वागत करते हुए संस्थान की कार्य प्रणालियों पर प्रकाश डाला साथ ही उन्होने विशिष्ट विषयों पर शोध की आवश्यकता एवं महत्व पर प्रकाश डाला, 'लोकसंस्कृति में राम' पर संगोष्ठी में राम के आध्यात्मिक, धार्मिक व अलौकिक रूप की चर्चा की। विषय की स्थापना करते हुए व्यंजना आर्ट एंड कल्चर सोसायटी की सचिव डॉ. मधु रानी शुक्ला ने विषय के अनुरूप स्थान का चयन यानी अयोध्या में ही राम की चर्चा क्यूँ? पर प्रकाश डालते हुए कहा कि ''इस संगोष्ठी के लिए यहाँ का राममय वातावरण ही उचित था, घट-घट व्यापि राम, जन-जन के राम तथा जन-जन में राम के रूप में प्रतिष्ठित हैं।'' झुनझुनवाला ग्रुप ऑफ इन्सटीट्यूश्न्स के निदेशक डॉ. गिरिजेश त्रिपाठी द्वारा संस्था की कार्य प्रणाली पर प्रकाश डाला गया। संगोष्ठी का औपचारिक प्रारम्भ दीप प्रज्जवलन से हुआ जिसमें मुख्य अतिथि के रूप में पद्मश्री स्वामी जी. सी. डी. भारती जी, श्रीयुत् श्रीवत्स गोस्वामी जी, विदुषी दीदीमाँ मन्दाकिनी रामकिंकर जी, श्री सी. पी. मिश्रा जी आदि ने सहभागिता निभाई। तत्पश्चात पं. रामाश्रय झा द्वारा रचित 'संगीतमय रामायण' की प्रस्तुती काशी हिन्दु विश्वविद्यालय के सहायक आचार्य तथा प्रख्यात गायक डॉ. राम शंकर द्वारा की गई आपके साथ तबले पर रजनीश और हारमोनियम पर संगत पंकज शर्मा ने की। संगोष्ठी का प्रारम्भ वृन्दावन से पधारे भागवताचार्य श्रीयुत् श्रीवत्स गोस्वामी जी के बीज वक्तव्य से हुआ, उन्होने कहा—"कृष्ण राममय है और राम कृष्णमय, राम के ऐतेहासिक, सामाजिक एवं साहित्यिक पक्षों पर प्रकाश डाला।" इसी विषय को आगे बढ़ाते हुए विशिष्ट वक्ता के रूप में पधारीं रामकथा मर्मज्ञ विदुषी दीदीमाँ मन्दाकिनी रामकिंकर जी ने रामराज्य की स्थापना पर विशेष बल दिया, उनके अनुसार ''रामराज्य की परिकल्पना श्री भरत, लक्ष्मण, शत्रुघन, हनुमान, सुग्रीव, जामवंत जैसे कर्तव्यनिष्ठ पात्रें के बिना असम्भव है'' साथ ही भौतिक विकास की अपेक्षा आतंरिक विकास पर विशेष बल दिया। संगोष्ठी में मुख्य अतिथि के रूप में पधारे कबीरपंथी गायक पद्मश्री स्वामी जी. सी. डी. भारती जी ने कबीर, रहीम, रस्खान, मीरा, नानक के राम की विधिवत चर्चा करते हुए कहा—''एक राम दश्रथ का बेटा, एक राम सारे जगत पसारा...'' उनकी व्याख्या राम के लौकिक रूप से अलौकिक रूप तक ले गई। इस सत्र के अंत में संगोष्ठी की अध्यक्ष श्रीमती मंजुला झुनझुनवाला ने धन्यवाद ज्ञापन किया। उद्घाटन सत्र का संचालन महाराष्ट्र से पधारे डॉ. मनीष सी. मिश्रा ने किया।

द्वितीय सत्र में कैरोलीना विश्वविद्यालय से आये विद्वान श्री जॉन कैडवेल ने 'Temples in the North Carolina' के बारे में बताते हुए North Carolina में रामलीला के वृतांत का विस्तृत विवेचन किया एवं चित्रण दिखाया जो अपने में

अत्यन्त प्रशंसनीय कार्य है। इनके पश्चात् Indonesia से पधारे श्री अफरोज ताज ने "Ram Katha in the World"s longest Muslim Country: Indonesia" का विस्तृत विवेचन किया अयोध्या को तीन स्थानों पर बताया जैसेः अयोध्या - भारत में, अयोध्या-थाइलैण्ड में, अयोध्या (योगाकर्ता)–Indonesia में। तत्पश्चात् दिल्ली से पधारीं डॉ. फरहत रिजवी जी ने 'उर्दू में साहित्य में राम' पर किये गये कार्यो की विधिवत विवेचना की तथा अनेक रोचक तथ्यों को उजागर किया। जापान से आयीं सुश्री तोमोका मुशिगा ने 'Discovered Ramgaya' में बिहार राज के 'गया' क्षेत्र के 'रामगया' स्थल की ऐतेहासिक एवं पुरातात्विक विशिष्टताओं की विवेचना की। मॉरिशस से आयीं सुश्री भजन राधाष्टमी ने 'Rama in Mauritius' पर विधिवत प्रकाश डाला। द्वितीय सत्र की अध्यक्षता डॉ. आशा अस्थाना जी ने की व संचालन इलाहाबाद विश्वविद्यालय के डॉ. धनञ्जय चोपड़ा ने किया।

तृतीय सत्र सांस्कृतिक संध्या के रूप में व्याख्यान प्रदर्शन पर आधारित रहा। कोलकाता से पधारीं श्रीमती देवयानी चटर्जी ने भरतनाट्यम् के माध्यम से, पटना से पधारीं डॉ. रमा दास ने निराला के शक्ति काव्य पाठ से, काशी हिन्दु विश्वविद्यालय के गायन विभागाध्यक्ष तथा प्रतिष्ठित कलाकार प्रो. के. शशी कुमार ने स्वामी त्यागराज, श्री मुत्तु स्वामी दिक्षित तथा श्री पुरंदर दास द्वारा रचित राममय पदों का कर्नाटक शैली में गायन प्रस्तुत किया, मुम्बई से पधारीं डॉ. माधवी नानल ने शास्त्रीय व उपशास्त्रीय संगीत की अनेक शैलियों में राममय पदों का गान किया, वाराणसी के श्री पंकज शर्मा ने राम पद गाया इनके साथ श्रीलंका से पधारे श्री अबेयसेकारा ने तबले पर संगत की, कानपुर से पधारे प्रख्यात गायक पं. विनोद द्विवेदी ने ध्रुपद-ध मार शैली में राम के पदों की प्रस्तुति दी, शांति निकेतन, कोलकाता से पधारे डॉ. सुजीत घोष ने भरतनाट्यम् शैली में प्रस्तुति दी, दिल्ली से आयीं कु. अस्मिता मिश्रा ने कथक में राम के विभिन्न रूपों को दर्शाया, उ.प्र. के सुप्रसिद्ध ढेढ़िया नृत्य की प्रस्तुति इलाहाबाद के श्री आनन्द किशोर ग्रुप ने दी एवं अंत में मुख्य अतिथि के रूप में पधारे कबीरपंथी गायक पद्मश्री स्वामी जी.सी.डी. भारती जी ने राम को कबीर के पदों में दर्शाते हुए लौकिक कार्यक्रम को अलौकिकता से मिला दिया। इस सत्र की अध्यक्षता दिल्ली से पधारे पं. विजय शंकर मिश्र तथा राजस्थान से पधारे श्री के. सी. मालू जी ने की एवं संचालन भागलपुर विश्वविद्यालय की गायन विभागाध्यक्ष प्रो. निशा झा, सुश्री शुभांगी श्रेया व सुश्री सुचित्र यादव ने किया।

दिनांक 01.05.2017 की संगोष्ठी का शुभारम्भ दरभंगा विश्वविद्यालय की डॉ. लावण्य कीर्ति सिंह 'काव्या' व भागलपुर विश्वविद्यालय की प्रो. निशा झा ने चौती में राम पदों के गान से किया। बाद में श्री अफरोज ताज व श्री जॉन कैडवेल ने स्वरचित राम पद का गान किया। चतुर्थ सत्र की अध्यक्षता लखनऊ से पधारे श्री योगेश प्रवीन जी ने की व मॉडरेटर डॉ. लावण्य कीर्ति सिंह 'काव्या' थीं। सर्वप्रथम डॉ. सुमन दुबे ने भोजपुरी लोकगीतों में राम की सोदाहरण व्याख्या की, डॉ. धनञ्जय

चोपड़ा ने 'तुलसीदास रचित रामचरितमानस' में वर्णित राम को जनसंवाद के माध्यम से विश्लेषण कर व्याख्या किया। राजस्थान से पधारे श्री के. सी. मालू जी ने राजस्थानी लोकसंस्कृति में राम जो की जन के राम है की विधिवत विवेचना की। इस सत्र का संचालन कोलकता से पधारीं डॉ. ममता रंजन त्रिवेदी ने किया। समापन सत्र की अध्यक्षता पंजाब से आयीं डॉ. नीलम पॉल ने की, इस सत्र में गोण्डा की डॉ. मनीषा सक्सेना ने शास्त्रीय संगीत में राम की चर्चा की तत्पश्चात् इलाहाबाद की डॉ. कनकलता दुबे ने राम के न्यायिक पक्षों पर प्रकाश डाला। पं. विजय शंकर मिश्र जी ने तबला में वर्णित राम-रावण युद्ध का पढ़ंत किया। प्रो. निशा झा ने दो दिवसीय अन्तर्राष्ट्रीय अन्तर्विषयी संगोष्ठी की रूपरेखा प्रस्तुत की। आभार वक्तव्य व्यंजना आर्ट एंड कल्चर सोसायटी की सचिव डॉ. मधु रानी शुक्ला ने प्रस्तुत किया व संचालन डॉ. मनीष सी. मिश्रा ने किया।

—मधु रानी शुक्ला

अनुक्रमांक

1. हज़रत अमीर खुसरो के साहित्य व संगीत में राम	डॉ. पंकज लाहौरा	11
2. निर्गुणराम की लोकस्वीकृति	मनीष पटेल	15
3. 'हिन्दी साहित्य में राम का स्वरूप'	अभिमन्यु सिंह	19
4. सकल कलात्मक दर्शन–प्रभु रामचंद्र	डॉ. अपर्णा अग्निहोत्री	21
5. संस्कृत महाकाव्य रामायण में "संगीत" एवं सांगीतिक "अवनद्ध" वाद्य	अमित कुमार शुक्ल	24
6. भारतीय संगीत तथा लोक नाट्य में राम का स्थान	श्री अनुभव पाण्डेय	28
7. साहित्य और संगीत में राम	श्री आशीष कुमार मिश्रा	31
8. भारतीय संगीत में राम	श्री आशुतोष बाजपेयी	33
9. शास्त्रीय संगीत में राम	कुमारी चारु चन्द्र	34
10. अवध के ऋतु एवं पर्व गीतों में राम	कुमारी रचना श्रीवास्तव	38
11. रामभक्ति का विकास क्रम एवं केन्द्र अयोध्या	डॉ0 सुनीता द्विवेदी	40
12. ''लोक साहित्य में भवभूति के राम''	दयानन्द पटेल	43
13. रामायण काल में तंत्री वाद्यों का स्थान एवम् महत्त्व	डॉ. संगीता सिंह	45
14. लोक संगीत में भगवान श्रीराम का स्वरूप	डॉ0 ज्योति विश्वकर्मा	47
15. नायक और नायिका के रुप मे चित्रित राधा-कृष्ण	डॉ. मीरु दुसेजा	49
16. ''नारी के प्रति राम का दर्शन''	डॉ0 प्रीति श्रीवास्तव	54
17. रामरंग मय रामरंग (पंडित रामाश्रय झा "रामरंग" जी की रचनाओं में राम)	डॉ. राम शंकर	56
18. राम कथा गायन का महत्त्व	डॉ० वेणु वनिता	60
19. पं. रामाश्रय झा जी की बंदिशों में : श्री राम	डॉ0 इभा सिरोठिया	65
20. वैश्विक संदर्भ में राम	डॉ0 रंजीता	70
21. ग़ज़ल की साहित्यिक एवं सांस्कृतिक उपलब्धियाँ	श्रीमती स्मृति शुक्ला	74
22. वैश्विक संदर्भ में राम	कुमारी गीतांजली	77
23. हरियाणवी लोकगीतों में राम	डॉ0 मन्दीप कौर	78
24. हिन्दी साहित्य में रामकाव्य धारा का विकास	कुमारी प्रियंका ठाकुर	82
25. भारतीय संगीत में श्री राम लोक गीतों के संदर्भ में	डा0 नमिता यादव	86
26. लोक संस्कृति में राम	Jannhavi Basu & Dr. Kaveri Tripathi	91
27. अवधी तथा भोजपुरी लोकगीतों में ''राम''	डॉ0 जया श्रीवास्तव	94
28. लोक संस्कृति में राम	श्री जितेन्द्र पाण्डेय	96
29. श्रीराम के चरित्र में तन्त्री वाद्यों की भूमिका	डॉ. संगीता सिंह	100

30. लोकगीतों में राम — डॉ. कावेरी त्रिपाठी 103
31. लोकगीत, गाथा, नाट्यों में राम — कुमारी क्षमा मिश्रा 108
32. ललित कलाओं में राम — डॉ0 सुषमा पाठक 112
33. साहित्य में राम — डॉ0 प्रीति श्रीवास्तव 116
34. श्री राम का भक्ति दर्शन प्रस्तोत्री — डॉ0 ममता सान्याल 120
35. 'रामरंग' संगीत-रामायण में वर्णित श्री राम-केवट संवाद — कुमारी मंजू देवी 123
36. नारी के प्रति राम का दर्शन — डॉ. अम्बिका कश्यप कु. तनुश्री कश्यप 126
37. लोकगीत एवं लोक साहित्य में राम — श्रीमती बीणा पाण्डेय 130
38. 'वाल्मीकीय रामायण में वर्णित राम-सीता के चारित्रिक आदर्श की वर्तमान में प्रासंगिकता' — कु. निधि यादव 134
39. भवभूति कृत ''उत्तररामचरितम्' में राम'' — डॉ. निशा खन्ना 136
40. 'तुलसी साहित्य में प्रतिपादित आदर्ष राजधर्म' — डॉ0 निशा द्विवेदी 141
41. लोकगीत (बज्जिकांचल में राम) — श्री श्रीनिवास सुधांशु 145
42. ''भागवत श्रीराम और नैतिक शिक्षा'' — श्री ओमप्रकाश गौड
श्री राजकुमार सिंह 146
43. भारतीय संगीत की पृष्ट भूमि में राम दर्शन का स्थान — श्री पंकज शर्मा 147
44. 'अनन्य राम भक्त रेवरेण्ड फ़ादर कामिल बुल्के'- प्रस्तुतकर्त्री — श्री निरूपम शर्मा 150
45. रामायण काल में नृत्य संगीत — डॉ. राहुल कुमार 154
46. भगवान श्री राम के जीवन प्रबन्धन सूत्र — डॉ0 अरविन्द कुमार
श्री रजनीश विश्वकर्मा 156
47. कथक और राम — कुमारी रक्षा सिंह 158
48. मैथिली लोकगीतों में राम — डॉ0 रीता दास 161
49. साहित्य में राम — डॉ0 रेखा दास 164
50. राम एक व्यक्तित्व : रंग-मंच एवं जनमान्यताओं में श्रीराम की भूमिका — शिवानी चौरसिया 166
51. रामकथा का न्यायिक पक्ष — डॉ0 कनक लता दुबे 169
52. राम सेतु की ऐतिहासिकता :- एक विश्लेषण — डॉ0 वीना सिंह 173
53. Thumri Rendered in the Karaikudi Veena Gharana — Dr. Shanti Mahesh 179
54. पं. सामता प्रसाद जी का 'वज्रादपि कठोर कुसुमादपि कोमल' तबला वादन — डॉ. रेनू जौहरी, स. आ. (तबला) 181
55. 'लोक साहित्य में राम' — डॉ सुनीता शर्मा 183
56. "शास्त्रीय संगीत में राम" — डॉ. इला शर्मा 191
57. The Ramayana influences in south East Asian Countries — Dr. Jitendra Pratap Singh 196

हज़रत अमीर खुसरो के साहित्य व संगीत में राम

डॉ. पंकज लाहौरा

पीएच.डी. सितार

दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

सारांशिका

हज़रत अमीर खुसरो चिश्ती सूफी परम्परा से ताल्लुक रखते हैं जहाँ किसी भी धर्म, जात-पात, ऊँच-नीच आदि का भेद भाव नहीं किया जाता। हज़रत अमीर ख़ुसरो के गुरु हज़रत निजामुद्दीन औलिया की ख़ानकाह में राम, कृष्ण आदि के भजन कव्वाली अंदाज में गाए जाते थे। स्वयं हज़रत निजामुद्दीन इन्हें सुनकर वज्द की हालत में आ जाते थे। इस लेख में मैंने यह बताया है कि किस प्रकार हिन्दुओं के आराध्य देव भगवान श्री राम के अमीर खुसरो परम भक्त बने और उन्होंने उनकी जन्म भूमि अयोध्या जाकर उसका वहाँ गुणगान किया।

शोध-पत्र

हज़रत अमीर खुसरो हिन्दुस्तानी संगीत के उन संगीत शास्त्रियों में से हैं जिनका ताल्लुक चिश्तिया सूफी सिलसिले से है। इस सिलसिले की शुरुआत ग्यारहवीं शताब्दी में ख़्वाज़ा मुइनुद्दीन चिश्ती ने अज़मेर में डाली थी। शुरू से ही इस चिश्ती सूफी सिलसिले की ख़ासियत रही है कि उसने इंसानों में जात-पात, ऊँच-नीच और धर्म का कोई मतभेद नहीं किया। हिन्दू मंदिरों में भजन-कीर्तन और आरती-वंदना से प्रेरित व प्रभावित हो कर ही ख़्वाजा मुइनुद्दीन चिश्ती ने डफ वाद्य पर अरबी में कुरान की आयतें गाना शुरू किया था। यह 'समा' या 'सिमाँ' के नाम से मशहूर हुआ। समाँ फारसी भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है सुनना या श्रवण करना, ग्रहण करना। इसी समाँ संगीत से आगे तेरहवीं-चौदहवीं शताब्दी में सूफी कवि और संगीतकार हज़रत अमीर खुसरो ने कौल का अविष्कार किया। यह सर्वविदित है कि कौल से ही कव्वाली बनी। कौल से ही आगे चलकर हज़रत अमीर खुसरो ने कव्वाली ईजाद की। हज़रत अमीर खुसरो ने जो भी हिन्दुस्तानी संगीत में अविष्कार किए वे सभी हिन्दुस्तानी और ईरानी फारसी संगीत के मिश्रण से उन्होंने बनाए। इसमें हिन्दुओं के सनातन पंथ और निर्गुण पंथ दोनों का असर साफ झलकता है।[1]

अमीर खुसरो के गुरु हज़रत निज़ामुद्दीन को संगीत सुनना बहुत पसंद था। अक्सर उनकी ख़ानकाह में, जहाँ वह रहते थे कव्वाली और समां की महफिलें लगती थीं। उनमें हिन्दू धर्म के भक्ति संगीत का पूरा असर था। हज़रत निजामुद्दीन की ख़ानकाह में उनके सबसे प्रिय शिष्य अमीर खुसरो भगवान राम, कृष्ण, होली आदि के गीत, बंदिशें और कव्वालियाँ गाते थे। अमीर खुसरो के पिता अमीर सैफुद्दीन मध्य ऐशिया के तुर्कमेनिस्तान देश से थे और उनकी माता माया देवी राजस्थान के एक सभ्रांत हिन्दू परिवार से थीं। बचपन से ही अमीर खुसरो को कुरान, हदीस, गीता, महाभारत, रामायण, दर्शन शास्त्र, वेदों व संस्कश्त भाषा के

अध्ययन का मौका मिला था। इन दो धर्मों और विचारधाराओं का बालक अमीर ख़ुसरो के मन पर गहरा असर हुआ। फिर बाद में जब हज़रत निजामुद्दीन ऑलिया जैसे महान सूफी सन्त के वे शिष्य बने तो उनकी इस गंगा जमुनी तहजीब की सोच को बल मिला। अब अमीर ख़ुसरो भी अपने गुरु के साथ उनकी ख़ानकाह में हिन्दुओं के त्यौहार बसंत-पंचमी, होली आदि मनाने लगे।[2]

आपको जानकर हैरत होगी कि अमीर ख़ुसरो की जिंदगी में भगवान श्री राम का महत्वपूर्ण योगदान है। दिल्ली के सुल्तान बलबन के चचेरे भाई थे अमीर अली। बलबन ने उसे अवध प्रदेश का राज्यपाल बनाया था। इसी बीच अमीर अली ने सूफी शायर और संगीतकार अमीर ख़ुसरो को अपना शाही कवि व संगीतकार नियुक्त किया। ये अमीर अली संगीत को बहुत पसंद करते थे। अमीर ख़ुसरो सन् 1286 ई. में अमीर अली के साथ अवध यानी अयोध्या पहुँचे। हैरत की बात ये है कि पहले अमीर ख़ुसरो दिल्ली छोड़कर अवध या अयोध्या नहीं जाना चाहते थे क्योंकि उन्हें अपने दिल्ली शहर से बेपनाह लगाव था। वह भावावेश में दिल्ली को हज़रते देहली कहते थे। दूसरा अमीर ख़ुसरो को हमेशा अपने गुरु हज़रत निज़ामुद्दीन औलिया और अपनी माता की याद सताती थी। अमीर ख़ुसरो बेहद भावुक इंसान थे।

खैर, अमीर ख़ुसरो देहली से अयोध्या चले। रास्ते में बहुत बारिश हुई और अमीर ख़ुसरो ने लिखा है कि जैसे एक दुल्हन अपने बाबुल के घर से अपने पति के घर रोते-बिलखते हुए जाती है उसी प्रकार वे भी इसी दयनीय अवस्था में अवध पहुँचे। परन्तु अवध या अयोध्या पहुँचते ही अमीर ख़ुसरो को वह शहर बहुत ही आकर्षक लगा। पटियाली, कस्बा, जहाँ अमीर ख़ुसरो का जन्म हुआ, वहाँ एक शोधकर्ता जनाब ईसार मियाँ तो हज़रत अमीर ख़ुसरो पर कई वर्षों से लगातार शोध कर रहे हैं। जनाब ईसार मियाँ ने बताया कि जब अमीर ख़ुसरो अवध या अयोध्या में घूमने निकले तो वहाँ के आम साधारण लोगों ने उनसे कहा कि भगवान राम की जन्मभूमि में आपका स्वागत है। आप सदा खुश रहें। यह सुनकर अमीर ख़ुसरो खुशी से भर उठे। उस समय अवध की राजधानी, यही राम की नगरी अयोध्या थी। यही बाद में बँटकर फैजाबाद और लखनऊ बनी। अमीर ख़ुसरो ने फिर भगवान श्री राम, लक्ष्मणजी और सीता जी की तारीफ में करीब 240 शेर फारसी भाषा में लिखे। अमीर ख़ुसरो ने यहीं अयोध्या में एक फारसी में मस्नवी 'अस्पनामा' लिखी। भगवान राम की तारीफ में ये सभी फारसी शेर इसी ग्रंथ में ख़ुसरो ने लिखे। अमीर ख़ुसरो हिन्दू धर्म के लोगों के परम आदरणीय भगवान श्री राम की तारीफ जी खोलकर करते हैं। वे फरमाते हैं कि जो लोग कट्टरपंथी हैं वो अयोध्या के नागरिकों से पूजा करने का तरीका सीखें। अमीर ख़ुसरो अपने एक फारसी शेर में भगवान श्री राम की बहुत तारीफ करते हैं।

"शोखी-ए-हिन्दू बबीं कू दिन ब बुद अज ख़ास ओ आम।

राम-ए-मन हरगिज़ न शुद, हर चनद गुफतम राम राम।।"

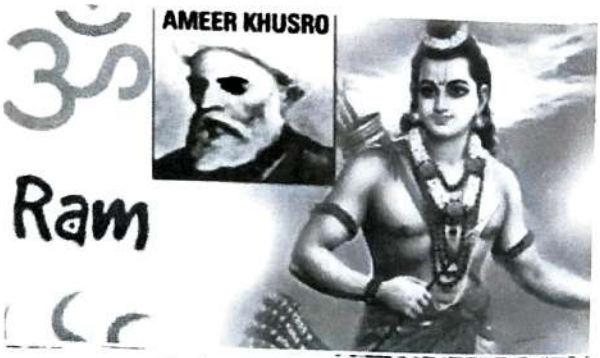

इस फारसी शेर का हिन्दी भावार्थ- इस दुनिया के सभी खास और आम इंसानों को यह तथ्य अच्छी-तरह पता होना चाहिए कि भगवान राम इस सर-ज़मीन यानी हिन्दुस्तान की एक शोख व शानदार

हस्ती हैं। राम तो बस मेरे दिल के भीतर बसे हुए हैं। वह मुझसे (अमीर ख़ुसरो) से हरगिज अलग न होंगे और मैं जब भी कहूँगा तो सबसे बस 'राम राम' ही कहूँगा।[3]

मसनवी अस्पनामा में अमीर ख़ुसरो श्रीराम की पूरी जिंदगी को निरन्तर अपनाने के योग्य मानते हैं। इसे एक प्रयोगातमक जीवन भी कह सकते हैं। अमीर ख़ुसरो अपने दिल की गहराइयों से कहते हैं कि अयोध्या नगरी में श्री राम की दिन की पाकीगज का ढंग आज भी लोगों में जिंदा है। जहाँ सारी मान-मर्यादा, माता-पिता का आदेश, बड़े भाई का लिहाज आदि श्री राम जैसी पावन व मर्यादा पुरुषोत्तम पैगम्बरीय शख़्सियत के वक्त ही हो सकता है? यहाँ हर एक अमीर और गरीब दोनों ही खुद को धन्य मानते हैं।

बम्बई के मशहूर गायक राजा हसन व सुमेधा ने कुछ वर्ष पूर्व अमीर खुसरो द्वारा लिखित इस भगवान श्रीराम के शेर को 'राम भजन' के रूप में गाया है। यह इंटरनैट पर 'यो ट्यूब' पर उपलब्ध है। इसका पता https://youtubeè nncvhyockiq है। इस संगीत एलबम का नाम है, 'नमामि रामम'। इसको गया है राजा हसन और सुमेधा। इसका संगीत विवेक अस्थाना ने दिया है। इस वीडियो एलबम का निर्देशन नितीश दधीच ने किया है। यह माया आर्ट्स इंटरनेशनल की तरफ से निकाला गया है। इसकी तारीख है 13 अगस्त, 2014 ई.।

शोधकर्ता प्रदीप शर्मा खुसरो, जो आगा ख़ान ट्रस्ट फॉर कल्चर से जुड़े हैं, उन्होंने मुझे बताया कि, "हज़रत अमीर ख़ुसरो के बहुत सारे राम भजन लोक संगीत और शास्त्रीय संगीत में भी गाऐ जाते हैं। अवध में जब अमीर ख़ुसरो दो वर्ष रहे तो वहाँ उन्होंने भगवान श्री राम की तारीफ में लिखा।[4] इनमें से बहुत से कलाम अमीर ख़ुसरो ने फारसी के अलावा खड़ी बोली हिन्दी में गाए हैं। जैसे-

"झुलना झुला झुलावो री, अंबुवा की डारी पे कोयल बोले रामा,
कूक-कूक जिया रे, झुलना झुलावो री।
नन्हीं नन्हीं बरखा बूँदनियाँ, बरसत बहार आए
बरखा फुहार, अबहुँ ना आयो बालमवा।
खुसरो निजाम पिया को झुलना झुलावो।"

इस प्रकार हज़रत अमीर ख़ुसरो ने भगवान श्री राम का नाम अपनी पहेलियों में भी इस्तेमाल किया। जैसे निम्न कहमुकरनी में श्रीराम का जिक्र देखें-

बखत-बखत मोये वाकी आस, रात दिना वो रात मैं पास।
मेरे मन को सब करत है काम, ऐ सखी साजन न सखी राम।।

अर्थात्- हर पल मैं उसका इंतजार करता हूँ। रात और दिन वो मेरे पास रहता है और वो मेरी इच्छा के अनुसार मेरा सारा काम कर देता है। ऐ मेरी प्यारी सखी वो क्या साजन है? नहीं वो तो मेरे भगवान श्री राम हैं।

इस प्रकार हमने देखा कि कैसे अमीर ख़ुसरो ने एक मुस्लिम सूफी सन्त होते हुए भी भगवान श्री राम की मोहब्बत में फारसी में शेर व कसीदे और खड़ी बोली हिन्दी में गीत और पहेलियाँ लिखीं। अमीर ख़ुसरो की ये सभी रचनाऐं हिन्दुस्तानी संगीत में गाई जाती है।

संदर्भ ग्रंथ

1. अमीर ख़ुसरो- एक बहुआयामी व्यक्तित्व लेखक, प्रदीप शर्मा ख़ुसरो, साक्षी प्रकाशन, शाहदरा, दिल्ली, पृष्ठ 78-80 तक व पृष्ठ 237 पर, सन् 2016ई.।
2. लाइफ, टाइम्स एण्ड वर्क्स ऑफ अमीर ख़ुसरो दहलवी, संपादक डा. जोय अंसारी, नेशनल अमीर ख़ुसरो सोसाइटी ऑफ इंडिया, सन् 1974 ई., पृठ 41-45 तक
3. यू ट्यूब लिंक https:èèyoutu.beènncvhyockiq

साक्षात्कार

1. डा. इक्तेदार हुसैन सिद्दीकी, फारसी एवं उर्दू विद्वान, अलीगढ़, सन् 2016 ई.।
2. शोधकर्ता ईसार मियाँ, पटियाली, जिला एटा, सन् 2014 ई.।
3. शोधकर्ता प्रदीप शर्मा खुसरो, आगा ख़ान ट्रस्ट, दिल्ली।

(Footnotes)

[1] साक्षात्कार डॉ. इक्तेदार हुसैन सिद्दीकी, फारसी-उर्दू शोधकर्ता, सन् 2016 ई.

[2] लाइफ, टाइम्स एण्ड वर्क्स ऑफ अमीर खुसरो, संपादक डा. जोय अंसारी, नेशनल अमीर खुसरो सोसाइटी, सन 1975 ई., बम्बई।

[3] अमीर खुसरो-एक बहुआयामी व्यक्तित्व, लेखक प्रदीप शर्मा खुसरो, साक्षी प्रकाशन, शाहदरा, दिल्ली, सन् 2016 ई., पृष्ठ 70-80, 237 पर।

[4] साक्षात्कार प्रदीप शर्मा खुसरो, शोधकर्ता आगा खान ट्रस्ट फॉर कल्चर, दिल्ली, सन! 2014 ई.।

निर्गुणराम की लोकस्वीकृति

मनीष पटेल

शोध छात्र (हिन्दी)
पीएचडी (हिन्दी विभाग), दिल्ली विश्वविद्यालय

''एक बार मुल्ला नसीरूद्दीन घर के बाहर कुछ ढूँढ रहा था। तभी उधर से गुज़रते हुए एक व्यक्ति ने उसे देखते हुए पूछा कि–'क्या खोज रहे हो मुल्ला?' तोनसीरूद्दीन ने जवाब दिया कि 'चाभी नहीं मिल रही है, वही खोज रहा हूँ।' फिर उस आदमी ने मुल्ला की मदद करने के लिए वहीं घुटनों के बल झुका और जमीन पर खोजने लगा। कुछ देर बाद उस आदमी ने कहा, 'आप ठीक-ठीक बताइए कि आपने कहाँ रखा था?' नसीरूद्दीन ने कहा 'घर के अन्दर।' इस पर उस आदमी ने पूछा फिर आप यहाँ क्यों खोज रहे हैं ? तो मुल्ला ने कहा कि, मेरे घर से यहाँ प्रकाश अधिक है।''[1]

निर्गुण एक अनिर्वचनीय सत्ता का बोधक है, जिसे बहुधा परमतत्व और ब्रह्म जैसी संज्ञाओं द्वारा अभिहित किया जाता है। ज्ञान-मार्ग निर्गुण कवियों का अनूठापन है, जो सगुण कवियों के भक्ति मार्ग से भिन्न है। निर्गुण राम की उपासना मूलतः सगुणोपासना के स्थूल रूपों जैसे मूर्तियों तथा अवतारों आदि के प्रति श्रद्धा प्रदर्शित करने की भिन्नता के रूप में हम देख सकते हैं। निर्गुण सम्प्रदाय हिन्दुओं के निरंजनी सम्प्रदाय तथा मुस्लिम सूफी संतों से अलग है। यह इस मामले में भी भिन्न है कि ये अपने-अपने मूल धर्मों की ओर से शांतिपूर्वक सन्तुष्ट जान पड़ते हैं, यद्यपि, ''इसका (सूफी, निरंजनी सम्प्रदाय) उद्देश्य भी है कि संसार को विभिन्न मतों के रहते हुए भी एक व्यापक भ्रातृभाव के साथ रहना चाहिए।''[2] सगुणोपासक तुलसीदास भी निर्गुण सत्ता को स्वीकार करते हैं। वे मानते हैं कि आराध्य देव के निर्गुण रूप को समझे बिना सगुण भक्ति संभव नहीं है–

हिय निर्गुन, नयनन्हि सगुन, रसना राम सुनाम।
मनहुं परट-संपुट लसत, तुलसी ललित ललाम।।
–दोहावली

'हिन्दी साहित्यः संवेदना और विकास' मेंराम स्वरूप चतुर्वेदी भक्तिकाल की सगुण और निर्गुण धारा का अन्तर 'समाज' और 'लोक' शब्द की व्याख्या करते हुए अलगाते हैं, वे कहते हैं कि, ''शुक्ल के लिए समाज अपने सभी वर्गों के साथ, जिसे वे समष्टि रूप में 'जनता' कहते हैं, साहित्यिक परिवर्तन और विकास के लिए जिम्मेदार है, द्विवेदी इसके लिए प्रमुख कारक 'लोक' को मानते हैं, जो समाज का अपेक्षतया पिछड़ा वर्ग है। समकालीन जीवन में भी इन दोनों शब्दों की ऐसी छायाएँ 'जनता पार्टी' और 'लोक दल' के नामकरण में देखी जा सकती हैं।''[3] इसीलिए नामवर सिंह मध्ययुग के भारतीय इतिहास का मुख्य अन्तर्विरोध शास्त्र और लोक के बीच द्वन्द्व के रूप में मानते हैं। यहाँ लोक ऐसा समूह है जहाँ ऊँच-नीच, गरीब-अमीर सब एक पंक्ति में खड़े दिखाई पड़ते हैं, वहीं रामचन्द्र शुक्ल का समाज एक खास व्यक्तियों का समूह है, जहाँ विभिन्नता लोक की तुलना में कम है, जहाँ एक ही वर्ग का दबदबा है। यहीं कबीर के

निर्गुण राम तुलसी के राम से आगे खड़े दिखाई पड़ते हैं।

निर्गुण धारा हमारे सांस्कृतिक विकास की श्रृंखला की एक महत्वपूर्ण कड़ी है, जो आज कहीं ग़ायब होती चली जा रही है, या फिर जिसे ग़ायब करने की साजिश चल रही है। यह सम्प्रदाय एक सुसंगत विचारधारा प्रस्तुत करता है, जिसके आधार पर विशिष्ट पद्धति का निर्माण किया जा सकता है। जिसके सन्दर्भ में पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल लिखते हैं कि, ''इन विचारधाराओं द्वारा व्यक्त किए गए धार्मिक भाव सीधे-सादे आडम्बरहीन और व्यापक हैं। परम्परागत धर्मों की व्यर्थ बातों की उपेक्षा करते हुए इन्होंने वास्तविक धर्म के मूल तत्व को सुस्पष्ट कर दिया है, जिसका सार कबीर के शब्दों में इस प्रकार दिया जा सकता है- परमात्मा के प्रति सच्चे रहो और दूसरों के साथ सीधा व्यवहार करो।''[4] ये सम्पूर्ण मानवता के पक्षधर हैं उनके यहाँ किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं है। वहीं हम देखते हैं कि आज चारों तरफ धर्म का ढ़ोंग रचा जा रहा है, और लोगों में व्यक्ति के प्रति नफ़रत की भावना की खेती-बाड़ी फल-फूल रही है।

मुगलों के आगमन के पहले से ही हिन्दुओं में जो तथाकथित शूद्र और अतिशूद्र वर्ग था उसमें भय की भावना विद्यमान थी क्योंकि मुस्लिम सत्ता वर्ग के साथ तथाकथित उच्चवर्ण के लोगों की सांठ-गांठ थी। ठीक उसी तरह जैसा कि आज की केन्द्रीय सत्ता में किसी खास समुदाय की उग्र विचारधारा की सरकार बनने से हिन्दुस्तान के एक तबके में असन्तोष की भावना है,ऐसी ही भावना उस समय के शूद्रों में थी और वे हिन्दुओं (ब्राह्मणों) के मंदिरों में नहीं जा सकते थें ऐसे में उन नीची समझी जाने वाली जातियों का रूझान निर्गुण ब्रह्म की तरफ काफी तेजी से बढ़ा। इसीलिए हम देखते हैं कि भक्तिकाल में निर्गुण राम की उपासना करने वाले अधिकतर कवि तथाकथित नीची जातियों से हैं। मध्यकालीन भारतीय इतिहास के पन्ने शूद्र भक्तों के नामों भरे पड़े हैं जिन्होंने अपने समुदाय के लोगों में आत्म गौरव की भावना को भरकर अपने समुदाय के लिए एक विकल्प तैयार किया और यह बताने में कामयाब रहे कि यदि प्रभु नाम से ही मोक्ष की प्राप्ति के रास्ते पर चला जा सकता है तो वह प्रभु हमारे भीतर है तथा हर जगह विद्यमान है, तथा उन लोगों ने सगुण ब्रह्म की उपासना को बेमानी साबित कर दिया। चाहे वे कबीर, नानक, रैदास, नामदेव, सेन, दादूदयाल या कोई और निर्गुण धारा का कवि क्यों न हो। इस तरह इन सन्त और भक्त कवियों ने शूद्रों के लिए आध्यात्म का दरवाजा खोल दिया जो सदियों से इनके लिए बन्द पड़ा था, तथा उन्हें लोक की एक सुदृढ़ परम्परा से सूत्रबद्ध कर दिया।दादूदयाल राम को कण-कण में विद्यमान बताते हुए कहते हैं कि-

घीव दूध में रमि रह्या व्यापक सब ही ठौर।
दादू बकता बहुत है, मथि काढ़ै ते और।।
यह मसीत यह देहरा सतगुरु दिया दिखाइ।
भीतर सेवा बंदगी बाहिर काहे जाइ।
दादू देख दयाल को सकल रहा भरपूर।
रोम रोम में रमि रह्या तू जनि जानै दूर।।
केते पारखि पचि मुए कीमति कही न जाए।
दादू सब हैरान हैं गूंगे का गुड़ खाइ।।
जब मन लागे राम सों तब अनत काहे को जाइ।
दादू पाणी लूण ज्यों ऐसे रहै समाइ।।

इतना ही नहीं उधर ''रामानुज की शिष्य परम्परा में होते हुए भी रामानन्द भक्ति का एक अलग उदार मार्ग निकाल रहे थे जिसमें जाति-पाँति का भेद और खानपान का आचार दूर कर दिया गया था। अतः इसमें कोई सन्देह नहीं कि कबीर को 'राम नाम' रामानन्द से ही प्राप्त हुआ। पर आगे चलकर कबीर के 'राम' रामानन्द के 'राम' से भिन्न हो गए।''[5] इस प्रकार कबीर निर्गुण उपासना के प्रति दृढ़ हो गए, अब उनके राम धनुर्धर साकार राम नहीं रह गए तभी तो वह कहते हैं कि–

दसरथ सुत तिहुँ लोक बखाना।
राम नाम का मरम है आना।।

इस प्रकार कबीर ने निर्गुण राम का चरित्र लोक के सामने लाकर खड़ा करदिया तथा राम को

मन्दिरों से निकालकर जन-जन तक पहुँचा दिया। लोगों को मन्दिर में जाने का अधिकार नहीं था, तभी इन कवियों ने राम को लोगों के दहलीज पर ले जाकर खड़ा कर दिया। गुरूनानक ने भी यही रास्ता चुना वे कहते हैं कि,-

सोच विचार करे मत मन मैं जिसने ढूँढा उसने पाया।
नानक भक्तन दे पद परसे निसदिन राम चरन चित लाया।।

ये कवि यह बताने में सफल रहे कि निर्गुण राम के यहाँ किसी प्रकार का शोषण नहीं है उनके यहाँ सीता (किसी स्त्री) को अग्नि परीक्षा नहीं देनी पड़ती वो किसी प्रेम करने वाली स्त्री का कान-नाक नहीं काटते कुल मिलाकर ये स्त्री विरोधी न होकर मानवता के साथ खड़े दिखाई पड़ते हैं। इनके यहाँ मानवता का सम्मान है न कि लिंग के आधार पर भेदभाव। 'हिन्दी साहित्य कोश' में इस पंथ के बारे में बताया गया है कि, ''लोगों को इसकी (निर्गुण पन्थ) ओर ले जानेवाली सबसे पहली प्रवृत्ति ऊँच-नीच और जाति-पाँति सम्बन्धी भाव के त्याग एवं ईश्वर भक्ति के लिए मनुष्य मात्र के समान अधिकार की स्वीकृति में दीख पड़ी थी।''[66] वर्मा, धीरेन्द्र (संपादक), (2013), निर्गुण धारा के कवि वर्ण व्यवस्था के विरोधी और मानवता के समर्थक थे। वे मानते थे कि मानव समाज के सिवा दूसरा वर्ण नहीं और एक राम के सिवा दूसरा भगवान नहीं। ये भेदभाव वाली विचारधारा के समर्थक बिल्कुल नहीं थे।

भारतीय साहित्य में राम का एक महत्वपूर्ण स्थान है। दशरथ पुत्र राम का पहले पहल उल्लेख रामायण और महाभारत में हुआ है, जो लोक में एक आदर्श के रूप में मौजूद हैं। जिसे लोकप्रिय बनाने में साधु और पंडों की अहम् भूमिका है। साथ ही आम जनमानस तक अपनी बात पहुँचाने के लिए कवि और लेखकों ने सगुण के साथ निर्गुण राम की भी एक समानान्तर धारा चलायी। तभी तो कबीरदास सगुण राम को चुनौती देते हैं और कहते हैं कि,-

हम निर्गुण तुम सरगुन जाना। -कबीरदास

मलूकदास ने भी निर्गुण राम को लोगों में प्रतिष्ठत किया तथा उन्होंने सब कुछ मनुष्य के भीतर होने की बात कही है, वे मानते हैं कि बाहर कुछ भी नहीं है वह कहते हैं कि-

हमहीं तरवर कीटपतंगा।
हमहीं दुर्गा हमहीं गंगा।।
हमहीं मुल्ला हमहीं काजी।
तीरथ बरत हमारी बाजी।।
हमहीं दसरथ हमहीं राम।
हमरै क्रोध औं हमरै काम।।
हमहीं रावन हमहीं कंस।
हमहीं मारा अपना बंस।।

मलूकदास ऐसे कवि हैं जो राम की उपासना करने, उन्हें अपने भीतर खोजने तथा ऐसा न करने वाले आलसी लोगों के भीतर भी आत्मगौरव की भावना भरते हैं। उनका यह मन्त्र गाँव-गाँव तक आज भी प्रचलित है-

अजगर करे न चाकरी पंछी करे न काम।
दास मलूका कहि गए, सबको दाता राम।।

अध्ययन से साफ है कि तुलसीदास, जिनके राम सगुण और अयोध्या निवासी हैं वे एक किताबी कवि तथा मनुष्यों द्वारा निर्मिम एक भौतिक जगत के राम हैं, जिनका एक संस्कार और निश्चित समाज है, जबकि कबीर की कोई किताब आज किसी के घर में नहीं मिलेगी लेकिन फिर भी वे लोक में व्याप्त हैं उनके राम को जानने के लिए किसी किताब कि जरूरत भी नहीं पड़ती है। क्योंकि उस समुदाय से आने वाले लोगों को आज भी पढ़ने का अधिकार नहीं दिया जाता है, विश्वविद्यालयों से उन्हें आज भी बाहर निकालने की साजिश चल रही है जिसे जेएनयू में अभी भारी सीट कट के रूप में देखा जा सकता है।

वैसे तोराम के चरित्र का इतना अधिकविस्तार देखने को मिलता है कि बाद के कवियों ने इस नाम

केसहारे ही जीवन जीने और मोक्ष पाने का रास्ता बताया है। इस बेहिसाब लोकप्रियता के साथनिर्गुणराम को कवियों नेलोक को धर्म, रूढ़िवादिता और अन्धविश्वास के गड्ढे से बाहर निकालते तथा हिन्दुस्तानी सभ्यता को आधुनिकता के रास्ते पर ले जाने का प्रयास करते हुए दिखाई पड़ते है। अतः लोक में निराकार राम निर्गुण कवियों की नयी निर्मिति जान पड़ते हैं न कि सगुण कवियों का विस्तार। इस राम की लोकस्वीकृति किसी जाति और धर्म से परे और सर्वसुलभ है, वह भी ऐसे समय में जब जातियों का धर्मयुद्ध चल रहा है। सगुण भक्तिधारा के कवि राम के चरित्र द्वारा बाईपास रास्ते के सहारे आम जन तक पहुँचने का प्रयास करते हुए दिखाई पड़ते हैं। इस प्रकार निर्गुण कवियों में अपने अन्दर खोए हुए आत्मसम्मान को सगुण राम से बाहर निर्गुण राम प्रतिष्ठित कर दिया, जिसे लोक उन्हें खोजता हुआ नज़र आ रहा हैं।

(Endnotes)

[1] Doniger, Wendy (2009), The Hindus: An Alternative History, New Delhi: Penguin Books, pp. 17

[2] बड़थ्वाल, पीताम्बरदत्त (1995), हिन्दी काव्य की निर्गुण धारा, अनुवाद एवं संपादनः परशुराम चतुर्वेदी, भगीरथ मिश्र, नई दिल्ली : तक्षशिला प्रकाशन, पृष्ठ संख्या- 12

[3] चतुर्वेदी, रामस्वरूप (2006), हिन्दी साहित्य और सम्वेदना का विकास, इलाहाबादः लोकभारती प्रकाशन, पृष्ठ संख्या- 34

[4] बड़थ्वाल, पीताम्बरदत्त (1995), हिन्दी काव्य की निर्गुण धारा, अनुवाद एवं संपादनः परशुराम चतुर्वेदी, भगीरथ मिश्र, नई दिल्ली : तक्षशिला प्रकाशन, पृष्ठ संख्या- 14

[5] शुक्ल, रामचन्द्र (2003), हिन्दी साहित्य का इतिहास, वाराणसीः नागरीप्रचारिणी सभा, पृष्ठ संख्या- 42

'हिन्दी साहित्य में राम का स्वरूप'

अभिमन्यु सिंह

शोधच्छात्र, हिन्दी विभाग
रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर, म0प्र0

राम कौन थे? राम क्या थे? राम का स्वरूप क्या था? राम राजा थे या रंक थे? राम ईश्वर थे या साधारण मनुष्य थे? राम किस वंश के थे? वास्तव में राम नाम की सत्यता क्या है? क्या राम का नाम प्राचीन से वर्तमान तक जिन-जिन रूपों में आया है वह सत्य है? वाल्मीकी, तुलसीदास ने अपनी कथाओं में राम के जिस रूप की परिकल्पना करके जनमानस के पटल पर अंकित किया है वह किस सीमा तक खरा उतरता है शायद इस प्रश्न का उत्तर अभी पूर्णरूप से नहीं मिला है और निरन्तर खोज चल रही है फिर भी राम का नाम जनमानस में एक अद्भुत शक्ति का विस्तार करता है। राम के रूप की परिकल्पना जिस प्रकार से की गयी है वह अपने आप में अनुपम निधि के रूप में जनमानस के मध्य व्याप्त है। यदि राम के नाम की प्रतिष्ठा के सन्दर्भ में भक्ति काल के कवियों की चर्चा की जाय तो कवियों ने राम के स्वरूप की राम के सौन्दर्य की इतनी सुन्दर परिकल्पना की गयी कि इस सृष्टि में राम नाम की अमृत धारा बह चली और वह धारा वर्तमान परिवेश में एक अलग रूप में दिखाई पड़ रहा है।

वास्तव में यदि राम के नाम की किसी ने प्रतिष्ठा की है तो वह गोस्वामी तुलसीदास जी है जिनके नाम की भक्ति रस धारा आज भी प्रतिष्ठित एवं प्रवाहमान है। भक्ति-रस का पूर्ण परिपाक जैसा तुलसीदास जी में देखा जाता है वैसा अन्यत्र नहीं। भक्ति में प्रेम के अतिरिक्त आलंबन के महत्व और अपने दैन्य का अनुभव परम आवश्यक अंग है। तुलसीदास के हृदय में इन दोनों अनुभवों के ऐसे निर्मल शब्द-स्रोत निकले हैं, जिनमें अवगाहन करने से मन की मैल कटती है और अत्यंत पवित्र प्रफुल्लता आती है। गोस्वामी के भक्ति-क्षेत्र में शील, शक्ति और सौन्दर्य तीनों की प्रतिष्ठा होने के कारण मनुष्य की सम्पूर्ण भावात्मिकता प्रकृति का परिष्कार और प्रसार के लिए मैदान पड़ा हुआ है। प्राचीन भक्ति-मार्ग एक देशीय आधार पर स्थिति नहीं, यह एकांगदर्शी नहीं। यह हमारे हृदय को ऐसा नहीं करना चाहता कि हम केवल व्रत उपवास करने वालों और उपदेश करने वालों ही पर श्रद्धा रखें और जो लोग संसार के पदार्थो का उचित उपयोग करके अपनी विशाल भुजाओं से रणक्षेत्र में अत्याचारियों का दमन करते हैं या अपनी अंतर्दृष्टि की साधना और शारीरिक अध्यवसाय के बल से मनुष्य जाति के ज्ञान की वृद्धि करते हैं, उनके प्रति उदासीन रहें।

गोस्वामी जी की रामभक्ति वह दिव्य वृत्ति है जिससे जीवन में शक्ति सरसता, प्रफुल्लता, पवित्रता, सब कुछ प्राप्त हो सकती है। आलंबन की महत्त्व-भावना से प्रेरित दैन्य के अतिरिक्त भक्ति के और जितने अंग है-भक्ति के कारण अंतःकरण की जो और-और शुभ वृत्तियां प्राप्त होती हैं सबकी अभिव्यंजना गोस्वामी जी के ग्रन्थों के भीतर हम पा सकते हैं।[1]

हिन्दी गौरवग्रन्थ श्री रामचरित मानस के प्रबन्ध प्रणयन के आरम्भ में ही गोस्वामी तुलसीदास ने

'नानापुराणनिगमागमसमतं' यद् रामायणे निगदितं कहकर यह इंगित कर दिया कि उनकी रामकथा पर उल्लिखित उपजीव्य ग्रन्थों का तात्विक प्रभाव प्रमुख रूप से देखा जा सकता है। कोई भी श्रेष्ठ कवि अपने परम्परागत रिक्थ को स्वीकार करते हुए अपनी श्रेयस्कर मौलिकता से अपनी निर्मित को और अधिक समृद्धि तथा 'रमणीयता' प्रदान करता है। यूँ तो मर्यादा-पुरुषोत्तम श्रीराम का शिक्षाप्रद चरित्र ही ऐसा है कि विश्व के विपुल वाङ्मय में यत्किंचित् हेर-फेर के साथ उनकी पावन कथा को काव्य-निबद्ध किया गया है।[2]

निगुण धारा के अन्तर्गत यदि कबीरदास की बात की जाय तो कई बार कबीरदास के आलोचकों ने आश्चर्य प्रकट किया है कि उन्होंने निर्गुण राम की उपासना कैसे बताई। कबीरदास के राम पुराण प्रतिपादित अवतार नहीं थे। यह निश्चित है कि वे न तो दशरथ के घर उतरे थे और न लंका के राजा का नाश करने वाले हुए न तो देवकी की कोख से पैदा हुए थे और न यशोदा ने उन्हें गोद खेलाया, न तो वे ग्वालों के संग घूमा करते थे और न उन्होंने गोवर्धन पर्वत को धारण ही किया था, न तो उन्होंने वामन होकर बलि को छला था और न वेदोद्धार के लिए वराहरूप धारण करके धरती को अपने दांतों पर ही उठाया था न वे गंडक के शालिग्राम है, न वराह, मत्स्य कच्छप आदि वेषधारी विष्णु के अवतार, न तो वे नरनारायण के रूप में बदरिका आश्रम में ध्यान लगाने बैठे थे और न परशुराम होकर क्षत्रियों का ध्वंस करने गये थे और न तो उन्होंने द्वारिका में शरीर छोड़ा था और न वे जगन्नाथ धाम में बुद्ध रूप में अवतरित हुए। कबीरदास ने बहुत विचार करके कहा कि ये सब ऊपरी व्यवहार है। जो संसार में व्याप्त हो रहा है वह राम इनकी अपेक्षा कहीं अधिक अगम अपार है। उसको दूर खोजने की जरूरत नहीं, वह सारे शरीर में भरपूर हो रहा है, लोहू झूठ है, चाम झूठ है, सत्य है, वह राम जो इस सारे शरीर में रम रहा है।

वस्तुतः जब कबीरदास निर्गुण भगवान का स्मरण करते हैं तो उनका उद्देश्य यह होता है कि भगवान के गुणमय शरीर की जो कल्पना की गई है वह रूप उन्हें मान्य नहीं है। परन्तु 'निर्गुण' से वे केवल एक निषेधात्मक भाग ग्रहण करतें हो तो बात नहीं है। वस्तुः वे भगवान को सत्व, रज और तमोगुणों से अतीत मानते हैं और इसी गुणातीत रूप को निर्गुण शब्द से प्रकट करते हैं।[3]

सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला ने बंगला महाकाव्य 'कृतिवास' से राम की शक्तिपूजा' का कथा-बीज ग्रहण करते हुए निरन्तर संघर्षशील, विजिगीषु और प्रचण्ड पौरुष के धनी राम को मानवीय धरातल पर उतार जीवन की जटिलताओं से जिस प्रकार जूझते हुए दिखाया गया है, प्रकारान्तर से श्रीरामचन्द्र के प्रखर व्यक्तित्व में अपने जीवन के आत्मसंघर्ष को भी प्रतिबिम्बित कर दिया है। बहुत से आलोचक-व्याख्याकार निरालाकृत इस काव्य में आम आदमी के जीवन-संघर्ष के साथ भारतीय स्वातन्त्र्य-समर के उन महानायकों की संघर्ष गाथा की अनुगूँज भी सुन सकते हैं।[4]

श्री राम का नाम प्राचीन समय से लेकर वर्तमान समय तक साहित्य के विविध रूपों में प्रचलित है सन्तों और साहित्यकारों ने राम को परिस्थिति अनुरूप व्याख्यायित करने का प्रयास किया है। वास्तव में भले ही राम नाम के रूप में उसकी सत्यता की परख में कहीं न कहीं प्रश्न चिन्ह लगा है लेकिन राम के जिन-जिन रूपों की प्रतिष्ठा संत और साहित्यकारों ने की है वह रूप समाज में अमृत के समान प्रवाहमान है जो शक्ति, सम्पन्नता और संघर्ष के रूप में समाज में प्रतिष्ठित रहेगी।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. लेखक-आचार्य रामचन्द्र शुक्लपुस्तक-चिन्तामणि पृष्ठ संख्या-148
2. हिन्दुस्तानी त्रैमासिक, पृष्ठ संख्या-18
3. लेखक-आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदीपुस्तक-कबीर पृष्ठ संख्या-100, 101, 102
4. हिन्दुस्तानी त्रैमासिक, पृष्ठ संख्या-19

सकल कलात्मक दर्शन–प्रभु रामचंद्र

डॉ. अपर्णा अग्निहोत्री

विभाग प्रमुख

वसंतराव नाईक शासकीय कला व समाज विज्ञान संस्था, नागपूर

सभी ललित कलाओं का स्त्रोत देवी-देवताओं से माना जाता है। समस्त ललित कलाओं में संगीत का स्थान सर्वोपरि है।

ललित कलाएँ सच्चिदानंद स्वरूप ओम में निहीत होती है। ओम परमात्मा अर्थात् ब्रम्हा का स्वयंसिद्ध नाम है। भारतीय संस्कृति में प्राचीन काल से ही संगीत का विशेष महत्व रहा है। हम अलग अलग काल में सोचे तो सभी काल में शास्त्रीय संगीत का अस्तित्व दिखायी देता है।

हब जब 'रामायण' कालखंड पर सोचे तो उस कालीन पाठयक्रम मे वेदन तथा पट् वेदांगो का अन्तर्भाव था। इसके स्पष्ट प्रमाणा रामायण में प्राप्त होते है। संगीत के संदर्भ में मुनी वाल्मीकी द्वारा लवकुश को दी गई स्वर, पद, ताल, प्रमाण, मुर्च्छना आदि का शिक्षा के संदर्भ उल्लेख है। इससे हम यह जान सकते है की रामायण काल में संगीत शिक्षा का व्यवस्थित रूप था। जिसके अन्तर्गत संगीत के शास्त्र तथा क्रिया पक्ष दोनों ही समाविष्ट थे।

'रामायण' में एक वर्णन के अनुसार जब लक्ष्मणजी सुग्रीव के अंतःपुर में प्रवेश करते है, तो वहॉ वीणा वादन के साथ शुद्ध गायन सुनते है। रावण को भी संगीत शास्त्र का प्रकांड विद्वान बताया गया है। संगीत तथा वाद्य यंत्रो का उल्लेख मिलता है। भेरी, दुन्दुभी, मृदंग, घट, डिंडीम, आदंबर वीणा आदी वाद्यों का उल्लेख 'रामायण' में है। इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है की रामायण काल में संगीत कला प्रचार में थी।

वाल्मिकी महर्षि लिखते है की धनुष्य के तोडे जाने पर आकाश में देवताओं की दुन्दुभि बज उठी। अप्सराएँ गायन तथा नृत्य करने लगी। रंगबिरंगे फुलों की वर्षा होने लगी। सुंदरी और सखियाँ मंगलाचार के गीत गा रही थी। जब सीताजी ने रामचन्द्र जी के गलें में जयमाला पहनाई तो उस समय संगीत का आयोजन किया गया। सखियाँ मंगल गाने लगी और मंगलगान के साथ स्वयंवर संपन्न हुआ। तात्पर्य संगीत रामायण काल में था इसकी पुष्टी हमे मिलती है।

जब हम प्रभु रामचंद्र जी के बारे में सोचते है तो राम नाम में ही छंदात्मक लयबद्धता है। जो जाति, धर्म, सम्प्रदाय की सीमा से परे है।

समर्थ रामदास जिन्होंने खूद को प्रभु रामचंद्र जी का दास माना था वे लिखते है निर्गुण उपासना यह परब्रम्ह जैसे शाश्वत है। वे प्रभु रामचंद्रजी का वर्णन त्रिविध रूप में करते है।

1) श्रीरामचंद्र जी का आधिभौतिक रूप - श्रीराम एक आदर्श राजा थे। एकवाणी, एक वचनी तथा एक भार्या उन्हे 'मर्यादा पुरूषोत्तम' कहा है।

2) आधिदैविक रूप - श्रीरामचंद्र जी को विष्णू का सातवा अवतार, सच्चिदानंद स्वरूप जिसे हम ईश्वर कहते है।

3) आध्यात्मिक रूप - यह श्रीरामचंद्र जी का तिसरा रूप माना गया है। आत्माराम यह उसका स्वरूप है। हर शरीर में भगवंत का स्थान होता है।

जब हम यह बताते है की, संगीत का जन्म ब्रम्हाजी द्वारा हुआ है। उन्होंने सर्वप्रथम संगीत की शिक्षा शिव को दी, शिव ने सरस्वती को दी, सरस्वती द्वारा नारद को, नारद द्वारा गन्धर्व, किन्नर, अप्सराओं को और इनके द्वारा भरत को संगीत की शिक्षा प्राप्त हुई। इससे हम इस नतीजे पे आ सकते है की प्रभु रामचंद्र जी भी तो दैवत थे। संगीत देवी देवताओं द्वारा ही पृथ्वी पर आया है निश्चित रूप से तथ्यांश है।

प्राचीन संगीत तो सामगान है। सामवैदिक संगीत को मार्गी संगीत कहा जाता था। जिसका मुख्य उद्देश संगीत के माध्यम से ईश्वरोपासना और मोक्षप्राप्ति था। इस साम गान में वैदिक मंत्र गाये जाते है।

इस में कालांतर से बदलाव आता गया। सामगान में तीन स्वरों का प्रयोग होता था। कालांतर से सात स्वर बढ गये। जिससे हम अनुमान लगा सकते है की, संगीत का विस्तार कालखंडो से बढता ही गया। स्वर तो स्थिर रहे किन्तू पेश करने में बदलाव आया। कितना भी परिवर्तन क्यूं न हो किन्तू संगीता का उद्देश केवल परमानंद ही रहा है। संगीत को आध्यात्मिक आनंद का स्त्रोत माना है और प्रभु श्रीरामचंद्र को भी आध्यात्मिक रूप में माना गया है। इसी कारण जब श्रीराम इस शब्द के माध्यम से जब बंदिशों का गायन किया जाता है तो उन बंदिशों में और भी आध्यात्मिकता की गहराई महसूस होती है। आखरी ध्येय मोक्ष प्राप्ती का है।

संगीत से केवल आनंदानुभूति ही नही होती। ध्वनियाँ मानसिक स्थितियों की भी सूचक होती है। साथ ही ये हमारे मनोभावों को प्रभावित करती है। संगीत हमारी आत्मा में भक्तिमय अनुभूतियाँ भर देता है। आखिर भक्ति भी तो एक प्रकार का आवेग ही है, जो हमारी आत्मा को प्रभावित करता है।

संगीत में एक गति है और हमारी क्रियाएँ भी गत्यात्मक होती है। दोनों की सादृश्यता के कारण ध्वनिमय राग रागिनीयाँ हमारी आत्मा को प्रभावित कर देती है। राग और लय में प्रभावित करने की शक्ति उनकी नियमितता के कारण ही आती है, क्योंकी असंतुलन में संतुलन, अव्यवस्था में व्यवस्था और असामंजस्य में सामंजस्य लाने की अपेक्षा नियमितता या संयम से हम अधिक प्रभावित होते है। स्वर और लय के साथ आनेवाले शब्द का संयम और सामंजस्य ही हमे प्रभावित करता है। शब्द का संयम और सामंजस्य ही हमे प्रभावित करता है।

जब हक शास्त्रीय संगीत में बंदिशों पर सोचे तब ऐसे दिखता है भारतीय संगीत में राग जीवन्त रस काव्य है स्वर चित्र है बंदिशों के माध्यम से हम अमूर्त को मूर्त बनाना, निराकार को साकार में स्थापित करना, निर्गुण को सगुण में निरूपित करना यही तो राग संगीत कला है।

प्रभु रामचंद्र जी को त्याग का प्रतीक माना गया है। प्रभु रामचंद्र तो सभी के आराध्य दैवत है। शास्त्रीय संगीत, लोक संगीत, लोक गाथा, मुर्तिकला इ. में प्रभु रामचंद्र सर्जनाके आधार रहे है।

ऐसे ही उदाहरण हम शास्त्रीय संगीत के बंदिशों में दे सकते है-

1) भजल मना रैन दिन राम, यह बंदीश पं. रामाश्रय झा की अभिनय गितांजली भाग 1 में राग चंद्रकौंस पर आधारीत दी है।

2) सोचन काहे मनवा, हमरे राम रखवाले - यह बंदिश राग कौसी कानडा में रचि हुयी है। जिसमें प्रभु रामचंद्र जी पर विश्वास, निष्ठा वर्णित की है। अभिनव गितांजली, पं. रामाश्रय झा.

3) भज मन राम नाम सुख दायी रे- राग रचनांजली आश्विनी भिडे-देशपांडे- रामग मुलतानी।

तात्पर्य यही बताना चाहते है की, कला संस्कृति कालनमी होती है। बंदिशो में मानव कल्याण की कामना सम्मिलित है।

भारत की आत्मा को सांत्वना हमे संतों के साहित्य से ही मिली है। जिसने भारतीय परंपरा को नवजीवन दिया। भारतीय परंपरा समृद्ध सामाजिक एवम् आध्यात्मिक परिवर्तन से होकर गतिशील होती रही है।

इसी कारण संगीत कला सर्वश्रेष्ठ मानी गयी है। संगीत का सार्वभौम साम्राज्य जीवन के प्रत्येक अंग में तथा आयुष्य के प्रत्येक क्षण में प्रतिष्ठित

है। शोपेनहावर के अनुसार शिल्प कला, स्थापत्य कला एवम् चित्रकला से काव्यकला उच्च कला है। किसी वस्तू का मानसिक बोध कराने में अन्य कलाएँ एक एक क्षण को व्यक्त करती है। उसे संपूर्ण रूप से व्यक्त नही कर सकती। अन्य कलाओं की तरह संगीत मला मानसिक बोध कराने की अनुकृति नहीं करती बल्कि वह स्वयं की इच्छा की अनुकृति है और यह बोध कराने की क्रिया इसी की छाया है संगीत के सशक्त प्रभाव का यही कारण है वह स्वयं असली तत्व की अभिव्यक्ती करता है। संगीत कला किसी विशेष सीमित आनन्द, दुःख, पीडा, भय, शांती या प्रसन्नता को व्यक्त नही करती बल्कि वह इनके सामान्य और सार्वभौमिम स्वरूप की अभिव्यक्ति देती है। इन सभी बातों का अन्तर्भाव प्रभु रामचंद्र जी के जीवन में दिखायी देता है, उनके नाम के उच्चारण में मिलता है जिसकी हमे केवल अनुभूति लेना जरूरी है। क्योंकि सत्य, त्रेता, व्यापार तथा कलि ऐसे चारो युग के प्रभु रामचन्द्र अध्यात्मतत्वे है। यह निर्विवाद सत्य है।

संदर्भ -

1) संगीत विशारद - वसंत
2) संगीत मॅनुअल - मृत्युंजय शर्मा
3) प्रसाद - रामायण विशेषांक फेब्रु. 2016
4) संगीत संजीवनी - लावण्य कीर्तिसिंह
5) अष्टछाप संगीत - एक विशेषण - डॉ. नीव शर्मा

संस्कृत महाकाव्य रामायण में "संगीत" एवं सांगीतिक "अवनद्ध" वाद्य

अमित कुमार शुक्ल

शोध छात्र, वाद्य विभाग
संगीत एवं मंचकला संकाय
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

विश्व की सभी संस्कृति में संगीत का समावेश है, इसका विशेष कारण है, संगीत का विकास संस्कृति के साथ होना। भारतीय संगीत का उद्भव भी यहाँ की संस्कृति की देन है, ऐसा ग्रन्थों से प्रमाण मिलता है। भारतीय वैदिक संस्कृति की दृष्टि से रामायण एक महत्वपूर्ण अनुसंधानित ग्रन्थ है।

"प्राचीनामेषु दर्भेषु धर्मेणान्वेषते गतिम"[1]

इस श्लोक से ऐसा लगता है कि लेखक ने एक-एक विषय का मन्थनकर शब्दों में परिणत किया है।

महर्षि वाल्मीकि भगवान राम के समकालीन थे, उन्होंने श्रीराम के चारित्रिक जीवनशैली कैं अपने ग्रन्थ रामायण में उद्धृत किया है। 'रामायण' एक भक्तिमय काव्यगत रचना है भारतीय प्राचीन सांस्कृतिक परम्परा के परिज्ञान का महत्वपूर्ण श्रोत है । रामायण की उद्भावना आदिकवि महर्षि वाल्मीकि के द्वारा हुई"[2] इस ग्रन्थ से हमें त कालीन भारतीय संस्कृति में प्रचलित संगीत का पता चलता है। रामायण युगीन संगीत बहुत समृद्ध था। प्राचीनकाल के गीत, वाद्य और नृत्य धार्मिक प्रसंगों द्वारा विकसित हुए हैं।[3]

"रामायण के सात अध्याय हैं। जिन्हें कांड के नाम से जाना जाता है जिनके रचयिता तथा रचनाकाल के सम्बन्ध में मनीषियों में बहुल चर्चा पायी जाती है बालकाण्ड और उत्तरकाण्ड को छोड़कर अन्य सभी सर्गों की रचना एक ही रचयिता के द्वारा एक ही कालखण्ड में हुई, इसमें कोई संन्देहावकाश नहीं। शेष दो की रचना चाहे वाल्मीकि के किसी परम्परानुयायी अथवा अन्य किसी व्यक्ति के द्वारा हुई है। यह तथ्य विद्वज्जन मान्य है"[4] अब प्रश्न उठता है कि संगीत सम्बन्धी कौन से तथ्य इस ग्रन्थ में मिलते हैं? "रामायण का निर्माण गेयकाव्य के रूप में हुआ है। इसके अनुष्टुप छन्द की रचना संगीतमूलक होने के सम्बन्ध में उल्लेख प्रस्तुत महाकाव्य में पाये जाते हैं। शब्द-संगीत का आदिम रूप ही रामायण का अनुष्टुप छन्द है"[5]

"रामायण में एक वर्णन के अनुसार जब लक्ष्मण जी सुग्रीव के अन्तःपुर में प्रवेश करते हैं। तो वहाँ वीणा-वादन के साथ गायन सुनते हैं, रावण को भी संगीत-शास्त्र का प्रकाण्ड विद्वान बताया गया है।"[6] रामायण काल में संगीत अपनी पराकाष्ठा पर थी, कला पक्ष के साथ, संगीत के शास्त्र पक्ष को भी नकारा नहीं जा सकता था। रामायण में गान्धर्व के साथ ही अप्सराओं इत्यादि का स्पष्ट उल्लेख मिलता है।" गन्धर्वों का कार्य विशेषतः गान तथा वीणा-वादन था एवं अप्सराओं का कार्य नृत्य-प्रदर्शन करना था।"[7]

गन्धर्व तथा अप्सरा गणों का उल्लेख रामायण में दिव्य तथा अपौरूषेय कलाकारों के रूप में मिलता है। 'रामायण' में भेरी, दुन्दभि, मृदंग, घट, डिण्डिम, मड्डूक, आदंबर, वीणा आदि वाद्यों का उल्लेख है। जिससे स्पष्ट होता है कि तत्कालीन संस्कृति में संगीत जन-मानस का अभिन्न अंग थी।"[8]

'संगीत शास्त्र' को गान्धर्वम् कहा जाता था। "वाद्यों के लिए 'आतोद्य' तथा वादित्र की संज्ञा थी। वादित्रों के लिए 'तूर्य' शब्द का भी प्रयोग मिलता है। इसके अर्न्तगत शंख, दुंदुभि, सुघोषा, वेणु वाद्यों का अर्न्तभाव था।"[9]

'आतोद्य' शब्द सुन्दरकाण्ड में इस प्रकार है-

"आतोद्यानि विचित्राणि परिष्वज्य वरस्त्रियः।
निपीड्य च कुचैः सुप्ताः कामिन्थः कामुकानिव।।"[10]

अर्थात्-सुन्दर स्त्रियाँ तरह-तरह के आतोद्यों (वाद्यों) को चिपकाये हुए, अपने स्तनों से दबाकर इस प्रकार सो रही थीं जैसे कामिनियाँ, कामुकों को दबाकर सो जाती हैं।

इस प्रकार 'आतोद्य' से यह स्पष्ट है कि रामायण काल में तत्, अवनद्ध, सुषिर और घन सभी प्रकार के वाद्यों का प्रयोग होता था। आचार्य भरत मुनि ने अपने ग्रन्थ नाट्य शास्त्र के 28वें अध्याय में तत, सुषिर, अवनद्ध, घन-इन चार प्रकार के वाद्यों को आतोद्य कहा है।

"मैकडानल इत्यादि विद्वानों ने मुक्त कण्ठ से इस बात को स्वीकार किया है कि विश्वभर के साहित्य में कोई भी ऐसा साहित्य नहीं जिसने लोगों के जीवन और चिंतन को इतना प्रभावित किया हो जितना रामायण ने किया। जीवन के मुख्य आदर्श, भिन्न-भिन्न प्रकार की सभ्यता, आहार-विहार, यात्रा के साधन सामाजिक रीतियाँ, संग्राम कि विधियाँ, साधन और संगीत इन सबकी झाँकी हमको रामायण में मिलती है"।[11] प्रभु श्री रामचन्द्र जी संगीत के सूक्ष्म तत्वों के ज्ञाता थे। इस विषय पर अयोध्याकाण्ड में यह श्लोक आता है -

"गान्धर्वे च भुवि श्रेष्ठो बभूव भरताग्रजः।
कल्याणाभिजनः साधुरदीनात्मा महामतिः"।।[12]

अर्थात्-भरत के बड़े भाई राम समस्त संसार में गांधर्ववेद (संगीतशास्त्र) में सर्वश्रेष्ठ हैं, अतिशय कल्याण, विशिष्ट, सज्जन और महामती थे। अवनद्ध वाद्यों के कई प्रकार रामायण में दिखाई पड़ते हैं। जिनमें-भेरी, मृदंग, पणव, दुन्दुभी, डिण्डिम, आडम्बर, म॥क,मुरज,चेलिका,पटह आते हैं।

दुन्दुभि -ग्रन्थों के अध्ययन से पता चलता है कि दुन्दुभि बहुत प्राचीन वाद्य है। संगीत वेत्ताओं के अनुसार 'दुन्दुभि' वाद्य अवनद्ध वाद्यों में अग्रज है। यह संग्राम के समय उत्तेजना के लिए, जयघोष के लिए मंगल वाद्यों के रूप में प्रयोग किया जाता था। इसी को आजकल नक्कारा या नगाड़ा कहते हैं। इसके दो प्रकार प्रचलित हैं पहले में दो नग एक बड़ा और एक छोटा होता है एवं इसके दूसरे प्रकार में एक नग (संख्या) होता है,परन्तु इसका आकार वृहद् होता है।

इन दोनों प्रकारों में चमड़ा मढ़ा होता है जो चमड़े की डोरियों से कसा होता है संगीत रत्नाकर के अनुसार इसे आम की लकड़ी से अथवा चर्म के डंडे से बजाना चाहिए। रामायण के युद्ध काण्ड के 42वें सर्ग के 39वें श्लोक में दुन्दुभि का उल्लेख है।

भेरी- इसका उल्लेख रामायण के युद्धकाण्ड के 44वें सर्ग के 12वें श्लोक में हुआ है। संगीतरत्नाकर के अनुसार यह धातु का बना हुआ दो मुखों वाला, दोनों चमड़े से मढ़ा हुआ, एक ओर हाँथ तथा दूसरी श्रओर डंडे से बजाने वाला होता है। यहाँ भेरी वाद्य को कवि ने अवधी भाषा में कुछ इस तरह उल्लेख किया है।

"भूप बलभद्र सिंह के समान गाज हों,
भेरी वाजने समूह भाँति-भाँति बाजहीं।
पंचकोश के प्रमान मद्धि सेन सोहहीं,
सेन विकराल से मुषै न जात है कही"।।[14]

प्रस्तुत पद से स्पष्ट होता है कि पाँच कोश में फैली विशाल सेना जिसका वर्णन करना असंम्भव है, ऐसे में 'भेरी वाद्य' समूह में विभिन्न प्रकार से गुंजायमान हो रहे हैं, अतः भेरी वाद्य युद्ध में प्रयुक्त होने वाला वाद्य था। 'डॉ. जयरामन' ने भेरी वाद्य को 'भक्ति' वाद्य के रूप में स्वीकार किया है।

"जनसमाज में इस वाद्य का उत्सवादि विभिन्न प्रसंगों में प्रयोगहोता था, हर्सोल्लास की अभिव्यक्ति की सूचना के रूप में जन-समाज द्वारा नानाविध वाद्यों के बजाए जाने का उल्लेख पेरियालवार ने कृष्ण जन्मोत्सव प्रसंग में किया है''।[15]

मृदंग- यह सुन्दरकाण्ड के दसवें सर्ग के 42वें श्लोक मेंऔर 11वें सर्ग के 6वें श्लोक, युद्धकाण्ड के 44वें सर्ग के 12वें श्लोक में प्रयुक्त हुआ है आजकल भी मृदंग प्रसिद्ध अवनद्ध वाद्य है। जिसके स्वरूप से प्रायः सभी परिचित हैं।

"वाल्मीकि रामायण में 'मुरजेषु मृदंगेषु[16] का एक साथ प्रयोग एक ही स्थान पर हुआ अन्य थानों पर केवल मृदंग शब्द ही व्यहृत हुआ है। अतएव यहाँ पर यदि मुरज शब्द को मृदंग का विशेषण मान लिया जाय तो ठीक होगा, अभिनव गुप्ताचार्य ने भी मुरज को मृदंग का पर्याय बताया है। महर्षि भरत ने चौतीसवें अध्याय में एक स्थान पर कहा है कि सुख प्रदान करने वाली, मांगलिक होने के कारण इसे 'मृदंग' कहते हैं।"[17]

पणव- इसका उल्लेख वाल्मीकि जी ने सुन्दरकाण्ड के दसवें सर्ग के 43वें श्लोक में किया है पणव शब्द युद्धकाण्ड के 44वें सर्ग के 12वें श्लोक में भी आया है। जिसका कार्य युद्ध में योद्धाओं को अपनी ध्वनि से प्रेरित करना है। देव पूजा में भी पणव का प्रयोग अपेक्षित था।

गीता में प्रथम अध्याय के 13वें श्लोक में दिया है।

''ततः शङ्खाश्च भेर्यश्च पणवानक गोमुखाः।
सहसेवाभ्यहन्यन्त सशब्दस्तुमुलोऽभवत्''।।[18]

अर्थात-तत्पश्चातृ शंख, नगाड़े, (बड़े ढ़ोल) पणव आनक औार शृंग इत्यादि अचानक बज उठे, जो अत्यन्त कोलाहल पूर्ण था। यह स्वर धृतराष्ट्र के पुत्रों के हृदय को विदीर्ण कर देने वाला था।

अतः इससे स्पष्ट होता है कि यह वाद्य भी युद्ध तथा मांगलिक कार्यों में प्रयुक्त होता था।

पटह-यह भी प्राचीन वाद्य है इसका भी उल्लेख सुन्दरकाण्ड के 10वें सर्ग के 39वें श्लोक में इस प्रकार हुआ है।

पटहं चारूसर्वाङ्गी न्यस्य शेते शुभस्तनी। [19]

अर्थात्- सर्वांग सुन्दरी, शुभस्तनी एक स्त्री 'पटह' को लेकर सोई हुई है।

यह ढ़ोल से मिलता-जुलता वाद्य है 'एस.पी. परमहंस' ने महाभारत शब्दकोश में पहट को नागाड़ा कहा है जो युद्ध में बजता है।[20] सम्भवतः यह वाद्य नगाड़ा हो सकता है परन्तु 'नगाड़ा वाद्य' संख्या में दो होते हैं जबकि पटह एक होता है। दूसरी यह बात है कि उपरोक्त श्लोक में महिला पटह से लिपटकर सो रही है परन्तु नगाड़ा पर यह सम्भव नहीं है हिन्दी शब्द सागर में पटह का अर्थ नगाड़ा दिया है, पर पटह न तो नगाड़ा है न ही दुन्दुभि। '' 'संगीत पारिजात' के मतानुसार पटह का अर्थ ढ़ोलक है। उसमें स्पष्ट लिखा है," ''पटह ढ़ोलक इति भाषायाम्'', 'संगीतसार' के अनुसार भी मध्यकालीन ढ़ोलक को ही प्राचीन युग में पटह कहा जाता था।" [21]

डिण्डिम, आडम्बर, मड्डूक, चेलिका

डिण्डिम वाद्य सुन्दरकाण्ड के 10वें सर्ग 44वें श्लोक, आडम्बर सुन्दरकाण्ड के 10वें सर्ग के 45वें श्लोक, 'मड्डूक' सुन्दरकाण्ड के 10वें सर्ग में ही 38वें श्लोक में उल्लेख हुआ है 'चेलिका' वाद्य सुन्दरकाण्ड में 11वें सर्ग के 6वें श्लोक में आया है जिसमें मुरज, मृदंग, चेलिका तीन अवनद्ध वाद्यों की चर्चा की गई है ये सभी मृदंग श्रेणी के अवनद्ध वाद्य है। जिनका प्रयोग मांगलिक कार्यों, क्रीड़ा तथा युद्ध आदि में होता था।

सन्दर्द्ध ग्रन्थ सूचीः-

1. वाल्मीकि बालकाण्ड, तृतीय सर्ग, श्लोक संख्या-2 गीताप्रेस,गोरखपुर संस्करण
2. परांजपे, डा0 शरच्चन्द्र श्रीधर, भारतीय संगीत का इतिहास, चौखम्भा विद्याभवन, वाराणसी, संस्करण -2010, पृष्ठ 135
   -वाल्मीकि रामायण, बालकाण्ड, तृतीय सर्ग, श्लोक संख्या-1-2, गीताप्रेस,गोरखपुर संस्करण

3. यमन, अशोक कुमार, संगीत रत्नावली, अभिषेक पब्लिकेशन, चण्डीगढ़,नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2015, पृष्ठ संख्या-664
4. परांजपे, डा0 शरच्चन्द्र श्रीधर, भारतीय संगीत का इतिहास, चौखम्भा विद्याभवन, वाराणसी, संस्करण -2010, पृष्ठ 135
5. परांजपे, डा0 शरच्चन्द्र श्रीधर, भारतीय संगीत का इतिहास, चौखम्भा विद्याभवन, वाराणसी,2010, पृष्ठ 136
6. गर्ग, डॉ0 लक्ष्मीनारायण, संगीत निबन्ध सागर, संगीत कार्यालय, हाथरस, प्रथम संस्करण-2012, पृष्ठ 132
7. परांजपे, डा0 शरच्चन्द्र श्रीधर, भारतीय संगीत का इतिहास, चौखम्भा विद्याभवन, वाराणसी, संस्करण -2010, पृष्ठ 136
8. भार्गव, डॉ0 अन्जना, भारतीय संगीत शास्त्रों में वाद्यों का चिन्तन,कनिष्क पब्लिकेशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2002,पृष्ठ-20
9. वही
10. सुन्दरकाण्ड-सर्ग-10, श्लोक संख्या-49 गीताप्रेस, गोरखपुर संस्करण
11. सिंह, डा0 जयदेव, भारतीय संगीत का इतिहास, प्रेमलता शर्मा, संगीत रिसर्च एकेडमी,कलकत्ता, प्रथम संस्करण-1994ई0, पृष्ठ-155
12. रामायण, अयोध्याकाण्ड, सर्ग-2 श्लोक संख्या-35 गीताप्रेस,गोरखपुर संस्करण
13. रामायण, किष्किन्धाकाण्ड, सर्ग-28, श्लोक संख्या-36.37, गीताप्रेस,गोरखपुर संस्करण
14. जंगनामा, डां0विद्या बिन्दु सिंह, प्रभात प्रकाशन, नईदिल्ली, प्रथम संस्करण 2003 पृष्ठ-143
15. भक्ति के आयाम, डॉ0पी.जयरामन, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2003 पृष्ठ 578
16. रामायण-सुन्दरकाण्ड, सर्ग-11, श्लोक संख्या 5-6
17. भारतीय संगीत वाद्य, पृष्ठ-189
18. श्रीमद्भगवत गीता, श्रीमद् ए.सी. भक्ति वेदान्त, भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट, पृष्ठ-35
19. सिंह, डा0 जयदेव, भारतीय संगीत का इतिहास, प्रेमलता शर्मा, संगीत रिसर्च एकेडमी, कलकत्ता, प्रथम संस्करण-1994ई0, पृष्ठ-173
20. महाभारत शब्दकोश, एस.पी.परमहंस, दिल्ली पुस्तकसदन, दिल्ली, पृष्ठ संख्या 127
21. भारतीय संगीत वाद्य, डा0 लालमणि मिश्र , भारतीय ज्ञानपीठ-2002, पृष्ठ संख्या 173

भारतीय संगीत तथा लोक नाट्य में राम का स्थान

श्री अनुभव पाण्डेय

शोध छात्र, गायन विभाग
संगीत एवं मंच कला संकाय
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

भारत में देवी देवताओं से ले कर साधारण मानव तक हर किसी के जीवन में संगीत किसी ना किसी रूप में जुडा हुआ है। संगीत-रहित जीवन की कल्पना केवल नारकीय जीवन के साथ ही की जा सकती है। गायन, वादन तथा नृत्य तीनों कलाओं को संगीत की परिभाषा के अन्तर्गत ही माना गया है।

कला और विज्ञान के क्षेत्र में हिन्दुस्तानी संगीत का स्थान विश्व में प्राचीनतम है। संगीत को विज्ञान तथा कला, दोनो के क्षेत्र में समान महत्व मिला है। जैसे दैविक शक्तियों को शास्त्रों के साथ जोडा गया है उसी प्रकार संगीत के वाद्य यंत्रो और नृत्यों को भी देवी देवताओं के साथ जोडा गया है। भगवान शिव डमरू की ताल के साथ ताँडव नृत्य करते हैं, तो देवी सरस्वती वीणा वादिनी हैं। भगवान विष्णु के प्रतीक ष्ण वँशी की तान सुनाते हैं और रास नृत्य भी करते थे। देवऋषि नारद तथा राक्षसाधिपति रावण वीणा वादन में पारंगत हैं। गाँडीवधारी अर्जुन सर्वश्रेष्ठ धनुर्धर होने के साथ साथ नृत्य शिक्षक भी हैं। अप्सराओं तथा गाँधर्वों का तो संगीत कला के क्षेत्र में विशिष्ठ स्थान हैं। भारत में देवी देवताओं से ले कर जन साधारण तक सभी का जीवन संगीत मय है। हर कोई संगीत को जीवन का मुख्य अंग मानता है।

हमारी भारतीय परंपराओं में बाल्यकाल से ही हम सभी के तन-मन में राम नाम विराजमान होता है। रोज की दैनिक क्रियाओं तथा संस्कारों में भी राम नाम के दर्शन सहज ही होते रहते हैं। चाहे वह अभिवादन की 'राम-राम' हो या उल्लास की 'जय श्री राम' चाहे पीड़ा की 'हाय राम' हो या हमारे अंतिम संस्कार का प्रतीक जिसमें अंततः बताया जाता है जाता है कि राम नाम ही अंतिम सत्य है।'' 'नारायण' चार अक्षरों से सुसज्जित नाम है।'ना' अर्थात दुर्जनों का नाश करने वाले।'रा' अपना प्रण रखने वाले। 'य' अर्थात यत्र-तत्र सर्वत्र 'ण' अर्थात प्रणव के मध्य विराजमान विष्णु नारायण जिनके गुण रत्नों से संपन्न हैं। रामायण, पुराणों ने हरि के प्राकट्य के कई हेतु बताए हैं। कल्प-कल्प में जब जब रावण के विकल्प आए हैं और उनके अत्याचारों से धरती, धर्म, सुर, नर, मुनि अकुलाये हैं। तब तब संभवामि युगे युगे का वचन निभाने श्री हरी ने विविध रूप बनाए हैं कुछ भी रहे हो उन रावणों और रामों के नाम परिभाषा इतनी सी है जो दुष्ट वह रावण, जो भद्र वह राम ''।[1]

हम सभी के जीवन में राम नाम का एक विशेष स्थान बाल्यकाल से ही होता है। गीत, भजन, रामलीला, चित्रपट, टेलीविजन धारावाहिक इत्यादि ने राम केअनेक स्वरूपों की सुंदर झांकी हम सभी के समक्ष प्रस्तुत कर राम नाम के प्रति एक विशेष

अनुराग हम सबके मन में स्थापित करने में विशेष योगदान दिया है।

'रामलीला' एक ऐसा लोकमाध्यम रहा जिसके द्वारा प्रत्येक व्यक्ति राम की सारी लीलाओं से सहज ही जुड़ा हुआ प्रतीत करता रहा अगरपुरानेदिनों को याद किया जाए तो याद आता है कि लोग रात रात भर जागकर रामलीला का आनंद लेते थे। हर साल मंचन की जानेवाली लीलाएं पुनः पुनः लोगों के मानस पटल पर अंकित होती जाती थी। कभी भी ऐसा नहीं होता था कि एक ही लीला हर बार क्यों देखें। गोस्वामी तुलसीदास त श्रीरामचरितमानस रामलीला का मूल आधार है। श्री राधेश्याम कथावाचक रचित रामायण को भी कहीं-कहीं यह गौरव प्राप्त है। रामलीला आयोजित करने के लिए वर्ष भर दो माह ही अधिक उपयुक्त माने गए हैं- अश्विन और कार्तिक, ऐसे तो इसका प्रदर्शन कभी भी और कहीं भी किया जा सकता है। काशी के रामनगर की लीला भाद्रपद शुक्ला चौदह को प्रारंभ होकर शरद पूर्णिमा को पूर्णता प्राप्त करती है और नक्खीघाट की शिवरात्रि से चौथ अमावस्या अर्थात तैतिस दिनों तक चलती है। गोस्वामी तुलसीदास अयोध्या में प्रतिवर्ष रामनवमी के उपलक्ष्य में इसका आयोजन कराते थे। रंगमंचीय ष्टि से रामलीला तीन प्रकार की है- सचल लीला, अचल लीला तथा स्टेज लीला। काशी नगरी के चार स्थानों में अचल लीलायें होती हैं। गोस्वामी तुलसीदास द्वारा स्थापित रंगमंच की कई विशेषताओं में से एक यह भी है कि स्वाभाविकता, प्रभावोत्पादकता और मनोहरता की सृष्टि के लिए अयोध्या, जनकपुर, चित्रकूट, लंका आदि अलग-अलग स्थान बना दिया गए थे और एक स्थान पर उसी से संबंधित सब लीलाएं दिखाई जाती थी। यह ज्ञातव्य है कि रंग शाला खुली होती थी और पात्रों को संवाद जोड़ने-घटाने में स्वतंत्रता थी। इस तरह हिंदी रंगमंच की प्रतिष्ठा का श्रेय गोस्वामी तुलसीदास को और इनके कार्य क्षेत्र काशी को प्राप्त है।[2]

पद्मश्री स्वगह्य रवींद्र जैन जी अपनी पुस्तक रवींद्र रामायण में कहते हैं श्रद्धेय श्री रामानंद सागर जी द्वारा निर्मित दूरदर्शन पर प्रसारित होने वाले धारावाहिक रामायण ने मुझे इतना ऊंचा पहुंचा दिया कि आकाश से नीचे होने का भ्रम होने लगा तब अनायास गोस्वामी जी की यह पंक्तियां स्मरण हो आईं।

जा पर पा राम की होई।
ता पर पा करे सब कोई।।
सोई जानई जेहि देहु जनाई।
जानत तुम्हहिं तुम्हहिं होइ जाई।।

कहने का तात्पर्य यह है कि राम नाम पर आस्था इतनी है कि उनसे जुड़ा कोई भी कार्य करने के पश्चात प्राप्त फल को वह राम की ही देन मानते हैं इसी अनुभव कोरवींद्र जैन कुछ इस प्रकार संस्मरण के रूप में बता रहे हैं। यहां यह बताना आवश्यक है कि रवीद्र जैन ने रामायण धारावाहिक के संगीत के द्वारा राम कथा को घर घर में प्रसारित किया था आगे वह कहते हैं ''रामायण का एक सुखद अनुभव आपके साथ बांटना चाहता हूं कि गाने की वस्तुस्थिति यह थी कि माता जानकी अशोक वाटिका में शोकाकुल बैठी हैं। श्री हनुमान जी को राम जी की दी हुई मुद्रिका उन तक पहुंचानी है उन्हें धैर्य बनाना है, साथ ही है विश्वास भी दिलाना है कि वह रामदूत हैं। कथानक ध्यान में रखकर मैं विश्राम के लिए लेटा ही था कि शरीर में ऐसा कंपन हुआ मानो भूचाल आ गया हो शरीर पसीना पसीना हो गया यह था 'शक्तिपात'। शक्तिपात से उभरने पर हाथ लगा एक ऐसा नगीना जो मेरे अनमोल गीतों में से एक है।[3]

राम कहानी सुनो रे राम कहानीकहत सुनत आवे अंखियों मे पानी राम कहानी सुनो रे राम कहानी एक रचनाकार कि यह विशेषता होती है कि वह स्वयं के कार्य का श्रेय स्वयं को नहीं देता रवींद्र जैन भी इसमें स्वयं की बड़ाई नहीं मानते वह तो यह मान के चलते हैं कि श्री हनुमान जी ने अपना गीत स्वयं आकर लिखा। यही नहीं रामायण के समस्त गीत, चौपाईयां, छंद, सवाई, और दोहे पात्रों तथा स्थितियों की देन हैं। संपूर्ण तथ्यों का सार यह है

श्री राम जी बिना याचना अधिक प्रदान करने वाले एवं अकारण पालू हैं।

जब जीवन के हर पक्ष में राम नाम विद्यमान है तो भला संगीत ही क्यों इससे अछूता रहता। संगीत में भी राम नाम का उतना ही प्रभाव है जितना कि अन्य किसी कला में आज अगर देखा जाए तो हजारों रामभजन नित्य ही गाये और बजाए तथा रचे जाते हैं तथा हर रचना में राम का गरिमामय प्रभावशाली गंभीर चरित्र का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। राम एक आदर्श चरित्र है जो गुणों से भरापूरा संपूर्ण है। राम के चरित्र को किसी भी कसौटी पर कैसा जाए तो वह खरा ही निकलेगा ऐसी आस्था जन-जन के मानस पटल पर ढ़ता से विद्यमान है। श्री गोस्वामी तुलसीदास त इस प्रसिद्ध रचना में राम के गुणों का वर्णन किया गया है।

श्री रामचंद्र पालु भजमन हरण भवभय दारुणम्।।
नवकंज लोचन कंज मुख कर कंज पद कंजारुणम्।।

इस रचना को बहुत से संगीतकारों तथा गायक-गायिकाओं ने तरह-तरह से भिन्न भिन्न रागों यमन, श्यामकल्याण, भैरवी आदि में प्रस्तुत किया है तथा हर बार अलग-अलग तरह से राम के गुणों को प्रभावशाली ढंग से रखने का प्रयास किया गया है। इसके अतिरिक्त शास्त्रीय संगीत की अनेक बंदिशों में राम नाम का स्थान प्टिगोचर होता है। जैसे राग कालिंगड़ा मे राम नाम भजन करो भव जलधि तुरत तरो, राग दरबारी में राम के दरबार, तथा राग रामकली का ध्रुपद 'राम नाम सुमिरन कर, जासो दुख होत दूर'[4] आदि। ऐसे अनेक उदाहरण प्राप्त होते हैं जिनसे यह स्पष्ट है की रंगमंच तथा संगीत मे राम का अति महत्वपूर्ण स्थान है।

संगीत है शक्ति ईश्वर की, हर स्वर में बसे हैं राम।
रागी जो सुनाये रागिनी, रोगी को मिले आराम।।

सन्दर्द्ध सूची

1. रवींद्र रामायण, लेखक रवींद्र जैन, प्रभात प्रकाशन,
2. भारतीय रंग मंच की परंपरा, लेखक मनोज पाटिल, रोहित प्रकाशन नयी दिल्ली, पृष्ठ96-97
3. रवींद्र रामायण, लेखक रवींद्र जैन, प्रभात प्रकाशन,
4. संगीत प्रभाकर दर्शिका, लेखक पंडित नारायण लक्ष्मण गुणे, पाठक पब्लिकेशन इलाहबाद, पृष्ठ ५७

साहित्य और संगीत में राम

श्री आशीष कुमार मिश्रा

संगीत एवं मंच कला संकाय
वाद्य विभाग, का0हि0वि0वि0

विश्व के सबसे पुरानी संस्कृति सनातन संस्कृति है। जब हम भारतीय सभ्यता की बात करते है तो हमारी पहचान, हमारी संस्कृति, हमारे साहित्य, काव्य और आध्यात्म से होती है। सनातन धर्म के आदर्श और मर्यादा के पूरक मर्यादा पुरूषोत्तम श्रीराम हमारे प्रेरणा के स्रोत और मार्गदर्शक रहे हैं। राम (रामचन्द्र) प्राचीन भारत में अवतरित भगवान है। हिन्दू धर्म में राम विष्णु के दसवें अवतारों में सातवें है। खासतौर पर उत्तर भारत में राम बहुत अधिक पूजनीय है। रामचन्द्र हिन्दुओं के आदर्श पुरूष है। सगुण उपासको ने श्रीराम की भक्तिकर मोक्ष को प्राप्त किया और समाज को भी मोक्ष प्राप्ति का मार्ग बताया। भक्तिमार्ग मोक्षप्राप्ति का सरलतम एवं सुगम मार्ग माना गया है। भक्ति को व्यक्त करने के लिए मनुष्य ने विभिन्न साधनों और मार्गो के द्वारा भक्ति को व्यक्त किया है जैसे कविता, भजन, साहित्य, संगीत, पद्य आदि।

साहित्य एवं काव्यात्मकता तभी होती है, जब मनुष्य सही अर्थो में परम सत्ता (श्रीराम) की भक्ति में संलग्न रहता है तब वह जो भी कहता है, वह महाकाव्य और जो करता है वह मर्यादित होता है। तभी तो साहित्यकार और कला रसिक श्रीराम के जीवन और आचरण से प्रभावित रहे हैं।

रामचरित मानस की कुछ चौपाईया जिसमें कवियों ने राम नाम की महिमा का वर्णन किया है और अपनी रचनाओं को उनकी भक्ति का प्रसाद माना हैं।

भनिति विचित्र सुकबि कृत जोऊ।
राम राम बिनु सोह न सोउ।।

भावार्थ - किसी भी महान कवि के द्वारा रची हुई अति विलक्षण रचना भी राम नाम के बिना शोभा नहीं पाती है जिस प्रकार चन्द्रमा के समान मुख वाले सभी प्रकार से सुसज्जित सुन्दर स्त्री बिना वस्त्र के शोभा नहीं पाती है।

सब गुन रहित कुकवि कृत वाणी।
राम नाम जस अंकित जानी।।
सादर कहहिं सुनहिं बुध ताही।
मधुकर सरिस सन्त गुन ग्राही।।

भावार्थ :- जो कवि नहीं है, उसके द्वारा सभी गुणों से रहित लिखि हुई कविता में यदि राम नाम लिखा होता है तो उसे बुद्धिमान लोग आदर सहित कहते है और सुनते है क्योंकि संत लोग भंवरे की तरह होते हैं। जो केवल सार को ही ग्रहण करते है।

जदपि कबित रस एकौ नाहि।
राम प्रताप प्रगट एहि माही।।
सोइ बरोस मोरें मन आवा ।
केहिं न सुसंग बढ़प्पनु पावा।।

भावार्थ : जबकि मेरे द्वारा लिखी इस कविता में एक भी रस नहीं है, इसमें श्रीराम जी की आभा प्रगट है। मेरे मन में यही एक भरोसा है कि अच्छी संगति से हर कोई को प्रतिष्ठा प्राप्त होती है।

काल कोई भी हो राम की भक्ति से कवि, संगीतकार, वाद्यकार और शास्त्रकार अछूते नहीं

रहे। भारतीय संगीत प्राचीनकाल से भारत में सुना और विकसित होता आ रहा है। इस संगीत का प्रारम्भ वैदिककाल से भी पूर्व का है। इस संगीत का मूल स्त्रोत वेदों को माना जाता है। भारतवर्ष की सारी सभ्यताओं में संगीत का बड़ा महत्व रहा है। धार्मिक एवं सामाजिक परम्पराओं में संगीत का प्रचलन प्राचीन काल से रहा है। इस रूप में, संगीत भारतीय संस्कृति की आत्मा मानी जाती है। वैदिक काल में आध्यात्मिक संगीत को मार्गीय तथा लोकसंगीत को देशी कहा जाता था। कालान्त में यही शास्त्रीय और लोकसंगीत के रूप में दिखता है। हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत में कई ऐसे रचनाकार हुए है, जिन्होंने राम को इष्ट मानकर और उनका ध्यान कर ऐसी अद्‌भुत रचनायें की है, जिसका कोई मेल नहीं है ऐसे ही श्रेष्ठ रचनाकार हैं, पं0 रामाश्रय झा जिनको 'राम रंग' के उपनाम से भी जानते है। उन्होंने अपनी सारी रचनायें अपने इष्ट श्रीराम जी को समर्पित की है। जिसमें उन्होंने मानस की चौपाईयों और उनके भावार्थो को लेकर बन्दिशे बनाई है, जिससे उनकी रामजी में भक्ति स्पष्ट दिखायी पडती हैं। ऐसा लगता है मानो श्रीराम खुद उनके अन्दर विराजमान होकर रचनाये कर रहे है। उनकी कुछ बन्दिशे संगीत रामायण से निम्न है।

राग-बरवा-एकताल (मध्यलय)

स्थाई : राम लखन बिन भवन देखि दस सीस, आय मांग्यो मुनि मेष, मन महं चरण वन्दि।

अन्तरा : रेखा लांघि सिय, देन लगी फल मूल, रूप दिखायो तब, जनक नन्दि।।

राग-मुल्तानी-एकताल (मध्यलय)

स्थाई : रघुबीर बाण ते, मुक्त भयो भव बन्धन, लखन नाम लियो पुकारि, मन सुमिर रघुनन्दन।

अन्तरा : लखन जाहु संकट महं, सुमिरे भाई, कही राम प्रभुता सीय ना समझ आई, सिरनाथ गये बेगि सुमित्र नन्दन।।

ऐसा माना जाता है कि अवनद्य वाद्य के जो वर्ण है वह शिवजी के डमरू से अर्विभूत है। ताल की निर्मिति भी शिव से हुई है। शिवजी की नटराज प्रतिमा तो सर्वविदित है। शिवजी को एक सम्पूर्ण संगीतज्ञ कहा जाता है। ऐसा शास्त्रों में कहा गया है कि शिव जी भी भगवान श्रीराम के ध्यान में मग्न रहते है और उनकी भक्ति करे है। ऐसे भगवान श्रीराम को कोटिश प्रणाम है। जो शिव जी के अन्दर विराजमान होकर उनको प्रेरणा प्रदान करते है। जिनके स्मरण मात्र से ऐसे काव्य, साहित्य और संगीत के दर्शन भक्तों ने किये है और सारे जगत को कराये है। यही श्रीराम परम ब्रह्म रूप में आहत अनहत दोनो नाद के रूप में पूरे जगत में विद्यमान है। चाहे वह साहित्य हो, कला हो या संगीत कोई भी विद्या हो सबके प्रेरणास्रोत श्रीराम ही रहे है।

संदर्भ सूची :-

1. श्रीराम चरित्र मानस, टीकाकरण, हनुमान प्रसाद पोद्‌दार।
2. 'राम रंग', संगीत रामायण, लेखक पं0 रामाश्रय झा, लुमिनस बुक
3. संस्कृति साहित्य की रूपरेखा, लेखक पं0 चन्द्रशेखर पाण्डेय तथा शान्तिकुमार नानूराम व्यास, साहित्य निकेतन।
4. सौन्दर्य रस और संगीत, प्रो0 स्वतंत्र शर्मा, प्रतिभा प्रकाशन, नई दिल्ली।

भारतीय संगीत में राम

श्री आशुतोष बाजपेयी

यू0जी0सी0/नेट

"संगीत है शक्ति ईश्वर की हर सुर में बसे हैं राम
रागी जो सुनाये रागीनि, रोगी को मिले आराम"

भारत धार्मिक परम्पराओं का देश है और समस्त कलाओं का श्रोत भी देवी देवताओं से मानता है। भारत में देवी देवताओं से लेकर साधारण मानव तक हर किसी के जीवन में संगीत किसी न किसी रूप में जुड़ा हुआ है। संगीत रहित जीवन की कल्पना केवल नारकीय जीवन के साथ की जा सकती है।

लिखित कला और विज्ञान के क्षेत्र में भारतीय संगीत का स्थान विश्व में प्राचीनतम है। जिस प्रकार दैवी शक्तियों को शास्त्रों के साथ जोड़ा गया है। उसी प्रकार संगीत एवं नृत्य आदि कलाओं का संबंध भी अलग - अलग देवी देवताओं के साथ बताया गया है। भगवान विष्णु के सातवें अवतार भगवान राम भारतीय कला, साहित्य और संस्कृति के आधार एवं आदर्श है। भक्ति काल के राम भक्त कवियों ने अपनी रचनाओं को संगीत में पिरोकर राम की स्तुति के लिए भक्ति गीतों पर बल दिया और भजन कीर्तन द्वारा राम का गुणगान किया। तुलसीदास केशवदास, अग्रदास, रामदास आदि कवियों ने राम का लोकनायक के रूप में चित्रण किया और लोक संगीत में राम का भजन किया। यह लोक संगीत शास्त्रीय संगीत की ही एक धारा है। भक्ति गीतों द्वारा राम की स्तुती ने भरतीय संगीत को लोकजनमानस के बीच प्रतिष्ठित किया। महर्षि वाल्मीकि एवं तुलसीदास द्वारा रचित महाग्रन्थ "रामचरितमानस" जिसके पद पूर्ण रूप से संगीतमय है, ने संगीत को अध्यात्मिक ऊँचाइयों तक पहुँचाया। कर्नाटक संगीत के महान संगीतज्ञ त्यागराज ने राम भक्ति के लगभग 800 पदों की रचना की। इनमें अधिकांश पद तेलगु भाषा में थे तो कुछ संस्कृत में थे। ये पद तमिल भाषा क्षेत्र में भी काफी प्रसीद्ध थे। त्यागराज की मान्यता थी की यदि भक्ति के पदों को सम्पूर्ण निष्ठा, आस्था, शुद्धता और समर्पण भव से गाया जाए तो मनुष्य अध्यात्मिक ऊँचाई को सहजता से प्राप्त कर सकता है। ईश्वर प्रप्ति का यहीं सबसे सरल उपाय है।

शास्त्रीय संगीत में राम

कुमारी चारु चन्द्र

शोधछात्र ए वी०एम०एल०जी०कालेजगाज़ियाबाद

लोक और शास्त्र का पारस्परिक सम्बन्ध बहुत गहरा और अटूट है, और संगीत में ये दोनों पक्ष अनादिकाल से एक दुसरे से जुड़े रहे हैं और अपने अपने निजी विशिष्ठ गुणों के कारण एक दुसरे के विकास में सहयोगी भी रहे हैं एक ओर लोक संगीत जनमानस (लोक जीवन) के सारे मनोभावों को अपने में समेटता हुआ अपने अल्हड़पन, स्वाभाविकता, उन्मुक्तता, भावपूर्णता के साथ नैसर्गिक माधुर्य में डूबा हुआ है, और दूसरी ओर शास्त्रीय संगीत नियमों में बंधकर, सुव्यवस्थित, संयमित, धीरगंभीर संपूर्णराग, पद एवं तालकी शुद्धता को अपने में समेटता हुआ पूर्ण मर्यादा के साथ अपने को अभिव्यक्त करता है। और भावाभिव्यक्ति के नितन, मार्ग एवं आयाम खोलता है। यह पूर्णमर्यादा ही उसका अंतर्संबंध मर्यादा पुरुषोत्तम से स्थापित करती है।

शास्त्रीय संगीत से राम का सम्बंध विभिन्न कालक्रम के अंतर्गत स्थापित किया जा सकता है।

राम के काल में शास्त्रीय संगीत का तत्कालीन स्वरूप इस विषय के सम्बन्ध में प्रामाणिक जानकारी वाल्मीकि रामायण के विभिन्न उल्लेखों से प्राप्त होती है, "नाट्यशास्त्र" के अनुसार आदिकाव्य "रामायण" के प्रणेता भगवान्वाल्मीकि उन ऋषियों में हैं, जिन्होंने नाट्य शास्त्र का उपदेश भरतमुनि से प्राप्त किया इसीलिए आदि काव्य रामायण को पाठ्य, वंगेय दोनों में ही मधुर कहा गया है। तंत्री पर अवसर के अनुसार इस की योजना द्रुत, विलंबित और मध्यलय में की जा सकती है।" षड्जा, आर्ष भी, गांधारी, मध्यमा, पञ्चमी, धैवती और नैषादी इन सातों रागजननी जातियों का रासनुसरी विनियोग इसमें संभव है। गान्धर्व के तत्त्व को समझनेवाले वे व्यक्ति जो वीणा के मंद्र, मध्य और तारस्थानों में अभीष्ट मूर्छना में समर्थ थे आदि काव्य को इन्ही रूपों में प्रस्तुत करते थे।

अयोध्या पुरी की सांगीतिक स्थिति

इसके अंतर्गत भगवाग राम के राज्याभिषेक की तैयारी के समयवादित्रों के संघ, गायिकाएं और अलंकृत सुंदरियाँ विद्यमान थीं। मुरज और पणव इत्यादि वाद्यों के मेघ गर्जन के सामान शब्द से महाराज दशरथ का महल गूँजा करता था। जिस दिन राम का राज्याभिषेक होनेवाला था। प्रभात बेला मेंश्रुतिशील गायक गा रहे थे, जो तंत्रियों में अभीष्ट श्रुतियों का विभाजन करने में समर्थ थे। भरत की ननसाल गिरिव्रज में भी वादन, लास्य वनाटक का प्रभूत प्रचार था। जब उन्होंने वहां दुःस्वप्न देखा तब उनके विनोद के लिए गानवादन नृत्य की सभाएं आयोजित की गईं। भारत जब ननसाल से अयोध्या आये तब उन्हें यहाँ पर भेरी, मृदंग और वीणा का शब्द न सुनाई दिया और उन्हें अमंगल की आशंका होने लगी।

किष्किन्धापुरी में

यहाँ भी संगीत का भलीभांति प्रचार था? वहां के वानर जातीय व्यक्ति मृदंग ध्वनि के साथ नाचते थे

और वह नगरी गीत और वाद्य से भलीभांति गूँजती रहती थी।

लंकापुरी के अंतःपुर में

लंका में हनुमान रात्रि के समय पहुँच गए और उन्होंने देखा कि रावन के अंतःपुर में नृत्य वाद्य में कुशल सुंदरियाँ संभवतः नाचती और गाती हुई ही थक कर सो गयीं हैं। वाल्मीकि कहते हैं कि कोई सुंदरी वीणा को ह्रदय से लगाये ही सो गयी है और ऐसा प्रतीत हो रहा है मानो महा नदी में बहती हुई किसी नलिनी कोपोत का आश्रय मिल गया हो। कोइ छोटे से मड्डुक को बगल मे लिये सो रही है, मानो छोटे बच्चेवाली वात्सल्यमयी मां हो। कोई पटह नमक वाद्य पर अपने वक्ष का भार डाले सो रही है। मानो उसे चिरकाल के पश्चात्पति का आलिंगन प्राप्त हुआ हो? कोई वीणा का आलिंगन कि आ सो रही है मानो उसने प्रियतम को बाहुपाश में जकड़ रखा हो। कोई नर्तकी विपंची नामक वीणा को बाँहों में लिए निद्रा मग्न थी मृदंग, पणव, डिंडिम को लिए भी सुंदरियाँ सो रहीं हैं । नाट्यशास्त्र की परंपरा में वीणा केवल मत्त कोकिला नामक वाद्य को कहते हैं जिसमे तीन सप्तको के इक्की सस्वरों के लिए इक्कीस तार होते हैं और विपंची एक अंग वाद्य है, जिसमें नौ तार होते हैं।

सात मूल स्वरों के लिए और दो अंतर गंधार और का कलीनिषाद के लिए। वाल्मीकि ने वीणा और विपंची जैसे वाद्यों की चर्चा तो की है, परन्तु किन्नरी जैसे सारिका युक्ता वाद्य की चर्चा नहीं की है वस्तुतः उस युग में सारिका युक्त वाद्यों का आविष्कार नहीं हुआ था। हनुमान द्वारा रावण की लंका में भीगीत, वाद्य, नृत्य आदि से थकी हुई और मदिरा के मद में चूर कामिनियों को मुरजों, मृदंगों और चेलि का नामक ताल वाद्यों पर लुढ़के हुए देखे जाने का वर्णन है।

महर्षि वाल्मीकि ने प्रकृति में संगीत की उपस्थिति को परिलक्षित किया है

जैसे राम द्वारा पम्पा सरोवर को देखकर कहना किए पवन फूलों के भार से लदी हुई डालियों वाले वृक्षों की टहनियों को हिलाता हुआ शब्द कर रहा है और चंचल भ्रमर अपनी गूँज से उसकी संगति कर रहे हैं। पर्वत की कंदराओं से निकलता हुआ पवन गीत जैसा प्रतीत हो रहा है, जो (मत्तकोकिला वीणा के क्वण के समान) उन्मत्त कोकिलों के शब्दों से पादपों को जैसे नचा रहा है।

वर्षाकाल की सांगीतिक व्याख्या

राम कहते हैं, तंत्री की मधुर ध्वनि के समान भौंरों ने अपनी गूँज छेड़ दी है, मेढकों ने अपने शब्द के रूप में सूत्रधार के समान कंठ ताल आरम्भ कर दिया है और मृदंगों जैसी ध्वनि मेघ करने लगे हैं, कहीं नाच कर कहीं के का ध्वनि करके कहीं अपने पंख फैला कर मोर प्रसन्न हैं, वनों में संगीत जैस छा गया है।

शरद ऋतु में संगीत का अंतर्नाद

उषरू काल में पवन के संचार से शब्द हो रहा है, उसमें वेणु के स्वरों से व्यंजित सांगीतिक ध्वनि मिश्रित है। बैलों की रम्भाहट और कंदराओं में पवन का शब्द परस्पर संवर्धन कर रहे हैं।

हनुमान और रावण दोनों की प्रसिद्धि संगीताचार्यो के रूप में हनुमान के साथ प्रथम परिचय के उपरान्त राम कहते हैं की जिस प्रकार हनुमान ने संभाषण किया है इससे सिद्ध होता है कि इन्होंने समस्त वेदों का गुरुमुख से भलीभांति विधिपूर्वक विनीत भाव से अध्ययन किया है, क्योंकि कहीं भी कोई त्रुटि नहीं हुई है, मुख, नेत्र, ललाट, भौं हमें कहीं दोष नहीं दिखाई दिया। इन्होंने वाणी में हृदय स्थित और कंठ स्थित मध्यम स्वर का आश्रय लिया। इनके वाक्य अव्यर्थ, असंदिग्ध, अविलम्बित और अनायास रहे यदि हनुमान पैर कोई तलवार ताने खड़ा हो, तो भी ये उर, कंठ और मूर्धा नामक स्थानों से व्यक्त की हुई अपनी विलक्षण वाणी के द्वारा उसे वशीभूत कर लेंगे।

लंकेश रावण क्रुद्ध अवस्था में भी संगीत को नहीं भूलते उनका कहना की वह राम मेरी धनुष रुपी वीणा को नहीं जानता, जिसे मैं बाणरुपी कोणों

से बजाता हूँ। मै संग्राम में शत्रुओं को बहा कर ले जाने वाली उससे नारुपीन दी में घुसकर महा रंग का वादन करूंगा, जो प्रत्यंचा के घोर शब्द से गूँजती होगी, घायलों के आर्तनाद का स्वर जिसमें होगा और नाराच तलका नाद होगा।

रावण के अंतःपुर में वीणा और विपंची जैसे वाद्यों की चर्चा का साथ-साथ हो ना इस तथ्य का परिचायक है कि उस युग में भारतीय वृन्द गान की परंपरा विकसित थी और वह पटह, मृदंग, डिंडिम, पणव, मुरज, मुडक, आडम्बर और चेलि का जैसे अवनद्धवाद्यों के द्वारा किया जाता था।

रामायण में प्रयुक्त संगीत के पारिभाषिक शब्दों के अर्थ

1. गान्धर्व : अभिजात संगीत और संगीत शास्त्र के लिए उस समय गान्धर्व शब्द का प्रयोग होता था?

2. प्रमाण : यह लय, वंतालको नापने के सन्दर्भ में प्रयुक्त होता था।

3. सप्तजाति : सात शुद्ध जातियां थीं जिनका गायन होता था, कुश और लव ने इन सात जातियों में गाकर सुनाया।

4. तंत्रीलय समन्वितम : अर्थात वीणा और गान सब एक लय में एक साथ सम्बद्ध होकर रंजक रूप में चलता था।

5. स्थान : यह शब्द तीनों स्थानों मंद्र, मध्य एवं तारस्वरों के लिए प्रयुक्त हुआ है जोकि क्रमशः उर, एकंठ और शिर से ध्वनित होते थे।

6. मूर्च्छना : सात स्वरों का जब क्रम बद्ध आरोह अवरोह दोनों होता है तब यह क्रम मूर्च्छना कहलाता है।

7. करण : जब वर्तनी को द्रुतलय में प्रयोग करते हैं तो उसे करण कहते हैं। यहाँ करण तीनों स्थानों में द्रुतलय में आलाप के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है।

8. वीणा : नाट्यशास्त्र की परंपरा में वीणा केवल मत्त कोकिला नामक वाद्य को कहते हैं जिसमें तीन सप्तकों के इक्कीस स्वरों के लिए इक्कीस तार होते हैं और विपंची एक अंगवाद्य है, जिसमें नौ तार होते हैं दो तंत्री की नकुल वीणा है तीन तंत्रियों की त्रितंत्री वीणा, चित्रा सात तंत्रियों की इसमें चित्रा और विपंची कोण यनख, मिजराबद्ध और उँगलियों से बजाई जानी चाहिये। बजाने के ढंग में विद्वानों में मतान्तर है परन्तु विपंची साधारण वीणा नहीं थी उसके बजाने में बड़ी कुशलता की आवश्यकता थी रामायण काल में विपंची का प्रयोग ये सिद्ध करता है कि संगीत का स्तर उसका लय में कितना उच्च था।

इसके अतिरिक्त सुषिर वाद्यों में वेणु और शंख इत्यादि की चर्चा भी वाल्मीकि ने की है ताल विधि की परिभाषाओ में मात्र, ताल कला, लय, प्रमाण, मार्ग, शम्या, गीति और अक्षर सम की चर्चा रामायण में आई है।

रामायण के श्लोकों का गान सात नाम स्वर जातियों में बताया गया है भगवान रामचंद्र ने जिस परिभाषा में लव कुश का गान सुना था, उसमें रजा, पंडित, पौर तथा सभी कलाओं के विशेषज्ञ आमंत्रित किये गए थे, इनमें गान्धर्व के विशेषज्ञ भी थे इन दोनों का गानताल और लय से युक्त, अच्छे स्वर और शब्दो में गुम्फित तथा तंत्री के स्वरलय और भाषा के व्यंजनों से गुम्फि तथा। वाल्मीकि ने उपयुक्त अवसरों पर गान, वादन, नर्तन और नाट्य से सम्बद्ध परिभाषाओं की चर्चा की है। स्वर पक्ष से सम्बंधित स्थान, स्वर, श्रुति, मूर्छना, स्थान मूर्छना, जाति और करण आचार्य ब्रहस्पति के अनुसार इन परिभाषाओं में सारी स्वर विधि का समावेश है। लय के तीन प्रमाण द्रुत, मध्य एवं विलंबित हैं इन प्रमाणों के अनुसार ही दक्षिण, वार्तिक और चित्र नामक तीन मार्ग होते हैं दाहिने हाथ से बाएं हाथ पर ताल देना शम्या कहलाता है। अतः ये साक्ष्य राम का अटूट सम्बन्ध ही नहीं अपितु संगीत के शास्त्रीय पक्ष से राम के प्रगाढ़ परिचय को प्रदर्शित करते हैं। रामायण काल में जिन विषयों का उल्लेख आया है उस से यह पता चलता है कि उस काल में हमारे संगीत की स्थिति क्या थी यदि हम यूरोपीय विद्वानो द्वारा निर्धारित ईसा से 400 300

वर्ष पूर्व ही रामायण काल का मान लें, तो भी रामायण में जिन संगीत विषयों की चर्चा हुई है उससे पता चलता है कि २४०० वर्ष पूर्व भी भारतीय संगीत ने कितनी उन्नति कर ली थी।

जिस व्यक्ति को भारत के शास्त्रीय संगीत में थोड़ी भी रुचि होगी उसे संगीतकार त्याग राज के बारे में अवश्य जानकारी होगी। भारतीय शास्त्रीय संगीत को दो भागों में बांटा जाता है। उत्तरी और दक्षिणी। उत्तरी को हिंदुस्तानी संगीत कहते हैं और दक्षिणी को कर्नाटक संगीत कहा जाता है। कर्नाटक संगीत के संगीतज्ञों में त्याग राजा का नाम शीर्ष पर है।

तंजावुर क्षेत्र में संगीत की त्रिमूर्ति त्यागराज, मुत्तुस्वामी दीक्षितार और श्यामा शास्त्री का आविर्भाव हुआ और कर्नाटक संगीत का संवर्धन हुआ। ये कर्नाटक संगीत के तीन स्तम्भ थे। इनमें त्यागराज का अपना एक अनूठा स्थान था। इन्होंने भगवान राम की भक्ति में 800 से भी अधिक पदों की रचना की। इनमें मात्र 500 पद ही आजकल अधिक प्रचलित हैं। अधिकांश पद तेलुगु भाषा में थे और कुछ संस्कृत में थे। ये पद तमिल भाषा क्षेत्र में भी काफी प्रसिद्ध थे। त्याग राज की मान्यता थी कि यदि भक्ति के पदों को सम्पूर्ण निष्ठा, आस्था, शुद्धता, और समर्पण भाव से गाया जाए तो मनुष्य आध्यात्मिक ऊँचाई को सहजता से प्राप्त कर सकता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि राम ने अपने कार्यों एवं चरित्र से अपने समय एवं उसके पश्चात अमिट छाप छोड़ी जिससे जीवन के प्रत्येक अंग की तरह भारतीय शास्त्रीय संगीत भी उनके प्रभाव से अछूता नहीं है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :

1. संगीत चिंतामणि आचार्य बृहस्पति
2. भारतीय संगीत का इतिहास, डॉ० ठाकुर जयदेव सिंह
3. संगीत मैन्युअल, डॉ० मृत्युन्जय शर्मा
3. डॉ0 राजेश्वर आचार्य से साक्षात्कार पर आधारित

अवध के ऋतु एवं पर्व गीतों में राम

कुमारी रचना श्रीवास्तव

शोधार्थी

वनस्थली विद्यापीठ, (राजस्थान)

लोक संस्कृति का परिचयः- लोक संस्कृति ऐसी संस्कृति है जो सर्वसाधरण जनता से जुड़ी हुयी है। 'लोक' शब्द का अभिप्राय सामान्य जनता से है, जो किसी की व्यक्तिगत पहचान न होकर सामूहिक पहचान है। दीन-हीन, शोषित, दलित, जंगली जनजातियों, कोल भील, गोंड, सधाल नाग, किरात, शक, खस तथा पुष्कस जैसे लोक समुदाय का मिला जुला स्वरूप 'लोक' कहा जाता है तथा इन समुदायों के मानविक मन की बाह्य प्रवृत्ति मूलक, प्रेरणाओं से जो कुछ भी विकसित हुआ उसे सभ्यता कहा गया और इनकी अन्तर्मुखी प्रवृत्तियों से जो कुछ बना उसे संस्कृति कहा गया।

वसुदेव शरण अग्रवाल जी के अनुसार- ''लोक हमारे जीवन का वह महासमुद्र है, जिसमें भूत, भविष्य तथा वर्तमान सब कुछ संचित रहता है।''[2] लोक जीवन से ही लोक संस्कृति का जन्म होता है। सामान्य रूप में यह देखा जा सकता है कि लोक जीवन एवं लोक संस्कृति एक दूसरे के पूरक हैं। इसी संदर्भ में पं. रामनरेश त्रिपाठी जी ने भी कहा है कि ''लोक संस्कृति एवं लोक साहित्य'' परम्परागत विरासत है जिसके आधुनिक समान का प्रतिबिंब प्रदर्शित होता है।''[3]

लोक संस्कृति का एक रूप हमें भावाभिव्यक्तियों की शैली में मिलता है जिसके द्वारा लोक मानस की मांगलिक भावना से ओत-प्रोत होना सिद्ध होता है। लोक संस्कृति के संरक्षक लोग भी 'लोक-मानस' वाले ही हैं जो इसे अपने संवेदनात्मक अनुभूति को अभिव्यक्ति करने का माध्यम बनाते हैं। लोक संस्कृति प्रकृति की गोद में पनपती है, श्रद्धा भावना से भरी है और इसमें तर्क और अविश्वास का कोई स्थान नहीं दिखाई पड़ता।

लोक संस्कृति बहुत व्यापक है, यहां वह सब कुछ जो जन मानस में है जिसमें प्रेम है, व्यवहारिकता है, गालियां है, परम्परायें है, पर्व हैं, रहन-सहन का वेग है, मौसम है, व्रत है, उत्सव है, जन्म है, मृत्यु है अर्थात् सम्पूर्ण मानव जीवन इसी में बसा है।

1. लोक संस्कृति में लोक जीवन की अभिव्यक्ति महामहोपाध्याय गोपीनाथ
2. अवधी ग्रन्थवाली भाग-1- लोक परिचय
3. लोक विमर्श - डॉ0 विद्या बिंदु सिंह

लोक संस्कृति में रामः- लोक संस्कृति के अन्तर्गत अध्यात्म तथा श्रद्धा भक्ति की सदैव प्राथमिकता रही है। अवधी संस्कृति मे प्राण तत्व के रूप में जिस शब्द का उपयोग बार-बार उल्लेखित है वह है 'राम'। राम शब्द का उपयोग प्रमुख कारण अवधी संस्कृति का प्राणस्थल अवध की प्राचीन पौराणिक राजधानी 'अयोध्या' का होना भी है।

संस्कार में रामः- लोक संस्कृति के आधार पर जन्म से ही 'राम' शब्द का उल्लेख होता है तथा जन्म के अवसर पर किये जोन वाले गायन में अयोध्या मे रामजन्म की छवि को बार-बार प्रदर्शित किया जाता है। इसके बाद सामान्यतः सभी संस्कारों (सोलह संस्कार) जिसमें प्रायः चूड़ाकर्म, विद्यारम्भ, विवाह जैसे प्रमुख संस्कार सम्मिलित है, में राम' तथा उनकी जन्मभूमि अयोध्या का उल्लेख होता है।। सभी संस्कारों का उद्बोधन का आधार 'राम' को ही माना जाता है।

भाषा में रामः- अवध तथा अन्य प्रदेशों के अन्तर्गत रहने वाले लोग सामान्यतः 'राम' का उद्‌बोधन एक दूसरे का अभिवादन करने के लिए भी करते हैं।[2] जैसे अवध तथा इसके सीमान्त प्रदेशों में लोग 'राम-राम', 'जय श्री राम', 'जय राम जी की' जैसे वाक्यों का प्रयोग करते हैं। यही नहीं अपितु लोग हर्ष तथा विषाद की अवस्थाओं की अनुभूति में भी 'राम' को जोड़ते हैं जैसे- हानि या विषाद की अवस्था में 'अरे! राम', 'हे! राम' इत्यादि।

पर्व में रामः- हिन्दी पंचांग के अनुसार वर्ष का आरम्भ ही चैत्र नवरात्रि जैस पावन पर्व से होता है, जिसके नवमी तिथि में चैत्र राम नवमी का जन्मोत्सव मनाया जाता है। बैसाख पूर्णिमा मेला भी राम से जोड़कर देखा जाता है। केवल यही नहीं शारदीय नवरात्रि में दीपावली जैसा पुनीत पर्व का आधार भी 'राम' ही हैं।[1]

1 अवधी लोक गीत

2 अवधी ग्रंन्थावली लोक परिचय

कला एवं संगीत में रामः- कला एवं संगीत में प्राणतत्व के रूप में भी 'राम' का उल्लेख बार-बार हुआ हे। चैत्र मास से गायी जाने वाली लोक धुनों पर आधारित 'चैती' में भी राम हैं तो श्रावण मास में वर्षा के बाद या झूले पर झूलते समय गायी जोन वाली कजरी में भी 'हरे रामा' की ध्वनि का उच्चारण बार-बार किया जाता है। दीपावली राम के अयोध्या वापसी की खुशी के अवसर पर गाये जाने वाले गीतों की लाता है तो होली भी अवध के रघुवीर को याद करते हुये 'अनेक गीतों', जैसे गीतों को लेकर आती है। चैत्र मास में राम नवमी 'राम जन्म' जैसे गीतों को लेकर आती है। चैत्र-मास में राम नवमी 'राम जन्म' का उत्सव मनाती है तो दूसरी ओर राम विवाह के गीत भी सहज ही वैवाहिक गीतों में मिल जाते हैं। केवल जन्म ही नहीं मृत्यु जैसे विषाद के क्षण में भी राम का गायन लोक गीतों में प्रभावी रूप में उपयोग में लाया जाता है।

ऋतु एवं पर्वों पर आधारित कुछ गीत

चैती-

प्रगट भये सिरी राम हो रामा चैत महिनवा
जनम लिहिन भगवान हो रामा चैत महिनवा

मेला गीत-

रघुवर संग जाब हम न अवध मा रहिबै
जो मोरे रघुबर रथ चढ़ि जइहैं
पैदल चली जाब हम ना अवध मा रहिबै

कजरी-

अरे रामा बरखा आई बाहर
सावन घन बरसै रे हारी

दसहरा गीत-

गावौ बधैया बजावौ सहनइया
राजा राम लिहिन संहार
दसमी दसहरा कै दिन रावन
का मारिन किहिन उद्धार

दीपावली गीत-

अजोध्या मा जगमग होवै, वन से राम जो आइ गये

होली गीत-

होली खेलैं रघुबीरा अवध मा
होली खेलैं रघुबीरा

रंग मंचो पर श्री राम-लीला जैस कार्यक्रमों का मंचन लोक मानस को रोमांचित करता है।

जनश्रुतियों तथा ग्रन्थों में रामः- राम शब्द का उल्लेख प्रभावी रूप से जन प्राणियों, लोक-कहावतों, मुहावरों, तथा उक्तियों में देखने को मिलता है। 'राम' का जीवन लोक संस्कृति का अभिन्न अंग रहा है तथा 'राम चरित मानस', विनय-पत्रिका' के साथ-साथ लोग ग्रन्थों में भी राम ही मूल लोक परम्परा, पहचान एवं प्रवाह, 1 दिन-दिन पर्व विधा विदुसिंह तत्व हैं। प्रेम के संदर्भ में सीता और राम का प्रेम भी ग्रंथों में उल्लेखित है।

लोक मानस के जड़ से लेकर चेतन तक, जीवन से लेकर मरण तक, आस्था में, विश्वास में, प्रेम में, व्यवहार में, गायन में, विषाद में, हर्ष में राम ही व्याप्त हैं।

'राम' भारतीय संस्कृति का मूल तत्व हैं। जिनका जीवन सम्पूर्ण भारत की सांस्कृतिक गतिविधियों का आधार तत्व है।

रामभक्ति का विकास क्रम एवं केन्द्र अयोध्या

डॉ0 सुनीता द्विवेदी

एसो0 प्रोफेसर संगीत विभाग

जुहारी देवी गर्ल्स पी0जी0 कॉलेज, कानपुर (उ0प्र0)

भारतीय भक्ति भावना का विकास रामभक्ति से शताब्दियों पूर्व हो चुका था। ज्ञान और कर्म के समान भक्ति का भी उद्‌गम स्थल वेद माना गया है। वेद मन्त्रों में ईश्वर के लिये की गयी भावुक स्तुतियाँ मिलती हैं, जिनमें कहीं पर से माता-पिता तो कहीं पर साथ मानकर स्तुति की गयी है।[1] ये स्तुतियाँ प्रेम और भक्ति के बिना की गयी हों, यह असम्भव है। वेद में प्राप्त इस बीज रूप भक्ति का पल्लवन भागवत धर्म में हुआ जिसमें कृष्ण को विष्णु का अवतार माना गया है। डॉ0 मुंशीराम शर्मा के अनुसार यही से वैष्णव भक्ति का मूर्ति पूजा के रूप में प्रारम्भ हुआ है।[2]

वैष्णव भक्ति की दूसरी धारा के पास्य देव राम के अवतारवाद को लेकर कुछ विद्वानों का विचार है कि कृष्ण के अवतार रूप का विकास होने पर कालान्तर में कुछ महापुरूषों को भी विष्णु का अवतार माना जाने लगा था, जिसमें दशरथ पुत्र राम प्रमुख हैं।[3] किन्तु रामायण में कुछ ऐसे प्रसंग मिलते हैं जिससे स्पष्ट होता है कि ग्रन्थ के रचना काल[4] में ही राम विष्णु के अवतार माने जाते थे। जैसे- उत्तर काण्ड में ब्रम्हा ने भगवान विष्णु से नके विभिन्न अवतारों की बात कहकर राम के रूप में अवतरित हुये उन्हें पुनः देव लोक लौट आने के लिये कहा है। कुछ विद्वान ऐसे प्रासंगों को रामायण का मूल अंश नहीं मानते हैं। उनके अनुसार ईसा की तीसरी शताब्दी में ये प्रसंग जोड़े गये हैं। विद्वानों के इस वक्तव्य को मान लेने पर यही सिद्ध होता है कि रामावतार की भावना कृष्णावतार के पहले से विद्यमान थी क्योंकि भागवतपुराण का रचना काल ईसा की छठी शताब्दी माना जाता है।[5] श्रीमद्‌भागवत पुराण में राय विष्णु के अवतार माने गये हैं-

"सुरोऽसुरो वाप्यथ वानरो नरः,
सर्वात्मना यः सुकृतज्ञमुत्तमम्।
भजेत् राम मनुजाकृतिं हरिम्,
य उत्तराननयत्कोसलान्दिवम्।।"[6]

अर्थात देवता, असुर, वानर अथवा मनुष्य कोई भी हो, से श्रीराम का ही भजन करना चाहिये, क्योंकि राम नररूप साक्षात् श्री हरि हैं।

विष्णु के अवतारों में भारतीय संस्कृति की दृष्टि से रामावतार सबसे अधिक महत्वपूर्ण माना गया है।[7] अवतार पुरूष राम का चरित्र अनुकरणीय है, उसके साथ मर्यादा जुड़ी हुई है। निरन्तर बढ़ती हुई अवतार लीला की इस भावना का रामोपासना के विकास में एक विशिष्ट योगदान रहा है। इस प्रकार रामभक्ति का प्रारम्भ मर्यादा पुरूषोत्तम के रूप से हुआ।

रामायण के परवर्ती काल में आठवीं शताब्दी से रामभक्ति धारा का क्रमिक रूप प्राप्त होता है। इस काल में थोड़े से रूप परिवर्तन के साथ रामभक्ति धारा की जो शरण प्रस्फुटित हुई उसकी प्रशाखा के रूप में 15वीं शताब्दी में रामावत सम्प्रदाय विकसित

हुआ। 800 से 1100 ईसवी के बीच दक्षिण भारत में भक्ति आन्दोलन जोरों पर था। ईश्वर प्रेम को जन मानस में प्रवाहित करने के लिये इस काल में वहाँ शैव और वैष्णव दो प्रकार के सन्त हुये। इन वैष्णव सन्तों को आलवार कहा जाता है। प्रमुख आलवार संख्या में 12 माने जाते हैं। आलवार का अर्थ है- 'भगवद् भक्ति में डूबा हुआ व्यक्ति।' तमिल में लिखे इन भक्तों के पद संग्रह को 'दिव्य प्रबन्धम्' कहते हैं। ये भक्ति पद आज भी दक्षिण के मन्दिरों में गाये जाते हैं। आलवारों में प्रथम चार विष्णु के पूजक थे और पाँचवें आचार्य शढकोप मुनि भगवान राम के गोपी भाव के उपासक थे।[8] डॉ0 भगवती सिंह ने इनकी माधुर्य भक्ति का वर्णन करते हुये इन्हे कान्ताभावोपासक बताकर इनके ग्रन्थ सहस्त्रगीति का निम्न उदाहरण दिया है जो शकोप जी के कान्ताभाव को प्रमाणित करता है-

"दीर्घीभूतदहत्कठिन चापो मत्काकुत्स्थोनायाति
मरणोपायं न जानामि प्रबल पापाहं स्त्रीजन्या।।"[9]

आज राम भक्ति का रसिकोपासक वर्ग इन्हें अपनी परम्परा का प्रथम आचार्य मानता है। इन्हीं की शिष्य परम्परा में 11वीं शताब्दी में (1017-1137) आचार्य रामानुज का आविर्भाव हुआ। इस काल में वैष्णवों के चार सम्प्रदाय बने- श्री, सनक, ब्रम्ह, एवं रूद्र इनके क्रमशः आचार्य थे—रामानुजाचार्य, निम्बार्काचार्य, मध्वाचार्य, विष्णुस्वामी। उत्तर भारत में विशेष रूप से मथुरा-वृन्दावन में पुष्पित कृष्णभक्ति की परम्परा आचार्य निम्बार्क और विष्णु स्वामी से सम्बद्ध है। श्री एवं ब्रह्म सम्प्रदाय में रामभक्ति को विशेष महत्त्व दिया गया। रामानुजाचार्य जी के 13वीं गद्दी के आचार्य स्वामी राघवानन्द जी तीर्थ दर्शन के उद्देश्य से काशी और अयोध्या आये और काशी में स्थायी रूप से रहने लगे।

स्वामी राघवानन्द ने काशी में रहते हुये रामदत्त नामक ब्राम्हण को राममन्त्र की दीक्षा दी जो आगे चलकर रामानन्द के नाम से प्रसिद्ध हुये। इस प्रकार रामभक्ति का बीज स्वामी राघवानन्द के साथ दक्षिण भारत से लाकर काशी में रोका गया, जो 15वीं शताब्दी में आविर्भूत हुये रामानन्द के प्रयासों से सर्वा ीण समृद्ध हुआ। इसी कारण स्वामी रामानन्द को रामभक्ति धारा के प्रवर्तक के रूप में जाना जाता है। रामानन्द ने केवल राम के भक्तों का क वर्ग तैयार किया जो रामावत सम्प्रदाय कहलाया। रामानन्द ने नवधा भक्ति से प्रेमाभक्ति को जोड़कर दशधा भक्ति बतलायी अर्थात राम के प्रति विशेष राम युक्त भक्ति का सिद्धान्त बताया। श्री सम्प्रदाय के अन्तर्गत आने वाला रामभक्तों का यह वर्ग आचार-व्यवहार, में अन्यों की अपेक्षा अधिक उदार था। आचरण में इस परिवर्तन का कारण तत्कालीन सामाजिक परिस्थिति थी।

हिन्दुस्तान में हमेशा से विदेशियों के आक्रमण होते रहे हैं। 15वीं-16वीं शताब्दी में सिकन्दर लोदी के समय (सन् 1489-1517) में हिन्दुओं पर धर्म के नाम से वह अत्याचार किये गये, जो इतिहास में किसी भी मुस्लिम शासक के समय नहीं हुये थे। तलवार के दम पर हिन्दुओं को मुसलमान बनाने का काम सिकन्दर लोदी ने शुरू किया। वह हिन्दू धर्म का कट्टर विरोधी था। मुस्लिमों द्वारा इस प्रकार का अत्याचार न्यूनाधिक मात्रा में हो 17वीं शताब्दी के अन्त तक इसी प्रकार चलता रहा। अवध के चौथे नवाब आसफुद्दौला की हिन्दुओं के प्रति नीति बहुत ही उदार थी। वह जानता था कि राजधानी निकट होने से अत्याचार न होने पर भी हिन्दुओं में आतंक बना रहेगा। इसलिये उसने फैज़ाबाद से राजधानी हटा ली और लखनऊ को अवध सूबे का केन्द्र बनाया, जिससे अयोध्या पर नवाबी शासन का जो थोड़ा बहुत दबाव था, वह भी धीरे-धीरे खत्म होता गया। इस परिवर्तन से अयोध्या में वर्षो से त्रस्त सन्त, महात्मा, गृहस्थ आदि सभी पूर्णरूपेण स्वतन्त्र होकर पूजा-पाठ करने और व्रतोत्सव मनाने लगे। धीरे-धीरे अयोध्या नगरी पुनः रामभक्तों और मन्दिरों का गढ़ बन गयी।

18वीं शताब्दी में रामभक्तों में जगी इस चेतना के पीछे मुगल शासकों और अवध के नवाबों की हिन्दुओं के प्रति उदार वृत्ति की प्रमुख भूमिका रही है। भक्तों के लिये अयोध्या का द्वार खुल जाने के फलस्वरूप राजस्थान, मिथिला, चित्रकूट आदि सभी जगहों से रामावत् सम्प्रदाय की विभिन्न शाखा-प्रशाखाओं के अनुयाचियों ने यहाँ आकर इसे राम भक्ति साधना का केन्द्र बनाया और इस तीर्थ से वर्षो की अपनी वियोग तृष्णा को तृप्त किया। लम्बी त्रासदी से उबरने के बाद ये रामभक्त निर्भय होकर अपनी साधना में संगीत जैसी कला को तुरन्त तो स्वीकार नहीं कर पाये किन्तु कुछ समय पश्चात् सांगीतिक तत्त्वों के रूप में सर्वप्रथम मानस का सस्वर-पाठ व गान प्रारम्भ हुआ तदनन्तर भक्त कवियों के रचित पदो को गाया जाने लगा। इस प्रकार भक्ति की सहज सहचारी साहित्य और संगीत कला का भी रामभक्ति में समावेश हो गया और रामभक्ति साधना समृद्ध हो अनवरत विकास को प्राप्त होती गयी।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. ऋग्वेद, 8/98/11
2. वही, 1/75/4
3. डॉ0 भगवती प्रसाद सिंह, रामभक्ति में रसिक सम्प्रदाय, पृ0 39
4. वही, पृ0 35
5. वही, पृ0 38
6. श्रीमद् भागवतपुराण, 5/19/8
7. डॉ0 फादर कामिल बुल्के, रामकथा, पृ0 147
8. डॉ0 बल्देव उपाध्याय, वैष्णव सम्प्रदाय का साहित्य और सिद्धान्त, पृ0 149
9. डॉ0 भगवती प्रसाद सिंह, रामभक्ति में रसिक सम्प्रदाय, पृ0 77

"लोक साहित्य में भवभूति के राम"

दयानन्द पटेल

शोधच्छात्र, संस्कृत, पालि एवं प्राकृत भाषा विभाग
रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर, म0प्र0

'लोके विदिताः लौकिकाः, तेषाम्'[1] लौकि सज्जनों की वाणी वास्तविक तथ्यों के अनुसार चलती है, परन्तु प्राचीन वसिष्ठ आदि ऋषियों की वाणी के पीछे तथ्य चलते हैं, अर्थात् लौकिक सज्जनों की वाणी तो अर्थ का अनुसरण करती है, परन्तु प्राचीन महर्षियों की वाणी के पीछे अर्थ स्वयं चलता है। "लौकिकानां हि साधूनामर्थ वागनुवर्तते ऋषीणां पुराद्यानां वाचमर्थोऽनुधावति।।[2] इसी प्रकार लोक साहित्य में राम को एक मर्यादा पुरुषोत्तम लोक कल्याणकारी महापुरुष के रूप दृष्टिगोचर होते है। महाकवि भवभूति ने उत्तर रामचरित में कहा है, राम लोक नायक है, उनको मुख्यतया राम या रामभद्र नाम से संबोधित किया गया है। उन्होंने राम को एक लोकप्रिय महाराजा के रूप में चित्रित किया है। उनको कहीं भी भगवान नहीं कहा गया है। वह एक मर्यादा पुरुषोत्तम है वे आदर्श राजा, आदर्श पति, आदर्श पिता और आदर्श भाई है।

उनका चरित्र लोकोत्तर है। उन्होंने लोकानुरंजन के लिये सीता का परित्याग किया है। राम का कथन है कि वे प्रजानुरंजन के लिए सर्वस्व अर्पण कर सकते हैं।

"स्नेहं दयां च सौख्यं च यदि वा जानकीमपि।
आराधनाय लोकस्य मुञ्चतो नास्ति मे व्यथा।।

जैसा कि वेदों में प्रसिद्ध है-"एक शब्दः सुप्रयुक्तः सम्यग्ज्ञातः स्वर्गे लोके कामधुग्भवति।"[4] अर्थात् एक ही शब्द यदि अर्थ के अनुसार सटीक प्रयुक्त हो और उसे भली प्रकार अर्थात् उसके अर्थ और तात्पर्य के अनुसार समझ लिया जाय तो वह इहलोक और पर लोक में समस्त कामनाओं को पूर्ण करने वाला होता है। उसी प्रकार प्राचीनकाल से राम की अलौकिकता, आदिसाहित्य रामायण में राम के भगवान् के स्वरूप में चित्रित किया गया है। जिससे यह स्वभाविक सिद्ध है कि लोग उनके इस ईश्वरी स्वरूप का अनुसरण आत्मस्वरूप से स्वयं करते है। इस प्रकार जैसे वाणी और अर्थ का समन्वित रूप से साहित्य का लौकिक रूप से समाज का लोक कल्याणार्थ में महत्त्वपूर्ण है। उसी प्रकार राम का लोक में उनके लिये राजा का यश सर्वस्व है। लोकाराधना अर्थात् प्रजापालन ही इक्ष्वाकुवंशीय राजाओं का एकमात्र व्रत एवं अनुपम धरोहर रहा है जो उन्हें गुरुमन्त्र की भांति अपने-अपने गुरुओं से आशीष के रूप में प्राप्त होता रहा है, जैसे-'युक्तः प्रजानामनुरञ्जने स्याः।[5] "इक्ष्वाकुवंशेऽभिमतः प्रजानाम्।"[6]

चाहे जो कुछ भी हो जनता को प्रसन्न रखना सज्जनों का कर्त्तव्य है, जिसको पिता जी ने मुझे तथा अपने प्राणों को छोड़कर पूरा किया है-"सतां केनापि कार्येण लोकस्याराधनं व्रतम्। यत्पूरितं हि तातेन मां च प्राणांश्च मुञ्चता।।[7] 'साहित्य समाज का दर्पण होता है।'[8] जैसा लोक नायक होगा वैसा ही लोक साहित्य रचा जाता है और समाज उसका उसी प्रकार अनुकरण करता है। नाट्यशास्त्र तथा दशरूपक में आचार्य भरत तथा धनञ्जय उत्तम नायक के गुणों की चर्चा की है। "रक्तो लोको यास्मिन् तथाभूतः।"[9] नायक विनीत, मधुर, त्यागी-चतुर, प्रिय बोलने वाला लोकप्रिय पवित्र आदि धार्मिक गुणों से सम्पन्न ही लोक नायक हो सकता है तभी लोक साहित्य अपने समृद्धि को प्राप्त करता है और समाज उनका अनुसरण करते है जैसे-महावीर चरित में (2.37) "राम राम नयनाभिरामतामाशास्य सदृशी समुद्वहन्।"[10] हे राम, हृदय के समान ही नयनाभिरामता को

धारण करने वाले अकल्पनीय गुणों से रमणीय आप सब प्रकार से मेरे हृदय में स्थित हो। वही महावीर चरित में (4. 44) अयोध्या की प्रजा दशरथ से कह रही है जो आपका यह पुत्र तीनों वेदों का रक्षक है मैं आप प्रभु की कृपा से, उस रामचन्द्र के आज ही राजा बनने से हम सब लोग श्रेष्ठ राजा से युक्त होकर, कुशलता प्राप्त कर मनोरथों को पूर्ण कर विचरण करेंगे।[11] भवभूति के उत्तर रामचरितम् में राम के कर्त्तव्य की परकाष्ठा प्रजा को प्रसन्न रखने में है। रघुवंशी यश को ही अपना परमधन मानते थे। यश ही तुम लोगों का परमधन है। "स्तस्माद्यशो यत् परमं धनं वः।।"[12] अतः कालिदास ने भी कहा है-"अपि स्वदेहात् किमुतेन्द्रियार्थाद् यशोधनानां हि यशो गरीयः।"[13]

लोक आराधना का व्रत उनके जीवनरूपी साधना का एक कठोरपत्थर की भाँति हृदय में प्रचण्ड शोकाग्नि सीता के परित्याग का निर्णय करते, राम को सारा संसार सुना वन-सा दिखाई पड़ने लगता है। राम अपने आपको असहाय अनुभव करते हैं। "शून्यमधुना जीर्णारण्यं जगत अशरणोऽस्मि।"[14] राम कहते हैं कि मेरा जीवन केवल दुःख भोगने के लिये है। मर्मस्थलों की पीड़ा देने वाले दुःख ने हृदय में वज्र की कील सी ठोक दी है-"दुःखसंवेदनायैव रामे चैतन्यमाहितम्।"[15]

राम के हृदय में घोर वेदना है। उनका शोक पुटपाक के सदृश्य हो गया है। "-अनिर्भिन्नो गभीरत्वादन्तर्गूढघनव्यथः। पुटपाकप्रतीकाशो रामस्य करुणो रसः।"[16] सीताहरण के चित्र को देखकर राम को पुनः उस घटना की स्मृति आ जाती है। भवभूति उस समय की राम की स्थिति का वर्णन करते हुए कहते हैं कि आपके विलाप को देखकर पत्थर भी रो पड़े थे और वज्र का भी हृदय फट गया था—"जनस्थाने शून्ये विफलकरणैरार्यचरितैरापि ग्रावा रोदित्यपि दलति वज्रस्य हृदयम्।"[17]

राम सभी सद्गुणों के प्रतिमूर्ति हैं और कर्त्तव्य पालन में वे अत्यन्त कठोर हैं, चित्र दर्शन में राम के जटाधारण के चित्र को देखकर भवभूति कहते हैं कि आपने वाल्यावस्था में ही वानप्रस्थ ले लिया। -"धृतं बाल्ये तदार्येण पुण्यमारण्यकव्रतम्।।"[18]

तैजस्वी व्यक्ति अन्यों के फैले हुए तेज को सहन नहीं कर सकता है। अर्थात् एक तेजस्वी दूसरे तेजस्वी से द्वेष एवं ईर्ष्या रखता है। सूर्यकान्त मणि की यह प्रकृति होती है कि सूर्य की किरणों में वह पिघलने लगता है। सूर्यकान्त मणि अपने स्वभाववश नहीं पिघल रहा है बल्कि सूर्य के तेज से अपने आपको अपमानित अनुभव करके पिघल रहा है।-"न तेजस्तेजस्वी प्रसृतमपरेषां विषहते"।[19] इसलिये लोक रक्षा तथा प्रजानुरंजन के लिये राम को लोकापवाद से अपमानित होना पड़ता है।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि लोक साहित्य में भवभूति के राम, जिस प्रकार उनका 'करुण रस' ही एक रस है, वही विभिन्न रसों का रूप धारण करता है-'एको रसः करुण एव निमित्त भेदाद् भिन्नः पृथक् पृथगिव श्रयते विवर्तीन्'[20]। उसी प्रकार उनके राम मर्यादा पुरुषोत्तम हैं। लोकानुरंजन के लिये वे अपने विविध आदर्शस्वरूपों का साहित्य में सूर्य के प्रकाश की भाँति सभी को आत्मानन्दित तथा सुखानुभूति की अमरता प्रदान करते है।

सन्दर्भ

1. उत्तररामचरितम्-प्रणेता-डॉ0 कपिलदेव द्विवेदी आचार्य-प्रकाशक-राम नारायणलाल विजय कुमार-2 कटरा रोड इलाहाबाद-संस्करण 2002, पृ0-23
2. उत्तररामचरितम्- 1/10
3. वही-1/12
4. साहित्यदर्पण-लेखिका-डॉ0 कमला देवी-प्रकाशक प्रयाग पुस्तक भवन-20ए यूनिवर्सिटी रोड इलाहाबाद-संस्करण 2003 पृ0-48।
5. उत्तररामचरितम्-1/11
6. वही-1/44
7. वही-1/41
8. शिवराविजयम्-व्याख्याकार-डॉ0 विजय शंकर चौबे- प्रकाशक मोतीलाल बनारसीदास संस्करण-पंचम् पुनर्मुद्रण-2016 पृ0-18
9. दशरूपकम् लेखक डॉ0 श्री निवास शास्त्रिणा-प्रथम संस्करण-1996 पृष्ठ-109
10. वही महावीरचरितम्-2/37 पृ0-190
11. वही 4.44 पृ0-111
12. उत्तररामचितम्-1/11
13. रघुवंशम्-14/35
14. उत्तरामचरितम्-पृ0-98 (वाक्य संख्या 141-ख)
15. वही 1/47
16. वही 3/1
17. वही 1/28

रामायण काल में तंत्री वाद्यों का स्थान एवम् महत्त्व

डॉ. संगीता सिंह

संगीत एवम् मंचकला संकाय
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

गायन वादन तथा नृत्य तीनों का समावेश ही संगीत है। गायन के बाद वादन का स्थान आता है। वादन की क्रिया को वाद्यों के माध्यम से किया जाता है। "वाद्यों का चतुर विद वगीकरण जो तत्, सुषिर, अवनद्ध तथा घन नाम से किया गया है?"[1] य तत् को तंत्री वाद्य भी कहते हैं। तंत्री वाद्य शब्द तंत्री. वाद्य से मिलकर बना है नाट्यशास्त्र में तत् को तंत्रीकृत कहा है। रामायण मैं भी तंत्र वाद्यों प्रमुख स्थान रहा है जिसका उपयोग सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक अवसर ऊपर होता रहा है जैसे—लवकुश द्वारा 'रामायण' गायन के प्रसंग में वीणा के लिए तंत्री शब्द का प्रयोग किया गया है।

महर्षि वाल्मीकि द्वारा रचित रामायण भारत का प्राचीन सांस्कृतिक महाकाव्य माना जाता है रामायण की रचना गेयकाव्य के रूप में हुई। श्री राम के पुत्र लव और कुछ को इस महाकाव्य के गान की शिक्षा केस साथ वीणा वादन की भी शिक्षा महर्षि बाल्मीकि ने समझाएं। महर्षि ने गान के साथ वीणा की शिक्षा देकर वीणा के महत्व को समझाया है

"रामायण काल में संगीत सर्वत्र परिव्याप्त था। किष्किंधा कांड में श्रीराम जी वर्णन करते हुए लक्ष्मण जी से कहते हैं हे लक्ष्मण देखो भ्रमरों का गुञ्जार वीरा का मधुर स्वर कैसा है लगता है वन में संगीत चल रहा है।"[2]

रामायण में गंधर्व जन विशेषता गान तथा बीणा वादन किया करते थे और अप्सराओं का कार्य इनके साथ नृत्य करना था।

'रामायण में वर्णित एक पंक्ति में बाल काण्डष्त्रैत्रिलयसमन्वितं' से यह पुष्टि होती है की तंत्री अर्थात वीणा के बिना रामायण गान आकर्षक व् सुमधुर नहीं बन पाता?"[3]

इसमें महर्षि ने गायन के साथ वीणा की शिक्षा को महत्वपूर्ण स्थान दिया है।

रामायण काल भारतीय संस्कृति का अत्यंत समृद्ध काल माना जाता है। इस काल की महानगरी श्री राम की अयोध्या वानर राज सुग्रीव की किष्किंधा और राक्षस राज रावण की लंका वीणा वादन से सदा निनादित होती रहती थी।

इसके अनेक उदाहरण मिलते रहते है—जैसे महाराज दशरथ की मृत्यु के पश्चात राजकुमार भरत जब अपने मामा के यहां से अयोध्या वापस आते हैं तब उन्हें वीणा की मधुर झंकार सुनाई पड़ती है जिससे वे अयोध्या में अमंगल होने क अनुमान लगा लेते हैं।

इसी प्रकार किष्किंधा कांड में एक वर्णन आया है जिसमें लक्ष्मण सुग्रीव को अपने कर्तव्य की याद दिलाने जाते हैं तो उनको महल में मधुर संगीत सुनने को मिलता है

'प्रविश्ननेव सततं शुस्राव मधुरस्वरम्।
तंत्रिगीत समाकीर्ण समताल पदाक्षरम्।।"

अर्थात—सुग्रीव के महलों में घुसते ही लक्ष्मण ने बीणा के साथ उसके मधुर स्वर में मिलते हुए

गीत सुमे जिसके शब्द और ताल उन स्वरों से युक्त थे।इससे स्पष्ट है कि वीणा का उस समय कितना प्रचार था

रामायण में विपंची जैसे प्राचीन विणाओ एवम् शुद्ध सप्त जातियों का वर्णन है, इससे यह सिद्ध होता है कि चार षड्ज ग्रामिक एवम् तीन मध्यम जातियों से वाल्मीकि परिचित थे।

रामायण में विपंची वीणा का वर्णन इस प्रकार किया गया है

"विपंची परिगृहयान्या नियता नृत्यशालिनी।
नृद्रावशमनुप्राप्ता सहकांतेव भामिनि।।"[5]

अर्थात्एक नाचने वाली सुंदरी विपन जी को लिए हुए इस प्रकार निद्रा वस को प्राप्त है कि मानो कोई भाविनी अपने प्रिय के साथ सोई हो।

इससे यह सिद्ध होता है कि रामायण काल में वाद्य संगीत कितनी उन्नत दशा में थी रामायण काल में सभी वर्ग के लोगों को वीणा प्रिय थी एवं सामाजिक राजनैतिक व धार्मिक अवसरों पर उसको महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त था।

संगीत का व्यवसाय करने वाले लोगों में गायक, सूत, मागध, बंदी तथा वारांगनाओं का समावेश था। नगरों में इन लोक कलाकारों का महत्वपूर्ण स्थान था। अन्त में हम कह सकते हैं कि इस काल में गीत वाद्य नृत्य में वीणा का विशिष्ट स्थान एवम् महत्त्व था।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. शारंगदेव, संगीत रत्नाकर अध्याय 6
2. किष्किन्धा काण्ड सर्ग 28, श्लोक 36 37
3. परांजपे, श्रीधर (इतिहास भारतीय संगीत का इतिहास), पृष्ठ 20
4. रामायण, किष्किन्धा काण्ड सर्ग 33, श्लोक 21
5. रामायण, सुन्दरकाण्ड सर्ग 10, श्लोक 37और40

लोक संगीत में भगवान श्रीराम का स्वरूप

डॉ0 ज्योति विश्वकर्मा

असिस्टेन्ट प्रोफेसर, संगीत विभाग,
जगद्गुरू रामभद्राचार्य विकलांग विश्वविद्यालय, चित्रकूट, उ0प्र0

लोक संगीतों में विज्ञान की तराश नहीं मानव संस्कृति का सरल और व्यापक भावों का उभार है। भावों की लड़ियाँ लम्बे-लम्बे खेतों सी स्वच्छ, पेड़ों की नंगी डालों सी अनगढ़ और मिट्टी की भाँति सत्य है। लोकगीतों में सहजता, रसमयमता, मधुरता आदि गुण रहते हैं।[1]

लोकगीत भारतीय समाज के हृदय के स्वतंत्र उद्गार हैं। लोकगीत में राम के स्वरूप का सम्बन्ध भारतीयता की ऐतिहासिकता राम के स्वरूप व आस्था का वर्णन केवल लोकगीतों में ही नहीं बल्कि राम का स्वरूप व आस्था भारतीय समाज से बाहरी समाज तक अपना विशद रूप धारण कर चुका। अतः यह कहना आवश्यक है कि राम का स्वरूप व आस्था विश्व व्यापक है। राम के स्वरूप की व्याख्या विद्वानों एवं लेखकों ने अनेक रूपों में करते हुए संगीतात्मक एवं भक्तात्मक रूप से मुक्त द्वारा की है। लोकगीतों में राम के स्वरूप एवं आस्था पूर्ण विविधता देखने के योग है। राम लोकगीतों के स्वरूप ही नहीं बल्कि प्राणिमात्र के दिलों के स्वरूप भी हैं। भारतवर्ष विविध जातियों व वर्गों का देश है। सामाजिक व पारिवारिक व्यवस्था में हर वर्ग-जाति एवं महत्वपूर्ण स्थान धार्मिक समारोह में या व्रत त्यौहार पर्वों के अवसर पर लोग अपनी वाणी द्वारा लोकगीतों के माध्यम से राम के स्वरूप को चरितार्थ करते हैं। लोग अपने मनोभावों के द्वारा मुक्त कण्ठ से गायन करके लोकगीतों में राम के स्वरूप को देखते हैं।[2]

संक्रान्ति, मेलों, उत्सवों और अन्य पर्वों पर लोग अपने स्वरों में राम के स्वरूप व आस्था को लोकगीतों का रूप देते है। अनेकों प्रकार से लोकगीतों के द्वारा राम के स्वरूप को परिभाषित किया जाता है, जैसे कि शिशु के जन्म पर नामकरण और मुण्डन पर लोकगीतों के द्वारा राम के स्वरूप को दर्शाया जाता है। शिशु के जन्म के कुछ दिन बाद शिशु को झूले में लिटा दिया जाता है और महिलायें गीत गाती है-

''मेरे लला राम झूल-झूल तेरी
टोपी में लगे फूल।''

लोकगीत ही मानव को मानवता की प्रत्येक राह का मार्ग दर्शन करते हैं। प्राणिमात्र के अन्दर छिपी हुई भावनायें एवं भक्तिदायक उद्गार जो कभी भी बाहर आने के लिए मार्ग नहीं खोज पाते लेकिन लोकगीतों के माध्यम से तथा मानसिक स्वर लहरियों के द्वारा सब भावनायें व उद्गार गीत के द्वारा अपना रास्ता बाहर आने के लिए खोज लेता है। लोकगीत राम स्वरूपमय है और राम लोकगीत की आस्था बन चुके हैं। ईश्वर सृजित सृष्टि का कोई ऐसा कोना नहीं है, जगह नहीं जहाँ गीत किसी न किसी रूप में विद्यमान न हों। जहाँ गीत, संगीत है वहाँ लोक है लोक और संगीत सृष्टि के आरम्भ से पुनीत एवं अटूट सम्बन्ध है। लोक और गीत के मध्य राम का स्वरूप व आस्था है।

इसलिए तभी से इसे लोकगीत कहा जाता है। लोकगीतों में राम का स्वरूप व आस्था पहले ही निहित है। यही कारण है कि जीवन का कोई पक्ष अथवा आयोजन ऐसा नहीं है, जिसमें गीत स्वरों की भागीदारी न हो, गीत हमारे समूचे सांस्कृतिक जीवन की रीढ़ हैं, गीत संगीत मानव की मुक्तिगाथा का प्रथम प्रणव है, मानसिक तृष्टि, आत्मिक तृप्ति का पर्याय संगीत सुख सृष्टि की आधार भूमि है, मानव की तो बात क्या हिंसक पशु भी संगीत स्वरों से वशीभूत हो जाते हैं।[3]

लोकगीतों में राम भक्तों के अधीन हैं जो थोड़े से ही राम को पाया जा सकता है। लेकिन उनको कुछ दिया नहीं जा सकता है उनके बिना संसार में सच्चा सहाई कौन है। अतः श्रीराम शक्ति, सखा, मित्र, माता व पिता है। लोकगीत शास्त्रीय संगीत पौधशाला लोकगाथाओं एवं गीतों के द्वारा बस यही प्रार्थना करते हैं कि मेरा शुभ और अशुभ लाभ-हानि, जय-पराजय, हे राम! तुम्हारे हाथों में है! हे प्रभु! जो उचित समझें, वही कीजिये यह सब कुछ तो धार्मिक आस्था के द्वारा लोकगीतों में राम का स्वरूप परिभाषित होता है। लोकधुनों पर आधारित राम चरित्र सम्बन्धित गीतों में भी भगवान श्रीराम का स्वरूप स्पष्ट होता है-

खाये देत जीवन बिना काम के,
भजन करो कछु राम के।
जी बिन देह जरा न रूकती,
चाहो अन्त समय में मुक्ति।
जुकती ध्यान करियो
सबेरे न तो शाम के ऐसी करो जतन।
भजन लख चौरासी भटकत आये?
मनुष्य दे कठिन से पाये
फिर भी माने न समझाये,
गलती चक्कर फँसी बिना राम के।
भजन ईश्वर मालिक से मुँह फेरे,
दिल से नाम कबहु न टेरे,
बन के नारि कुटुम्ब के चेरे,
कोरी ममता में फँसे दूते आन के।
भजन छोड़ौ माता पिता और भ्राता,
जो हैं तीन लोक के दाता।
करियो न उन ईश्वर से नाता,
क्षमा करिहें अपराध अपना जान के।।[4]

इन गीतों में भगवान राम को मुक्तिदाता के रूप में दिखाया गया है। लोकगीतों में आत्मा को चिड़ियाँ सम्बोधित किया जाता है, आत्मा से राम भजन को जोर दिया जाता है-

बोले-बोले रे राम चिरैया रे
बोले रे राम चिरैया।।
मेरे साँसों के पिजरें में
घड़ी-घड़ी बोले घड़ी-घड़ी बोले।।
बोले बोले रे राम चिरैया रे।
बोले रे राम चिरैया रे।
न कोई खिड़की न कोई डोरी,
न कोई चोर करे जो चोरी
ऐसा मेरा रामैया रे।।
बोले बोले रे राम चिरैया रे।
बोले रे राम चिरैया रे।
उसी की नैया वही खिवैया
बह रही उसकी लहरैया
चाहे लाख चले पुरवैया रे।।
बोले बोले रे राम चिरैया रे।
बोले रे राम चिरैया रे।।[5]

इस प्रकार से लोक संगीत में भगवान श्रीराम के बहुआयामी व्यक्तित्व की झलक दिखाई देती है जो जीवनपर्यन्त आम जनजीवन में व्याप्त है।

सन्दर्भ-

1. डॉ0 श्याम परमार के अनुसार
2. लोकगीतों में राम का स्वरूप एवं आस्था, साहित्य अमृत (इन्टरनेट पत्रिका)
3. वही
4. लोकगीत, कविता कोश (बेबसाइट)
5. कवि आर्न्त, भजन माला, कविता कोश (बेबसाइट)

नायक और नायिका के रुप मे चित्रित राधा-कृष्ण

डॉ0 मीरु दुसेजा

चित्रकला विभाग

कन्या महाविद्यालय, आर्य समाज, भूड़, बरेली

समकालीन सामाजिक तथा राजनैतिक स्थिति का कला पर सदैव प्रभाव पड़ा है और प्रत्येक कला समकालीन साहित्य दर्शन तथा लोक भावना से प्रभावित हुई है। बुद्ध धर्म की अवनति के बाद बारहवी शताब्दी में रामानुजाचार्य ने वैष्णव सम्प्रदाय की स्थापना की। पन्द्रहवी शताब्दी में श्री बल्लभाचार्य ने वैष्णव धर्म के उपदेश दिए। उनके अनुयाईयों में सूरदास, मीरा, केशवदास, जयदेव तथा बिहारी प्रमुख है जिनकी रचनाओं को उत्तरी भारत में बहुत लोकप्रियता और सम्मान प्राप्त हुआ। इन कवियो ने भगवान को जीवन में खोजने की चेष्टा की और उन्होने विष्णु के विभिन्न रुपों के विशेषतया कृष्ण व राम को अपना आराध्य देव माना। परन्तु कृष्ण को राम से अधिक महत्व प्राप्त हुआ।

मध्यकालीन वैष्णव सम्प्रदाय की ज्ञान ज्योति और उज्जवलता ने कृष्ण को अधिक महत्वपूर्ण देवता बना दिया और भागवत पुराण वैष्णवों का धर्म ग्रन्थ बन गया। भागवत के आधार पर अनेक कवियों और कलाकारों ने रचनायें की।

कृष्ण का जीवन भारत के सरल साधारण लोक जीवन से अत्यधिक सनिकट है इसी कारण कृष्ण भारतवर्ष में बहुत प्रिय देवता माने जाते है। वास्तव में कृष्ण का नटखट बाल्यकाल और यौवन का जीवन कृषको, ग्वालो, गोपियों, पशुओं और पक्षियों से सम्बन्धित था और गरीब जनता से बहुत मिलता जुलता था, वैष्णव धर्म राजस्थान तथा उत्तरी भारत के मैदानी भाग तक ही सीमित न रहा बल्कि पहाड़ी क्षेत्रों में भी पहुँच गया और पहाड़ी चित्रकार की प्रेरणा का मुख्य आधार बना।

विश्वकला के मानचित्र में राजस्थान की चित्रकला को एक विशिष्ट स्थान प्राप्त है। राजस्थानी शैली के चित्रों में वैष्णव सम्प्रदाय की भक्ति भावना पूरी तरह परिप्लावित है यही कारण है कि चितेरो ने जयदेव, चण्डीदास, विद्यापति, सूरदास तथा मीराबाई के काव्य से प्रेरणा ली और इन शब्दो की आत्मा को अपनी तूलिका से जीवन्त किया। एक अन्य लोकप्रिय विषय था "रागमाला" जिसमें विविध प्रकार के राग और रागनियो को मानवीय रुप दिया गया। नायक-नायिका भेद के माध्यम से स्त्री पुरुष के शाश्वत सम्बन्धों को रंग और तूलिका का सहारा लेकर चित्रित किया गया। सारी राजपूत चित्रकला को अगर एक शब्द में व्यक्त करना हो तो कहा जायेगा "शाश्वत प्रेम"।

मेवाड़ शैली के चित्रों में कृष्ण के चित्रण को प्रमुखता दी गयी है। प्रायः नायिका भेद राग-रागिनी चित्रावली या रागमाला चित्रों में कृष्ण और राधा को हीं आदर्श प्रेमी तथा प्रेमिका का रुप दिया गया है। कृष्ण तथा गोपियो की लीलाओं के चित्रों में भी कृष्ण को एक महान प्रेमी का रुप दिया गया है। राजस्थानी चित्रकारों ने तत्कालीन कवियों की रचनाओं पर आधारित चित्र भी बनायें जिनमें 'नायिका भेद' को प्रमुखता दी गयी और वैष्णव धर्म के प्रभाव के कारण इन चित्रों में नायक तथा नायिका साधारण पुरुष या स्त्री ना होकर कृष्ण और राधा जैसे आदर्श

प्रेमी है। केशवदास की 'रसिक प्रिया' मेवाड़ के चित्रकारों का प्रिय विषय बनी। मेवाड़ शैली की 'रसिक प्रिया' की सचित्र प्रति बीकानेर के दरबार संग्रह में सुरक्षित है। जयदेव कृत 'गीतगोविन्द को भी इस समय लोकप्रियता प्राप्त हुई 'गीतगोविन्द' की अनेक सचित्र प्रतियां तैयार की गई। 'गीतगोविन्द' के आधार पर बने कुछ चित्र प्रिंस ऑफ वेल्स म्यूजियम, बम्बई में सुरक्षित है।

बल्लभाचार्य के अनुयाइयों में सूरदास का विशेष स्थान है। सूरदास के श्याम, जिनका जीवन सामान्य जन का जीवन है, जो ग्वाल के रुप में दिखाई पड़ते है चित्रकार ने सूरदास कृत 'सूरसागर' के पदो में रमकर भगवान कृष्ण को अपने समीप पाया और उसने 'सूरसागर पदावली' के आधार पर कृष्ण जीवन सम्बन्धी अनेक चित्रों का सृजन किया। सूरकृत 'सूरसागर' के आधार पर बने कुछ सचित्र पृष्ठ श्री गोपी कृष्ण कनेरिया संग्रह में सुरक्षित है। जयसिंह (1680-1698 ई0) के समय में कुछ भागवत पुराण के सचित्र पृष्ठ प्राप्त है। जिनमें कृष्ण गोवर्द्धन पर्वत उठाये हुए या 'गिरि गोवर्द्धन' नामक चित्र कला भवन संग्रह और 'कृष्ण दावानल को ग्रस्ते हुए' डॉ0 मोती चन्द्र के निजी संग्रह में सुरक्षित है। यह दोनों चित्र अनुमानितः 1680 ईसवी से 1700 ईसवी के मध्य के है। डॉ0 मोती चन्द्र के संग्रह का एक अन्य चित्र 'यमुना तट पर ग्वालो के साथ लीला' (1700 ई0) मेवाड़ स्कूल के अन्तिम समय की झाँकी है।

बूँदी शैली के कुछ सुन्दर चित्रों के उदाहरण प्राप्त है- जिनमें 'पीठिका पर नायक और नायिका' 1682 ई0 श्री0जी0डी0 गुजराती संग्रह बम्बई, प्रेमी और प्रेमिका द्विज का चाँद देखते हुए' (1689 ई0 - प्रिंस ऑफ वेल्स म्यूजियम बम्बई) तथा एक चित्र 'राधा और कृष्ण का मिलन' (अठारवी शताब्दी) जो देसाई संग्रह बम्बई में है, भावात्मक सौन्दर्य के कारण उत्तम है। बूँदी शैली में राग-रागनियों, नायिका-भेद और 'भागवत पुराण' पर आधारित कृष्ण लीला के चित्र बनाने की परम्परा सामान्य रुप से चल ही रही थी, अतः बूँदी का चित्रकार भी इस ओर प्रवृत्त हुआ।

किशनगढ़ के चित्रकारों ने कृष्ण लीला से सम्बन्धित चित्रों की रचना की। यह चित्र हिन्दी साहित्य के कृष्ण और राधा को तत्कालीन प्रेमी और प्रेमिकाओं का रुप देने की चेष्टा की गई है। राजा सावन्त सिंह बल्लभाचार्य सम्प्रदाय के अनुयाई व एक अच्छे कवि थे। उन्होनें 'बिहारी चन्द्रिका' लिखी और अपना नाम नागरीदास रखा। परन्तु जहाँ एक ओर सावन्त सिंह के जीवन में कृष्ण प्रेम था वहाँ शीघ्र ही एक सुन्दरी आ बसी। सावन्त सिंह नागरीदास उस पर न्योछावर हो गये और उसे प्यार से 'बनी-ठनी' कहने लगे। उन्होने अपनी बनी-ठनी में राधा की छवि देखी और स्वंय को कृष्ण मानकर राधा उर्फ बनी-ठनी की स्तुति में एक से बढ़कर एक नायाब भक्ति पदों की रचना की। इन दोनों का प्यार सचमुच निश्छल, निष्कपट एवं अलौकिक था। यह सुकोमला विश्व में 'भारतीय मोनालिसा' के नाम से सहज ही प्रसिद्ध हो गयी। बनीठनी तथा नागरीदास को एक चित्र में एक साथ चित्रित किया गया है।

प्रेमी और प्रेमिकाओं के चित्र किशनगढ़ में अपने ही ढंग से बनाये गये हैं प्रायः नायक तथा नायिकाओं को सुन्दर नौकाओं पर जल विहार करते दिखाया गया है। इस प्रकार के चित्र उदाहरणों में 'लाल बाजरा' तथा 'प्रेम की क्रीड़ा' सुन्दर है। नायिका भेद पर आधारित चित्रों को अधिक लोकप्रियता प्राप्त हुई। नागरी दास के समय में राधा के रूप में बनीठनी को चित्रित किया गया। कृष्ण और राधा के तत्कालीन प्रेमी और प्रेमिकाओं का रूप देने की चेष्टा की गयी है। इसका कारण यह भी हो सकता है कि नागरीदास ने बनीठनी के प्रति कृष्ण और राधा के रूप में अपने प्रेम की अभिव्यक्ति की। विशेष रूप से किशनगढ़ के चित्रकार ने कृष्णलीला के चित्र बनाये हैं। 'गीतगोविन्द',' भागवतपुराण' तथा 'बिहारीचन्द्रिका' पर आधारित चित्रों की रचना की गई। यह चित्र हिन्दी साहित्य के आधार पर बनाये गये, परन्तु

इनमें राधा और कृष्ण का अनोखा नवीन रूप है। इस प्रकार के चित्रों में 'सांझलीला', 'कृष्ण राधा का दुपट्टा पकड़ते' तथा 'कृष्ण गोपियों के साथ नृत्य करते हुये' आदि चित्र सुन्दर उदाहरण हैं।

जयपुर शैली पर वैष्णव सम्प्रदाय का गहरा प्रभाव पड़ा। जयपुर शैली के चित्रों में कृष्ण से सम्बन्धित चित्रों की संख्या अधिक है और कृष्ण की विभिन्न लीलाओं, रास तथा बाल क्रीड़ाओं के अनेक चित्र बनाये गये है। दूसरी ओर नायिका-भेद पर आधारित विषयों पर भी चित्र बनाये गये। इन चित्रों में परमात्मा का प्रतीक कृष्ण को माना गया है। एक चित्र में भगवान कृष्ण को गोवर्धन धारण किये अंकित किया गया है। कृष्ण के चारों ओर गायें, गोपियां तथा ग्वाल-बाल है जो गोवर्धन पर्वत के नीचे खड़े हैं और गोवर्धन पर्वत को भगवान कृष्ण ने उंगली पर उठा रखा है। पर्वत छत्र का कार्य कर रहा है। ऊपर आकाष में स्वर्ग के देवता तथा बादल है और वर्षा का भीषण प्रभाव है। चित्र में यमुना का किनारा यथार्थ बनाया गया है आकाष में ऐरावत पर इन्द्र स्वयं भगवान कृष्ण की पूजा करने आ रहे हैं।

दूसरा चित्र रासमंडल का है जिसके मध्य में मानव-आत्मा और परमात्मा का प्रतीक भगवान कृष्ण और राधिका का युगल है। इस युगल के चारों ओर गोपियां कई मण्डलाकारों में नृत्य कर रही हैं। इस चित्र को आकाषीय दृष्टि से बनाया गया है। दिव्य युगल में गति है तथा मुद्रायें लावण्यपूर्ण हैं। आकाष में देवगण पुष्पों की वृष्टि कर रहे हैं। एक अन्य बड़े आकार के चित्र में गोपियों को चित्रित किया गया है। इस चित्र की मूल प्रति जयपुर पोथीखाने में सुरक्षित है।

बुन्देला शैली में 'रागमाला चित्रावली', 'रसराज' (मतिराम 1643 ई0), 'बिहारी सतसई' तथा 'कृष्ण लीला' पर आधारित चित्र बने हैं। जिनमें दतिया-षैली की अपनी विशेषता है इस पैली के अनेक चित्र उदाहरण उत्तरी भारत के अनेक संग्रहालयों में सुरक्षित हैं।

केशव, बिहारी तथा मतिराम आदि कवियों की कविता को चित्रमय लिपि प्रदान की गई है। अधिकांश चित्र मध्यकालीन हिन्दी साहित्य और नायिका भेद सम्बन्धी विषयों पर आधारित हैं, बुन्देला शैली में अनेक प्रकार की नायिकाओं को चित्रित किया गया है। परन्तु नायिका भेद सम्बन्धी चित्रों में नायक और नायिका को सामान्य मनुष्य के रूप में बनाकर कृष्ण और राधा का रूप दिया गया है।

मतिराम लिखित रसराज पर आधारित एक चित्र में कृष्ण एक कुन्ज में बैठे हैं और राधिका मुख्य भूमि में एक आम के वृक्ष के सहारे खड़ी है और यह सोच विचार कर रही है कि प्रीतम कृष्ण के पास जाकर अपना विरह षान्त करना चाहिये ।

भारतीय चित्रकारों ने चराचर में दिव्य अनुभूति, तन्मयता और प्रकृति से तदात्म प्रदर्शित किया है इस दृष्टिकोण से रागिनी तथा बारहमासा के चित्र केवल चित्रात्मक कल्पना ही नहीं है। बल्कि इन चित्रों में चित्रकार ने पुष्ट रेखांकन और उत्तेजक रंगों के द्वारा प्रकृति में अपनी आत्म विस्मृति का परिचय दिया है।

बीकानेर शैली में भागवत और रसिकप्रिया की प्रतियां उपलब्ध हैं। इसके अतिरिक्त रागमाला तथा बारहमासा सम्बन्धी सुन्दर चित्र बनाये गये। इसमें गोवर्धन धारी श्री कृष्ण का सुन्दर चित्रण है।

राजस्थानी चित्रकला विषयवस्तु की दृष्टि से संसार की सभी चित्र पैलियों की तुलना में सलोनी व अनोखी है। राधा कृष्ण की विभिन्न लीलाओं तथा भागवत की विभिन्न कथाओं रागरागिनी, बारहमासा तथा नायक-नायिका भेद का सुन्दर चित्रण किया है। नायक नायिका चित्रण के लिये रीति कालीन काव्य देव, बिहारी, मतिराम आदि के काव्य ने अच्छी भूमिका निभाई है। मानिनी प्रीतम से मान कर बैठना, अभिसारिक श्रृंगार करके नायिका लुक छिपकर प्रिय मिलन को जाती हुई, उत्कंठिता सेज अथवा मिलन स्थल को पुष्प या पत्रों से सजाये प्रियतम प्रतीक्षा में, स्वाधीन पतिका नायक नायिका

का श्रृंगार करते हुये, मुग्धा आदि नायिका भेदों को चित्रित किया है। बारामासा चित्रों में फाल्गुन, चैत, बैसाख, जेठ, आसाढ़, सावन, भादों आदि महीनों के प्राकृतिक सौन्दर्य से सुखी या दुखी नायिका के मानसिक भावों का चित्रण प्रस्तुत किया गया है।

पहाड़ी राज्यों की स्थापना सातवीं और आठवीं शताब्दी में राजपूत युवराजों ने अपने बाहुबल से की और यहां पर छोटे-छोटे राज्य स्थापित किये। मैदानी क्षेत्र में अफगानों तथा मुगलों का मुसलमान साम्राज्य स्थापित हो गया। अतः सत्रहवीं शताब्दी में वैष्णव धर्म का विशेष विकास पहाड़ी प्रदेश में हुआ और यहां हिन्दू धर्म की सुरक्षा भी हुई। वैष्णव सम्प्रदाय ने बसोहली को भावात्मकता प्रदान की। दिल्ली के निराश्रित चित्रकारों का पहला दल जम्मू और पंजाब के पहाड़ी राज्यों में जाकर बसा। अनुमानतः इन चित्रकारों ने बसोहली शैली को जन्म दिया और वैष्णव सम्प्रदाय की अभिव्यक्ति चित्रों के रूप में होने लगी। ईसवी के पष्चात बसोहली षैली का स्थान स्थानीय राज्यों की निजी शैलियां ग्रहण करने लगी। 1747 ई0 में अहमद शाह अब्दाली से आक्रमण के पश्चात दिल्ली राज्य का जब विध्वन्स हो गया, तो हिन्दू एवं मुसलमान चित्रकार दिल्ली छोड़कर पुनः पहाड़ी राज्यों की ओर चले गये। चित्रकारों की यह दूसरी धारा कांगड़ा में पहुंची जिससे कांगड़ा शैली का विकास हुआ और दोनों शैलियां साथ-साथ विकसित होती रही।

बसोहली शैली में चित्रकार ने राधा और कृष्ण के प्रेम में मनुष्य की हृदयगत भावनाओं को बड़े मार्मिक ढ़ंग से अभिव्यक्त किया है। जयदेवकृत 'गीत गोविन्द' काव्य रचना पर भी सुन्दर चित्र बनाये गये। परवर्ती चित्रकारों ने बारहमासा चित्रावलीयो के निर्माण में विशेष रुचि प्रदर्शित की। इन विषयों के अतिरिक्त बसौली शैली में रागमाला पर आधारित चित्र भी प्राप्त होते है। इन रागमाला चित्रों व बारहमासा चित्रों में राधा और कृष्ण को नायक तथा नायिका का रुप प्रदान किया गया है।

कांगड़ा शैली के प्रमुख केन्द्र गुलेर, नूरपुर, तीरासुजानपुर तथा नादौन थे। कांगड़ा के राजा संसारचन्द की वैष्णव सम्प्रदाय की ओर विशेष रुचि होने के कारण कृष्ण के प्रेम और श्रृंगार की भावना कलाकारों के लिए एक मुख्य प्रेरणा थी। कृष्ण को प्रतीक मान कर नाना सांसारिक तथा श्रृंगारिक लीलाओं को अंकित किया गया है। बिहारी तथा महाकवि केशवदास की रचनाओं को भी चित्रबद्ध किया गया। इसके अतिरिक्त नायिका भेद का चित्रण भी कांगड़ा शैली के चित्रकारों ने तीन प्रकार की नायिकाओं 1. स्वकीया (स्वंय की) 2. परकीया (दूसरे की) तथा 3. सामान्य (किसी की भी) का अंकन किया है। इन नायिकाओं की आठ अवस्थाएं मानी गई हैं जो इस प्रकार है नायिका के यह आठों रुप काँगड़ा शैली के चित्रों में उपलब्ध हैं–

1. स्वाधीनपतिका वह नायिका है जिसे उसका योग्य स्वामी प्रेम करता है और उससे प्रेम करने के लिए बाध्य है और उसका जीवन -साथी है। इस प्रकार की नायिका काँगड़ा शैली के चित्रों में राधा के रुप में अंकित की गयी है। अनेक चित्र उदाहरणो में राधा एक चौकी पर बैठी है और कृष्ण उसके पैर धो रहे है या कुँज में बैठे राधा की चोटी गूंथ रहे है या राधा के चरण दबा रहे है इन चित्रों मे राधा को आत्मअभिमान और आत्मविश्वास से पूर्ण दिखाया गया है।

2. उत्का वह नायिका है जिसके प्रेमी ने निमंत्रण के निश्चित समय पर ना आकर अपने विश्वास को खोया है। ऐसी नायिकाओं को नदी किनारे, वृक्ष के नीचे, धरती पर पत्तो के ऊपर पुष्पो की बिछी सेज पर खड़ा या बैठा अंकित किया गया है।

3. वासकास्या वह नायिका है जो अपने प्रेमी या स्वामी के आगमन की बाट द्वार की सीढ़ीयों पर जोहती है यह नायिका कांगड़ा के चित्रों में अंकित की गई है घर में नायक के स्वागत हेतु तैयारी की जा रही है, प्रेमी एक सुन्दर नौका में नदी की दूसरी ओर एक सारस के जोड़े के पास दिखाया जाता है।

4. अभिसन्धिता वह नायिका है जो अपने प्रियतम के प्रेम विश्वास नहीं करती परन्तु विरह या अनुपस्थिति से दुखी रहती है। इस प्रकार की नायिकाओं के उदाहरण के लिए कृष्ण और राधिका का झगड़ा लिया गया है।

5. खण्डिता वह नायिका है जिसका प्रेमी रात्रि को निश्चित समय निमंत्रण पर पहुंचने में असफल रहता है तथा दूसरी युवती के साथ पाया जाता है।

6. प्रेसित-पतिका वह नायिका है जिसका पति सदैव समय-समय पर व्यापार ग्रस्त रहता है। गुलेर शैली के एक चित्र में यह नायिका इस प्रकार दिखाई गई है- आकाश में बादल सारस और बगुले देखकर उत्सुक नायिका छज्जे पर जाती है, इस चित्र में प्रेमी की अनुपस्थिति का प्रतीक एक मोर भी चित्रित किया गया है और वर्षा आरम्भ होने वाली है। अतः नायिका विहल होकर सर उठाये भगवान से अपने प्रियतम के सकुशल आने की प्रार्थना कर रही है।

7. चित्रलब्धा वह नायिका है जो व्यर्थ ही रात्रिभर अपने प्रेमी के आगमन की प्रतिक्षा करती है। इस नायिका को एक वृक्ष के नीचे पत्तियों की सेज के एक कोने पर अंकित किया जाता है।

8. अभिसारिका वह नायिका है जो अपने प्रेमी से मिलने के लिए रात्रि में बाहर जाती है। यह नायिका कांगड़ा के चित्रकार का प्रिय विषय रही है। कृष्ण अभिसारिका और शुक्ल अभिसारिका काँगड़ा शैली के चित्रों में क्रमशः अंधेरी रात्रि और चांदनी रात्रि में प्रेमी से मिलने के लिए जाती हुई अंकित की गई है। काँगड़ा शैली के चित्रों में कृष्ण अभिसारिका नीला आँचल डाले अपने प्रेमी को ढूंढने जा रही है, अंधेरी रात्री में काले बादलो में दामिनी चमक रही है ऐसे भयानक वातावरण में भी निर्भीक नायिका (आत्मा), अपने प्रेमी की तृप्ति के लिए अपने प्रेमी (परमात्मा) को खोजने के लिए निकलती है।

श्रृंगार रस की अभिव्यक्ति के लिए परम्परागत काव्य में प्रचलित प्रतिकात्मक पृष्ठभूमि का सहारा लिया जाता था और इस प्रकार के समस्त चित्रों के लिए कृष्ण सम्बन्धी वैष्णव सम्प्रदाय एक शक्तिशाली प्रेरणा बना हुआ था। चित्रकार ने नायक (कृष्ण) और नायिका (राधा) के प्रेम में मनुष्य की हृदयगत भावनाओं को बड़े ही मार्मिक ढ़ंग से अभिव्यक्त किया है।

संदर्भग्रंथ -

1. भारतीय चित्रकला का इतिहास, डॉ0 अविनाश बहादुर वर्मा
2. कला विलास, डॉ0 आर0 ए0 अग्रवाल
3. भारतीय चित्रकला शोध संचय, डॉ0 शुकदेव श्रोत्रिय
4. भारतीय चित्रकला का इतिहास, डॉ0 कादरी

"नारी के प्रति राम का दर्शन"

डॉ0 प्रीति श्रीवास्तव

असिस्टेन्ट प्रोफेसर (समाजशास्त्र विभाग)
पी0बी0पी0जी0 कालेज, प्रतापगढ़ सिटी, प्रतापगढ़

प्राचीन काल से ही नारी की इन्सान के रूप में देखने के प्रयास सम्भवतः कम ही हुये हैं। पुरुष के बराबर स्थान एवं अधिकारी की माँग ने उसे अत्यधिक छला है। अतः वह आज तक 'मानवी' का स्थान प्राप्त करने से भी वंचित रही है।

नारी का सम्मान करना एवं उसके हितों की रक्षा करना हमारे देश की सदियों पुरानी संस्कृति है। यह एक विडम्बना ही है कि भारतीय समाज में स्त्रियों की स्थिति विरोधाभासी रही है। एक तरफ तो उसे शान्ति के रूप में प्रतिष्ठित किया गया तो दूसरी तरफ उसे 'बेचारी अबला' भी कहा जाता है। इन दोनों ही अतिवादी धारणाओं से नारी के स्वतन्त्र विकास में बाधा पहुँची है।

सदियों से ही भारतीय समाज में नारी की अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका रही है। उसी के बलबूते पर भारतीय समाज खड़ा है। नारी ने भिन्न-भिन्न रूपों में अत्यधिक महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। चाहे वह सीता हो, झाँसी की रानी, इन्दिरा गाँधी हो या सरोजिनी नायडू हों। किन्तु फिर भी वह सदियों से ही क्रूर समाज के अत्याचारों एवं शोषण का शिकार होती आयी हैं। उसके हितों की रक्षा करने के लिए एवं समानता तथा न्याय दिलाने के लिए संविधान में आरक्षण की व्यवस्था की गयी है। महिला विकास के लिए आज विश्व भर में "महिला दिवस" की माँग की जा रही है।

इतना सब होने पर वह प्रतिदिन अत्याचारों एवं शोषण का शिकार हो रही है। मानवीय क्रूरता एवं हिंसा से ग्रसित है। यद्यपि वह शिक्षित है, हर क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है तथापि आवश्यकता इस बात की है कि उसे वास्तव में सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक न्याय प्रदान किया जाय। समाज का चहुमुखी वास्तविक विकास तभी सम्भव होगा।

दूसरों के लिए आदर्श बनने के लिए व्यक्ति को स्वयं बहुत त्याग करने पड़ते हैं, जैसे सीता ने किये। राम और सीता ने जीवन को दूसरों के लिए जिया। राम जानते थे कि धोबी द्वारा किया गया दोषारोपण गलत है परन्तु उन्होंने उसका प्रतिरोध न करके प्रजा की संतुष्टि के लिए सीता का त्याग कर दिया।

राम की मर्यादा पर कोई आँच न आये इसके लिए सीता ने पति द्वारा दिये गये वनवास को स्वीकार किया और बाल्मीकि के आश्रम में रहने लगी। अब न राम के समान शासक है और न बाल्मीकि के समान गुरू। हम सभी जानते हैं कि सीता के जीवन का सम्पूर्ण आनन्द पति में ही निहित था।

पति की सहचरी बनी वह चित्रकूट की कुटिया में भी राजभवन का सुख पाती थी। **"मेरी कुटिया में राजभवन मन माया"** सीता का यह कथन अपने पति श्री राम के प्रति अगाध आस्था को दर्शाता है। सीता अपना और राम का जन्म-जन्म का नाता मानती थी। आज भी भारतीय नारी पति के साथ अपना जन्म-जन्म का नाता मानती हैं।

जब मैं सीता के बारे में सोचती हूँ तो एक बात मेरे दिमाग में आती है, वह है हमारी सामाजिक परिस्थितियों में रामराज्य से अब तक का बदलाव, उस समय की नारी को पतिव्रता और कर्तव्य परायण जरूर होना चाहिए था। सीता इस गुणों पर खरी उतरी थी। वह एक सुपर वूमेन थी।

मानव समाज की सबसे पुरानी और सबसे व्यापक गलतियों में से एक मुख्य गलती यह है कि आज तक भारतीय नारी के साथ समानता व न्याय का व्यवहार नही हुआ है। भारतीय संविधान निर्माताओं ने संविधान के विभिन्न प्रावधानों के माध्यम से यह सुनिश्चित करने का निश्चय किया कि सभी को सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक न्याय प्राप्त हो ताकि प्रत्येक भारतवासी को स्वन्त्रता के साथ-साथ अवसर की समानता का आनन्द भी मिल सके।

भारत के स्वतन्त्रता संग्राम में महिलाओं ने बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया तथा अनेक यातनायें एवं अत्याचार सहे इसलिए संविधान निर्माताओं ने यह जरूरी समझा कि राष्ट्र को मजबूत, संगठित एवं प्रगतिशील बनाने के लिए महिलाओं, युवतियों एवं बच्चों की सुरक्षा संरक्षण एवं उन्नति के लिए विशेष व्यवस्था की जाए ताकि उनका पिछड़ापन समाप्त हो सके।

एक स्त्री जितनी तन्मयता से परिवार को बनाती है, बच्चों को पालती है, उनके जीवन को संवारती है, पति की खुशी के लिए रात-दिन पिसती है, उनकी सफलता के लिए दुआयें माँगा करती है, इतनी ही तन्मयता से अपने जीवन को संवारने में लगे तो शायद पुरुष से कहीं आगे हो।

"हम औरतें प्रेम को जितनी गम्भीरता से लेती हैं, उतनी गम्भीरता से यदि अपना काम लेती तो अच्छा रहता, जितना आँसू है उससे बहुत कम पसीना भी यदि बहा सकू तो पूरी दुनिया जीत लूँगी।"

कुछ लोगों का विचार है कि स्त्री होना ही अपराध है जहाँ स्त्री को कमजोर सावित करना है वहीं समाज में स्त्री के स्वाभिमान को जागृत करने वाले लोग भी है। जैसा कि कहा गया है -

"स्त्री होना कोई अपराध नहीं पर नारीत्व की आँसू भरी नियति स्वीकारना बहुत बड़ा अपराध है। अपनी नियति को बदल सको तो वह एकलव्य की गुरुदक्षिणा होगी।"

तुलसी पर आरोप है कि उन्होंने नारी को 'ताड़न' की अधिकारी कहा है। इस बात को कितने ही लोगों ने अपने लेखों में उद्दृत किया है और नारी जाति को पॉव की जूती सिद्ध करने के लिए बार-बार तुलसी को उद्दृत किया है। फलस्वरूप समाज में यह धारणा रूढ़ हो गयी कि तुलसी नारी जाति के शत्रु थे। सचमुच इस धारणा से नारी जाति पर कई प्रकार के अत्याचार बढ़े।

यदि रामायण की इस चौपाई के प्रचलित अर्थ पर ध्यान दें तो पता चलता है कि ढोल, गॅवार, शूद्र पशु और नारी तो दण्ड के ही पात्र हैं। इसलिए समुद्र अपने अपराध की क्षमा न माँग कर बल्कि स्वयं को और दण्डित करने के लिए कह रहा है।

स्वयं राम ने भी इस याचना को स्वीकार किया। यदि यहाँ समुद्र नारी को ताड़ना की अधिकारी कहता तो राम जैसा नीति मर्मज्ञ मर्यादा पुरुषोत्तम उसका उसी समय नीति संगत विरोध करते। इसलिए यही उचित है कि समुद्र ने भी ताड़ना की बात न कहकर तारना की बात कही। तुलसीदास जी का भी भाव यही है लेकिन हमने ही तारना के स्थान पर ताड़ना शब्द प्रयुक्त कर लिया। जिसमें कुछ स्वार्थी लोगों की और संस्कृति नाशकों की सोच भी हो सकती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. स्त्री के प्रति दृष्टिकोण - Gadyakosh.org.
2. https: hi.m.wikiquote.org.
3. Kalrajmishra.com. Articles.
4. en.bharatdiscovery.org – India
5. https: books.google.co.in

रामरंग मय रामरंग

(पंडित रामाश्रय झा "रामरंग" जी की रचनाओं में राम)

डॉ. राम शंकर

असिस्टेन्ट प्रोफेसर,
का0हि0वि0वि0, वाराणसी

भगवान राम का पतित पावन चरित्र केवल उनके अनुरागियों का ही नहीं वरन् भगवान से विमुख अधम से अधम एवं महादुराचारियों का भी मंगल करने वाला है। कहा गया है-

पाई न केहि गति पतित पावन राम भजि सुनु सठ मना।
गणिका अजामलि व्याघ गिद्ध गजादि खल तारे घना।।

यद्यपि भगवान का नाम और चरित्र अनन्त है, यथा-

राम अनन्त अनत गुन, अमित कथा विस्तार।
सुनि अचरज न मानिहैं, जिनके विमल विचार।।

भगवान की इस महिमा को जानते हुए भी भगवन्न अनुरागी कवियों ने भगवान के चरित्र का अनेक प्रकार से वर्णन किया है, यथा-

सब जानत प्रभु प्रभुता सोई। तदपि कहे बिन रहा न कोई।।
कलप भेद हरि चरित सुहाये। भांति अनेक मुनि सब गाये।।

परन्तु भगवान श्री राम के चरित्र का काव्य-रूप में वर्णन सर्वप्रथम आदिकवि महर्षि वालमिकि ने किया था। इसके उपरान्त अनेक भक्त कवियों ने "वाल्मिकि रामायण" के आधार पर ही अपनी-अपनी बुद्धि व विवके के अनुसार अनेक रामायण कश्तियों की रचना की है। जैसे आध्यात्म रामायण, कृत्तिवास बंगला रामायण, मैथिलि रामायण, कम्ब रामायाण, साकेत इत्यादि अनेक रामायण ग्रन्थों का आविर्भाव हुआ, परन्तु इन रामायण ग्रंथों में से महर्षि वाल्मीकि और महात्मा तुलसीदास कृत रामायण मुख्य हैं। विशेष रूप से रामचरित मानस का भारतीय जनमानस पर जो प्रभाव है, वह अकथनीय है। स्वर्गीय विद्वान सन्त स्वामी करपात्री जी महाराज का कहना था कि आज की इस विषम परिस्थिति में भारतीय संस्कृति की रक्षा करने में रामचरित मानस का अभूतपूर्व योगदान है।

भारतीय संगीत एवं साहित्य में समय-समय पर देश काल परिस्थितियों का प्रभाव देखने को मिलता है जिसकी भिन्नताएं क्रमशः वैदिक काल, मुगल काल, भक्ति काल एवं आधुनिक काल के सांगीतिक एवं साहित्यिक रचनाओ में देखने को मिलता है साहित्य का हनन सबसे ज्यादा मुगल काल में हुवा जिसे अगर साहित्य का अतिक्रमण कहे तो अतिसियोक्ति ना होगी।

जहाँ शास्त्रीय संगीत की गायन शैली में अधिकतर रचनाओं (बंदिशों) में जो सास-बहू, ननद-भावज, जेठानी-देवरानी की नोंक-झोंक तथा पति-पत्नी की लड़ाई व पिया परदेश गये नहीं आये यौवन यूँ ही बीता जाय, सूनी सेजरिया मोहें नींद न

आये, पैंया परूँ पलंगा ना चढ़ूँगी इत्यादि इन अश्लील कविताओं एवं भावनाओं से युक्त रचनाओं के गायन की जो परम्परा पूर्ववत् बनी हुई है जिसे सभ्य समाज के लोग सुनना पसन्द नहीं करते तथा जो संगीत ऐसी विद्या के लिये उपयुक्त नहीं दिखता, इन्हीं अशोभनीय काव्यों से गायन शैली को यथासम्भव मुक्ति दिलाने के लिये रामचरित मानस को आधार मानकर बीसवी शताब्दी के महानायक उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत जगत के संगीत ब्रह्मर्षि राम भक्त पंडित रामाश्रय झा "रामरंग" जी ने रागों कि सूक्ष्मतम व्याख्या, एवं राग रचनाओ साथ - साथ सांगीतिक साहित्य को जो उचाई प्रदान किया वह अतुलनीय है । उनके कृतियों में से एक कृति संगीत रामायण भी है। श्री रामचरित मानस के सातों काण्डों के प्रत्येक प्रसंग को विशुद्ध शास्त्रीय संगीत की ध्रुवपद एवं ख्याल-काव्य-रचना-शैली में रचकर उसे विभिन्न तालों में निबद्ध किया गया है। गायन कला की सहजता के साथ-साथ रंजकता से परिपूर्ण एवं श्री राम चरित माानस से सम्बन्धित होने के कारण ये रचनायें लौकिक तथा पारलौकिक दोनों दृश्टियों से प्रदर्शन के लिये उत्तम तथा लिपिबद्ध होने के कारण सभी छोटे-बड़े संगीतज्ञों के लिये सहज व सदुपयोगी हैं।

श्री गोस्वामी तुलसीदास की वन्दना

राग-नट-त्रिताल (मध्यलय)

स्थाई : वन्दौं चरण कमल तुलसी के, जो महेश मानस रचि राखे, सो किये सुलभ सभी के।

अन्तरा : रामचरित गीतावलि दीन्हें कवितावली सुनीके विनय पत्रिका दियो
''रामरंग'' जो अति प्रिय सिय पी के।।

राग-भीमपलासी-एकताल (मध्य लय)

स्थाई : शुभ दिन शुभ घड़ि प्रगट भये कृपाल, कौशिला के हितकारी।

अन्तरा : दोउ कर जोरे जननी निहोरे, धरिये बाल रूप हरि भक्तन सुखकारी।।

राग-बिलासखानी तोड़ी-एकताल (विलम्बित)

स्थाई : धन-धन भाग तेरो री माई, सुत तैने पायो जगत के नाथ।

अन्तरा : धन नगरी धन लोग नगर के , ''रामरंग'' जेहि हरि कीन्हे सनाथ।

राग-बिलासखानी तोड़ी-एकताल (मध्यलय)

स्थाई : जुगन जीवे लाल चारो, तेरो री माई, मोहे देहो दान दरशन को।

अन्तरा : राम लखन भरत रिपुदवन चरण, ''रामरंग'' चाहे परसन को।

केवट प्रसंग

राग-चारूकेसी-रूपक(विलम्बित)

स्थाई - हे रघुवर राजा नइया न चढ़ाऊँ तोहे पग धोये बिना।

अन्तरा - पाहन नारि भई राउर पग धूरी लगी, 'रामरंग' तरनी बने घरनी मुनि पग धोये बिना।

राग-चारूकेसी-एकताल (मध्यलय)

स्थाई - निहारे प्रभु लखन सिय, सुनि वैन अटपट, कहेउ पग पखारिये।

अन्तरा - पग धोय पान कियो, आपु सहित परिजन, पितर पार करि कहयो चरण नाव राखिये।।

राग-चारूकेसी-त्रिताल (विलम्बित)

स्थाई - उतरे प्रभु पार सुरसरि धार के, मणि मुदरी सिय दीन्ही उतार के।

अन्तरा - कहि कहि हारे लखन सिय रघुराई 'रामरंग' केवट बोलेउ वचन सम्हार के।।

राग-चारूकेसी-एकताल (मध्यलय)

स्थाई - हमरी तुम्हरी राजन जाति पाति केवट की विनती मानिये।

अन्तरा - हम तुम नाथ एक बिरादरी के उतराई देय जात ना बिगाड़िये।।

राग-चारूकेसी-त्रिताल (मध्यलय)

स्थाई - उतराई ना लेहों तोरी, प्रभु तोहे पार उतारे की।

अन्तरा - भवधार के हो खेबइया की जो पार मोरी नइया, उतराई पार उतारे की ।।
तीर्थराज आगमन एवं भरद्वाज मिलन प्रसंग।

राग-बिहाग-त्रिताल(मध्यलय)

स्थाई - तीरथपति प्रभु देखे आय, अनुज सीय संग न्हाय त्रिवेणी भरद्वाज सिरनायउ आय।

अन्तरा - बहुबिध करि सम्मान पूजि पद, भरद्वाज वर मांगे,
तब पद कमल मधुप मेरो मन रहै सदा अनुरागे, वचन सुनि हर्षे रघुकुल राम।।
ग्राम बासियों का प्रसंग।

राग-देवगिरि विलावल-एकताल (विलम्बित)

स्थाई - ए पथिक तुम कहां के कवन कारण कानन आये।

अन्तरा - लीन्हे साथ नारि सुकुमारी, 'रामरंग' रूप निहारि मदन लजाये।।

राग-देवगिरि विलावल-त्रिताल (मध्यलय)

स्थाई - मगन भयो है सब नारि, राम को रूप अनूप निहारि।

अन्तरा - निरख-निरख छबि मूरत भई है, 'रामरंग' तन मन सुधि बिसारी।।

राग-कल्याण-एकताल (मध्यलय)

स्थाई - एरी कवन लागे तेरो सुन्दर सलोने देखि मेरो मन हुलसाने।

अन्तरा - मधुरे बैन सैन 'रामरंग' बुझायो सिय सुनि मुदित पहिचाने।।

राग-देवगिरि विलावल-त्रिताल (मध्यलय)

स्थाई - कौन तुम्हारे लागत कुँवर साँवरे गोरे।

अन्तरा - सकुचि सुनायो सिय देवर गोरे मेरे, 'रामरंग' सैयां सांवरे।।
शबरी प्रसंग।

राग-झिंझोटी- धीमा त्रिताल

स्थाई - पाहुन आबे बन कब मोरी मड़ैया रघुराई।

अन्तरा - जुगत जुगायों बेर सुमीठे, 'रामरंग' अवन आस ले दोउ भाई।

राग-झिंझोटी-त्रिताल(मध्यलय)

स्थाई - मड़इया मोरी आज रहो साईं राम रघुराई विनती सुनिये।

अन्तरा - अरचन वन्दन एक न जानू 'रामरंग' हमरी बांह गहिये।।

राग-यमनी बिलावल-एकताल(विलम्बित)

स्थाई - आज रहो तुम राम गुसाईं घर मेरे पहुनाई।

अन्तरा - कब की बैठी द्वारे दया निधि आसलगाय तिहारी।।

राग-यमनी बिलावल-एकताल (मध्यलय)

स्थाई - आई मैं तिहारी शरण राखिये से कृपा निधान नारि हूँ गंवारी।

अन्तरा - जप तप मैं कछु न जानू, 'रामरंग' भरोसे तेरो अवध बिहारी।।

राग-काफी-त्रिताल(मध्यलय)

स्थाई - भामिन भक्ति को नाता मानू, जाति पाति कुल धरम बड़ाई धन बल कछु नहिं जानू।।

अन्तरा - तेहि के हृदय रहूँ जे प्राणी एकौ भक्ति करे,
सकल भक्ति जिनके मन सो मम उर महं बास करे, तूँ तो भक्ति रूप समानू।

राग-तिलक कामोद-झपताल

स्थाई - जनक नन्दनी जानकी जानहु, देहु बताय ठौर मोहि भामिन।

अन्तरा - सुभग सरोवर, निकट सुग्रीव, करिये मिताई होय दुःख दमन।।
भगवान के विमान को आते देखकर अवधपुर की नारियों का आनन्द।

राग यमन कल्याण-धीमा त्रिताल

स्थाई -निरख निरख सखि गगन मन्डल में अनुज सहित सियराम आवत अवध विमान चढ़े।

अन्तरा - पवन पूत लै आयो सन्देसो भरत मगन उठि आतुर चले,
रामरंग परिजन पयोध जनु राका शशि सो मिलन बढ़े।।

संगीत रामायण की आरती

राग-तिलक कामोद-त्रिताल (मध्यलय)

स्थाई - आरती करौं रामायण की। जामे शुभ चरित सियावर की।।

अन्तरा(1) - शारद नारद गावत डोलत, सनकादिक शिव जय जय बोलत, कीरति सुवन अंजनी की।।

अन्तरा (2)- वेद पुराण शास्त्र ग्रन्थन की, सार अंश सम्मत सब ही की, कलि मल हरणी की।।

अन्तरा (3)- व्यास आदि कवि संतत वरनत, काग भुसुन्डि गरूड़ गुन गावत, मंगल करणी की।।

अन्तरा (4)- बालमीक तुलसी जस गावे, गावत 'रामरंग' सुख पावे, भव भय हरणी की।।

लोक के साथ साथ शास्त्रीय संगीत में भी राम महिमा का गुण गान भरा पड़ा है। राम मर्यादा पुरुषोत्तम के रूप में भारतीय संस्कृति में एक महामानव के रूप में सदा से प्रतिष्ठित रहे हैं। उनका आचरण हमेशा भारतीय जनमानस के लिए आदर्शवादी प्रेरणा प्रदान करता रहा है और रहेगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

रामचरित मानस - गोस्वामी तुलसी दास
संगीत रामायण - पद्म रामाश्रय झा क्ररामरंगक्र

राम कथा गायन का महत्त्व

डॉ० वेणु वनिता

सहा आचार्य तबला
बरेली क०लेज बरेली

राम अनंत अनंत गुन, अमित कथा विस्तार।
सुनि अचरज न मानिहै, जिनके विमल विचार।।

राम का चरित्र भारतीय मानस की अभिव्यक्ति का माध्यम रहा है स भारतीय जीवन के विभिन्न मोंडो पर रामचरित ने युगानुकूल उत्तरदायित्व स्वीकार किया है। जब जब विचार,भाषा, संप्रदाय या अन्य किसी दृष्टि से उल्लेखनीय या मौलिक परिवर्तन हुआ है, राम का चरित्र भारतीय जन का सहयोगी, संरक्षक या मार्गदर्शक बन कर उपस्थित हुआ है।

यह केवल संयोग की बात नहीं है कि संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश एवं विभिन्न आधुनिक भारतीय भाषाओं का प्रथम महाकाव्य राम के जीवन पर ही आधारित रहा है।

बाल्मीकि, विमल सूरि और स्वयंभू आदि का कृतित्व इसका प्रमाण है। राम की कथा अत्यंत प्राचीन है स भारतवर्ष में राम की कथाएं जनमानस में बहुत गहरी जड़ें जमाए हुए हैं। हम देखते हैं कि बाल्मीकि या तुलसी ने ही राम कथा नहीं लिखी बल्कि समस्त प्रादेशिक भाषाओं में राम कथाएं प्राप्त होती है स सदियों से घर के बुजुर्ग अपनी पीढ़ी के बच्चों को राम कथा सुनाते रहते हैं इसका निष्कर्ष यह है कि राम की कथा और उनका चरित्र भारतीय लोक संस्कृति में रचा बसा है।

राम मर्यादा पुरुषोत्तम के रूप में भारतीय संस्कृति में एक महामानव के रूप में सदा से प्रतिष्ठित रहे हैं। उनका आचरण और शील भारतीय जनमानस को एक आदर्शवादी प्रेरणा प्रदान करता रहा है।

सभी भारतीय कलाएं श्री रामचरित के दिग्दर्शन के बिना अपूर्ण हैं स चाहे लोक कथाएं, लोक संगीत, लोक नाट्य विभिन्न चित्र, मूर्तियां इत्यादि सभी में रामकथा को एक विशिष्ट स्थान प्राप्त है।

संगीत प्राचीन काल से ही ईश्वर की आराधना एवं भक्ति में प्रमुखता से सहायक रहा है। पुराणों में भी भगवान विष्णु ने नारद जी से कहा है कि -

नाहं वसामि वैकुंठे योगिनां हृदय न च।
यद्भक्तारू यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारदरू।।

तात्पर्य यह है कि ईश्वर का निवास वही है जहां उनके भक्त उनके गुणों का गान करते हैं स भारतीय साहित्य में गीत की परंपरा बहुत प्राचीन है सामवेद गान विद्या का ही वेद है। संस्कृत साहित्य में महर्षि बाल्मीकि के पश्चात गीतों की एक दीर्घ परंपरा मिलती है। कालिदास आदि श्रेष्ठ कवियों के काव्य एवं नाटक गीति-तत्व के तत्व से युक्त मिलते हैं जयदेव का गीत गोविंद गीतिकाव्य संबंधी अत्यंत लोकप्रिय ग्रंथ है। तुलसीदास अपने युग की गीतोन्मुख प्रकृति की उपेक्षा नहीं कर सके।

श्री रामचरितमानस में भी भगवान श्री राम ने शबरी को भक्ति के जो नव प्रकार बताएं हैं उसमें संगीत गान का ही चौथी भक्ति के रूप में स्थान दिया गया है। उन्होंने सबरी से कहा है कि-

चौथी भगति मम गुन गन करई कपट तजि गान।

अर्थात भगवान श्री राम के गुणों का गान छल कपट रहित होकर अत्यंत प्रेम और श्रद्धा भाव से करना ही श्रेष्ठ भक्ति है।

भारतवर्ष में रामकथा गायन की सुदीर्घ परंपरा रही है। आदिकवि महर्षि वाल्मीक से लेकर राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त तक यह गायन परंपरा अपने परिवर्तनशील भाषा रूपों के माध्यम से निरंतर प्रवाहित होती रहीस रामकथा गायन की यह निर्बाध परंपरा केवल हिंदी में ही नहीं, अपितु अन्य भारतीय भाषाओं में भी विकसित - पल्लवित हुई चाहे अध्यात्म रामायण हो, कृतिवास रामायण हो, कंब रामायण हो, मैथिली रामायण, साकेत या कोई अन्य। सभी का रचनात्मक उद्देश्य मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम के जीवन चरित्र का गायन ही रहा है। यह परंपरा ना सिर्फ काव्य में ही परिपुष्ट हुई, अपितु हिंदी गद्य के विकास के साथ राम कथा लेखन की परंपरा भी कहानी, उपन्यास व नाटकों के माध्यम से स्थापित की गई जो आज तक अपने निरंतरता बनाए हुए हैं।

राम कथा की महिमा और जनमानस में इसकी लोकप्रियता अपने पूर्व रुप में आज भी विद्यमान है। श्री राम के प्रति श्रद्धा भक्ति भावना के कारण जनमानस राम कथा से प्रेरणा प्रोत्साहन, परम शांति और सामाजिक - नैतिक मानदंड ग्रहण करता रहा है। भारतीय जनमानस में मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम को लोकनायक के रुप में कम, अपने आराध्या ईश्वर के रूप में अधिक ग्रहण किया है। आदिकवि वाल्मीकि के श्रीराम लोक नायक के रूप में अवतरित होते हैं और कथा के साथ-साथ देवत्व प्राप्त करते हुए अंत में ईश्वर रूप में प्रतिष्ठित होते हैं। विशेष रूप से रामचरितमानस का भारतीय जनमानस पर जो प्रभाव पड़ा है वह अकथनीय है, गोस्वामी तुलसीदास के श्री राम आरंभ से ही देव रूप में प्रतिष्ठित है स तुलसी एक भावुक भक्ति कवि है, तो दूसरी ओर संगीतज्ञ भी हैं, उन्होंने अपने आराध्य की आराधना गा कर की थी। विनय पत्रिका का प्रारंभ भी गाकर ही किया-

गाइए गणपति जगबंदन, शंकर - सुवन भवानी नंदन।

सिद्धि - सदन गजबदन विनायक, कृपा सिंधु सुंदर सब लायक।।

उनका रामचरित मानस तो पूर्णरूपेण संगीत में रचना है। जब इसकी चौपाईयां विभिन्न राग-रागनियों में गाई जाते हैं, तो हृदय - तंत्री झंकृत हो उठती है स इन्हे केवल शिक्षित वर्ग गाता है ऐसा नहीं, वरन अशिक्षित वर्ग भी इन चौपाइयों को गाकर पूर्ण आनंद लेता है स यह मानस की महानता का रहस्य है।

तुलसीदास ने (रामचरित मानस) में संगीत को महत्व देकर भगवान राम के पावन चरित्र को यत्र - तत्र सर्वत्र विकीर्ण कर दिया है स तुलसी के व्यक्तित्व में कवि और संगीतज्ञ दोनों रूप प्रगट हुए हैं स यदि कभी तुलसी में संगीतज्ञ का व्यक्तित्व ना होता तो उनका काव्य उतना लोकप्रिय ना बन पाता जितना आज बन गया है। इसी विशिष्टता के कारण मानस सत्यम शिवम और सुंदरम तीनों रुपों से अलंकृत है। तुलसी ने रागों की भावानुकूल योजना की है। उपदेश - भावना की अभिव्यक्ति के लिए उन्होंने प्रायः भैरवी धनाश्री तथा भैरव आदि रागों को अपनाया है राग भैरव में उपदेश भावना -

राम जपु, राम जपु, राम जपु बावरे।
घोर भव नीर निधि,नाम निज नाव रे।।

एक ही साधन सब रिद्धि -

सिद्धि साधि रे।
ग्रसे कलि रोग जो संजम समाधि रे।।
भलो जो है, पोच जो है, दाहिनो जो बाम रे।
राम नाम ही सो अंत सभी को काम रे।।

विनय पत्रिका 66

राग तोड़ी में इस स्थल का चित्रण कितनी मनोहारीता से किया गया है -

राम लखन इक और भरत रिपुदमन लाल इक और भये।
सरजू तीर सम सुखद भूमि थल, गनि गनि गोइयाँ बाँटी लए।।

श्री रामचरितमानस में तुलसीदास जी ने श्रीराम का चरित्र गाकर ही रचा और उसका गान करने के लिए पग पग पर कहा स भगवान श्री राम का गुणगान भगवान शिव, नारद, गरुण, काकभुसुंडि, याज्ञवल्क्य, भारद्वाज आदि सभी ऋषि-मुनियों ने किया है। संपूर्ण श्री रामचरितमानस में (गाना या गायन) का बार-बार प्रयोग करके यह सिद्ध किया गया है कि इस महाकाव्य का गायन ही भगवत भक्ति प्राप्ति का सर्वश्रेष्ठ साधन है -

बालकांड

मुनिन्ह प्रथम हरि कीरति गाई स तेहि मग चलत सुगम मोहि भाई।।
राजा राम अवध रजधानी स गावत गुन सुर मुनि वर वानी।।
जे गावहि यह चरित संभारे स तेई यही ताल चतुर रखवारे।।
जो प्रभु दीन दयालु कहावा स आरति हरन बेद जसु गावा।।
राम नाम कर अमित प्रभावा स संत पुराण उपनिषद गावा।।
उमा चरित सुंदर मैं गावा स सुनहु संभु कर चरित सुहावा।।
यह चरित जे गावहि हरिपद पावहि ते न परहि भवकूपा।।
उपबीत ब्याह पूछाह मंगल सुनि जे सादर गावहि।
वैदेही राम प्रसाद ते जन सर्वदा सुख पावही।।
शेष सारदा बेद पुराना स सकल करहि रघुपति गुन गाना।।
सुनु गिरजा हरिचरित सुहाए स विपुल निगमागम गाये।।
बाल चरित अति सरल सुहाये स सारद सेस शंभु श्रुति गाये।।
जहं तहं राम व्याहु सबु गावा स सुजसु पुनीत लोक तिहूँ छावा।।

अरण्य कांड

रघुवीर चरित्र पुनीत निशिदिन दास तुलसी गावहि।
राव नारि जसु पावन गावहिं सुनहिं जे लोग।।
राम भगती द्रिड पावहि बिन विराग जप जोग।।

किष्किंधाकांड

जो सुनत गावत कहत समुझत परमपद नर पावई।
रघुवीर पद पधोज मधुकर दास तुलसी गावई।।

सुंदरकांड

सकल सुमंगल दायक रघुनायक गुन गान।
सादर सुनहिं ते तरही भवसिंधु विना जल जान।।

उत्तरकांड

जे सकाम नर सुनहि जे गावहि स सुख संपत्तिनाना विधि पावहि।।
हरी चरित्र मानस तुम गावा स सुनी मैं नाथ अमिति सुख पावा।।
राम चरित्र विचित्र विधि नाना स प्रेम सहित कर सादर गाना।।
कलिजुग जोग न जग्य ना ग्याना स एक आधार राम गुण गाना।।
मन कामना सिद्धि नर पावा स जे यह कथा कपट तजि गावा।।

अंत में गोस्वामी जी प्रभु श्रीराम के चरित्र गान के संबंध में कहते हैं -

रघुवंश भूषण चरित यह नर कहहि सुनहि जे गावहि।
कलिमल मनोमल धोइ विनु श्रम रामधाम सिधावही।।

उपर्युक्त रामचरितमानस के सभी उदाहरणों से हमें यह ज्ञात होता है कि गोस्वामी तुलसीदास जी भी भगवत चरित्र के गांन के महत्व के प्रति सचेत थे। यही कारण है कि संपूर्ण श्री रामचरितमानस में जहां भी उन्हें अवसर मिला, उन्होंने श्री राम भक्ति में गुणगान के महत्व का प्रतिपादन किया। गोस्वामी जी के अनुसार भगवत गुणानुवाद में इतनी शक्ति है कि वह मनुष्य के सारे कल्मषो को धोकर उसे

श्रीराम के परमधाम का अधिकारी बना देता है स श्री राम के चरित्र का गान भवसागर से पार होने का सुगम उपाय है। यह कलयुग के लिए विशेष है।

कलजुग समजुग आन नहीं जो नर कर विश्वास।
गाई राम गुनगन विमल भवतर विनहिं प्रयास।।

जो मनुष्य प्रभु के चरित्र गान नहीं करते उनके संबंध में स्वामी जी कहते हैं-

जो नहीं करइ राम गुण गाना स जिंह सो दादुर जिह समाना।।

अर्थात जो जीव प्रभु श्री रामचंद्र जी के गुणों का गान नहीं करती वह मेंढक के जीव के समान है। प्रभु श्रीराम के चरणो में सहज-स्वाभाविक प्रेम अनुराग और भक्ती के लिए उनके चरित्र और गुणों का गान बहुत सहायक सिद्ध होता है स श्री रामचरित का गुणगान भवसागर से पार होने का या मोक्ष प्राप्त करने का सबसे सरल और सुगम मार्ग है।

तुलसी के बाद के प्रायः सभी गायकों ने श्रीराम के ईश्वर रूप की ही आराधना की है - कविवर मैथिली शरण गुप्त के शब्दों में -

राम तुम मानव हो ईश्वर नहीं हो क्या,
विश्व में रमे हुए नहीं सभी कहीं हो क्या
तब मैं निरीश्वर हूँ, ईश्वर क्षमा करें,
तुम ना रमो तो मन तुममें रमा करें।

और यह सत्य भी है राम भक्तों ने राम को प्रतिष्ठित किया है तो रामकथा ने कवियों गायकों को प्रतिष्ठित किया है -

राम तुम्हारा वृत्त आप ही काव्य है।
कोई कवि बन जाए सहज संभाव्य है।।

रामकथा के आकर्षण ने सब को आकर्षित किया है। भक्ति भावना से ओतप्रोत कवियों, गायको ने अपने अपने ढंग से रामकथा का गायन कर शांति और तुष्टि अनुभव की है स राम का नाम केवल उनके लिए अपितु सामान्य जनमानस के लिए भी एक मुक्ति मंत्र बन गया। राम कथा घर घर पदी व गाई जाने लगी स किंतु गाने की रीति अलग-अलग रही राम कथा गेय तो है परंतु विशुद्ध शास्त्रीय संगीत की दृष्टि से इसका गायन नहीं होता था। संगीत की स्वर्लिपियो में अभी तक राम कथा को नहीं बांधा गया था। राम नाम रूपी मोक्ष प्राप्ति के सन्मार्ग को पहचानकर इस दुरूह कार्य को राम भक्त संगीत मनीषी एवं सुविख्यात वाग्येयकार पंडित रामाश्रय झा राम रंग जी ने संपूर्ण राम कथा को विशुद्ध शास्त्रीय संगीत में निबंध किया। उनके इस सत प्रयास से राम कथा गायन की परंपरा का शास्त्रीय गायन में प्रथम समावेश हुआ है जो मील का पत्थर बनकर युगों युगों तक अपनी उपस्थिति दर्ज करेगा। रामरंग संगीत रामायण (दो भागों में प्रकाशित) सातों कांडों को समाहित किया गया है।

सुविख्यात गायक पंडित रामरंग द्वारा रचित एक महत्वपूर्ण संगीत रचना है। संगीत रामायण गोस्वामी तुलसीदास अथवा अन्य कवि द्वारा रचित राम कथा का स्वरलिपि करण नहीं है बल्कि पंडित जी ने राम कथा के सभी प्रमुख प्रसंगों को ध्रुपद एवं ख्याल शैली में बांधकर स्वयं ही काव्य पंक्तियां दी है तथा उनके गायन हेतू स्वर्लिपियों में उन्हें निबद्ध किया है स परंपरा अनुसार इस राम कथा को भी सात खंडों में विभक्त किया गया है स कुछ उदाहरन -

संगीत रामायण की कुछ रचनाएं - जब भगवान श्री राम वन के लिए जाते हैं रास्ते में कोल भील माता सीता से पूछते हैं कि यह तुम्हारे कौन लगते हैं जो साथ में है उस समय की रचना है

राग देवगिरी बिलावल

स्थाई -कौन तुम्हारे लागत कुवर सांवरे गोरे

अंतरा (जवाब देती हैं सीता माता)

सकुचि सुनाए सीय देवर गोरे मोरे राम रंग सैंया सांवरे इसी तरह

राग हेमंत में चार ताल

स्थाई - जानकी रमन रामचंद्र दुरूख हरण, काटत कलेस नाम, सुमिरन करत ही।

अंतरा - शिव सनकादि रटत करत आस कृपा की,"रामरंग" सुघरत सब काम राम सुमिरत ही।।

इसी तरह

राग केसरी कल्याण तीन ताल में निबंध

स्थाई - तुम महावीर वीरन में,केसरी नंदन जगबंदन।

अंतरा- ग्यानी महा ज्ञानी में, रिध-सिध देत छीन में,"रामरंग" रंगे तन मन।।

राम कथा महिमा मंडन की ओर आज भी साहित्यकार आकर्षित होते रहे है और उनकी प्रतियाँ हमारे समक्ष आती रही है ईएसआई श्रंखला में श्रीमती सरोज श्रीवास्तव नलिन जी का काव्य ग्रन्थ "करुणा निधि श्री राम" भी कलियुग में श्री राम भक्ति का अनुपम साधन है इसमे पूरी राम कथा बहुत ही सरल एवं प्रभाव पूर्ण, काव्य रूप में वर्णित है साथ ही गेयता को भी प्राप्त है। विनय पत्री-

हे राम शरण में ले लो श्री राम शरण में ले लो।
अरि करनी करि रावण तरि गयो, तरयो विभीषण किये मिताई।।
वाण लगे से बाली तरिगयो, सुग्रीव तरयो सेवकाई।
भक्ती भाव से सबरी तरि गई, तरी ताड़का करि अधिमाँई।।
पद रज पाय अहिल्या तरि गई गणिका सुवा पढ़ाई।
जो जेहि भाव भजे प्रभु तुमको तेहि भाव भवहि तरि जाई।।

शास्त्रीय संगीत के अतरिक्त लोक संगीत में भी राम महिमा के गुण गान से भरा पड़ा है स राम मानव जीवन का कोई भी अवशर हो राम नाम रूपी गीतों का समावेश उसमे होता ही है स जैसे-

होली - *वन चले दोनों भाई इन्हे समझाओ ना माई*
वन चले दोनों भाई, होरी हो
आगे आगे राम चालत है, पीछे से लक्ष्मन भाई
ता पीछे से चले जानकी, की शोभा बरनी ना जाई
राम बिना मोरी सुनी आयोध्या लक्ष्मन बिन ठकुराई
ए जी सीता बिना मेरी सुनी रसोइया, जी ये दुःख बरनी ना जाई

भक्ति संगीत तो राम नाम के विना संभव ही नहीं है जैसे-

श्री राम चन्द्र क्रपालु भजुमन हरन भव भय दारुनम–

इसी प्रकार फिल्म संगीत भी राम की महिमा गुण गान से अछूता नहीं रहा है जैसे–

रघुपति राघव राजा राम।
बड़ी देर भई, कब लोगे शरण मेरे राम।।

कलियुग में तो भगवान् के गुण गान की महिमा को सबसे विशेषतम बताया गया है।

कलिमह एक न साधन दूजा, जोग जग्य जप तप ब्रत पूजा
सब भरोस तजि जो भज रामहि, प्रेम समेत गाव गुण ग्रामहि
सो भवतार कछु संसय नाही, नाम प्रताप प्रगट कलि मांही

सन्दर्भ -

1. तुलसी मानस सन्दर्भ - ड० रामस्वरूप आर्य, संभल
2. तुलसी - उदयभानु सिंह
3. लेख गायन की महिमा - श्री रामचरित मानस के सन्दर्भ में - ड० सुधा रानी
4. सम्पादकीय लेख - दयाप्रकाश सिन्हा, संगीत रामायण बाल कांड
5. संगीत रामायण भाग १ भाग २ - पं0 रामाश्रय झा

पं. रामाश्रय झा जी की बंदिशों में : श्री राम

डॉ0 इभा सिरोठिया

एसोसिएट प्रोफेसर सं0 गायन
आर्य कन्या डिग्री कॉलेज, इलाहाबा

अनादि काल से आध्यात्म तथा संगीत का संबंध भारतीय परम्परा का आधार रहा है। भक्ति संगीत का प्राचीनतम ग्रंथ 'सामवेद' है। संगीत की महत्ता को स्वीकार करने के कारण ही इन स्तुति परक मंत्रों को संगीतात्मक रूप प्रदान किया गया है। संगीत और काव्य दोनों की उत्पति नाद से हुई है। आकाश का गुण शब्द है जो वाक तत्व है ये संगीत और काव्य दोनों का आधार है।

सामगान की ऋचाओं को शास्त्रीय संगीत में गीतियों, प्रबन्ध और ध्रुवपद आदि के रूप में धीरे-धीरे परिवर्तित अवस्था में जातियों, गीतियों, प्रबन्ध और ध्रुवपद आदि के रूप में भी संगीत भगवत् आराधना का माध्यम बना रहा।[1]

संगीत का मुख्य लक्ष्य है रस परिपाक या रसात्मकता। भाव तथा रस की प्रधानता संगीत में रहती है। भाव पक्ष तथा कला पक्ष दोनों ही रस सृष्टि का आधार है। भाव प्रदर्शन में गायक अपने हृदयगत भावों पर आश्रित रहता है। अर्थात् कल्पना शक्ति द्वारा हृदयगत भावों को स्वरों और शब्दों के माध्यम से व्यक्त करता है।

गुरूवर पं0 रामाश्रय झा जी की अमर कृतियाँ- अभिनव गीतांजलि पाँचों भागों एवं डॉ0 गीता बनर्जी की पुस्तकें रागशास्त्र के दोनों भागों में दृष्टिपात करने से यह ज्ञात होता है कि पं0 झा जी की रचनाओं में भगवान श्री रामचन्द्र जी की सम्पूर्ण जीवन लीलाओं को उन्होंने अपनी बंदिशों में विशेष स्थान दिया है। उनके कथनानुसार- "मेरे द्वारा सभी सांगीतिक कार्य भगवत प्रदत्त और गुरूजनों के आशीर्वाद का ही परिणाम है इस हेतु अपने इन सभी सांगीतिक सेवाओं को भगवान श्रीराम एवं गुरूजनों को समर्पित कर रहा हूँ :-

"राम कृपा से लिखे सबहि, संगीत राग स्वर दर्पण।
'रामरंग' यह लेखन सब विधि, गुरू गोविन्द को अर्पण।।[2]

वस्तुतः निश्चित रूप से पंडित जी भगवान श्रीराम के अनन्य भक्त थे उनकी राम की भक्ति का परिणाम है उनकी बंदिशों में राम चरित यत्र तत्र सर्वत्र उपस्थित है। गोस्वामी जी के अनुसार 'जा पर कृपा राम कर होई ता पर कृपा करै सब कोई'। संभवतः पं0 रामाश्रय झा जी का जनमानस में महत्त्वपूर्ण स्थान बना पाना उनकी बंदिशों की अभूतपूर्व लोकप्रियता का प्रमुख कारण शब्द संयोजना के साथ-साथ शब्दों में निहित रामभक्ति ही है। प्रभु श्रीराम जन्म के अवसर पर उनकी रचना :-

राग बिलासखानी तोड़ी-चौताल

स्थायी- आनंद भयो नगर धूम धाम है डगर
प्रगटे दशरथ घर तीन लोक ठाकुरे
अन्तरा- राम, भरत, लखन, शत्रुघ्न शत्रु हनन
सुरनर मुनि परमानन्द निरखि बालबांकुरे।[3]

राग बिलासखानी तोड़ी- एकताल द्रुत

स्थायी- जुगन जीवें लाल चारों तेरो ही
माई मोहे देहो दान दरसन को।

अन्तरा- राम लखन भरत रिपु दमन चरण
रामरंग चाहे परसन को।[4]

राग-राम साख - चौताल

स्थायी- आज तो बधाई माई, भवन भवन बाजि रहै

महाराज दसरथ गृह प्रगटे सुख धाम।

अन्तरा- रनबासे अति आनन्द, निरखि वदन अवन चन्द

पुनि-पुनि उर लावत, सुख पावन सब बाम।[5]

राग-राम प्रिया - एकताल विलम्बित

स्थायी- बाजत बाजा बधाई को भवन-भवन
दसरथ नृप पायो सुत सुख धाम

अन्तरा- अखिल भुवन पति आये बन सुत रामरंग
निरखि सुख पावे सब बाम।[6]

उपर्युक्त बंदिशों में पं0 रामाश्रय झा जी ने भगवान राम को जन्म से ही तीनों लोकों के तारण हार एवं आराध्य के रूप में स्थापित किया। प्रभु श्रीराम के जन्म के पश्चात् पं0 झा जी की बंदिशों में राम को गुरू विश्वामिश्र द्वारा वन गमन एवं असुरों के संहार के पश्चात् राजा जनक जी द्वारा आयोजित धनुष यज्ञ में ले जाना और वहाँ फुलवारी का प्रसंग वर्णित है :-

राग शहाना- त्रिताल मध्यलय

स्थायी- छवि की छटा छाई चहुँ दिसि आज बगियन में री

अंतरा- सखियन संग इत सिय सोहे
राम अनुज की उत छवि मोहे
निरख मगन सखियन एरी[7]

राग शहाना - झपताल

स्थायी-गुरू चरण चित धरे लेन प्रसून चले
मूरति मधुर दोउ विदेह बगियन में
अन्तरा-सखियन संग सिय, पूजन गौर आई
माया ईश को मिलन आज बगियन में।[8]

फुलवारी प्रसंग की बंदिशों में पं0 झा जी ने राम को ईश एवं सीता को माया के रूप का दिग्दर्शन किया है। प्रसिद्ध संत रामानन्द जी ने भी ऊँ रामाय नमः को मूल मंत्र के रूप में स्थापित कर राम को ईश्वर, सीता की अचित् (प्रकृति) और लक्ष्मण को चित् माना।

धनुष यज्ञ में जब सभी राजा धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ाने में असमर्थ हुए तो गुरू की आज्ञा का पालन करते हुए श्री राम ने धनुष भंग किया :-

राग कल्याण - धीमा त्रिताल

स्थायी- जब हरिधनुष धरे कर डग मग डोली परे धरनी धरे

अन्तरा- तोरे पिनाक सीय दुःख तारे
बूड़त बिरह विदेह उबारे
रामरंग नभ सुर जय जय करे।[9]

राग हमीर-त्रिताल

स्थायी- खन्डन कियो जबहि रघुराई
शिव को पिनाक नाक महि
पाताल यश छाय रहयो

अन्तरा- सखि गवहि सुर मधुर ताल-लय
सिय हरषी जयमाली चली लय
रघुवर उर जयमाल रामरंग
सुमन बरि सुर जय-जय कियो।[10]

राग भूपाली-त्रिताल (मध्य लय)

स्थायी- हरि हारे हारे भूप सब
शिव धनु काहू न हारे

अन्तरा- निरखि विदेह हिये अकुलाने सुमिर
सीय बिलखाने बीर बिहीन भइ धरनी
कहि, शेष नरेश प्रचारे।[11]

शिव धनुष भंग कर श्री राम ने विदेह राजा जनक जी की व्याकुलता को शांत कर देवी सीता को सुख प्रदान किया। तत्पश्चात् राम और सीता का विवाह का अदभुत वर्णन पं0 रामाश्रय जी की बंदिशों में परिलक्षित होता है-

राग मारू विहाग- एकताल विलम्बित

स्थायी- शुभदिन आज बनरा बन आये राम सुजान
अंतरा- सिय सुकवारी कवन तप कीन्हें
'रामरंग' पायो वर भगवान।[12]

राग- मारू विहाग-एक ताल (मध्य लय)

स्थायी- आज रे बधाव बाजै अवध नगर में
अन्तरा- कुंवर चारि ब्याहि घर आये आनन्द
'रामरंग' डगर डगर में।[12]

राम और सीता के शुभ विवाह के पश्चात् उनके वन गमन का चित्रण पं0 झा जी अत्यन्त सुन्दरता से किया है। इस बंदिश में वन की स्त्रियों द्वारा सीता जी से उनके पति एवं देवर के विषय में पूछती है तो वह बड़े ही संकोच और लाज के साथ उन्हें उत्तर देती है :-

राग देवगिरी बिलावल- त्रिताल मध्य लयं

स्थायी- कौन तुम्हारे लागत कुंवर सांवरे गोरे
अंतरा- सकुचि सुनायो सिय देवर गोरे मेरे
रामरंग सैयां सांवरे।[13]

वन गमन प्रसंग में सबसे अनूठा प्रसंग राम, लक्ष्मण एवं माता जानकी को नाव द्वारा गंगा पार कराना गुरूजी की सम्पूर्ण राम राममयी रचनाओं मुझे राम केवट प्रसंग से संबंधित यह बंदिशें विशेषतया उल्लेखनीय प्रतीत होती है इनकी यह विशेषता क्रमवार कई बंदिशों में इस प्रसंग की कथा समाहित है :-

राग चारुकेसी- रूपक ताल विलम्बित

स्थायी- हे रघुवर राजा नइया
न चढ़ाऊं तोहे पग धोये बिना
अन्तराः पाहन नार भई राउर पग धूरि लगी
रामरंग तरनी बने धरनी मुनि पग धोये बिना।[15]

राग चारूकेसी-त्रिताल विलम्बित

स्थायी- उतरे प्रभुपार सुरसरि धार के
माणी मुदरी सिय दीन्ही उतार के
अन्तरा- कहि कहि हारे लखन सिय रघुराई
रामरंग केवट बोले 3 वचन सम्हार।[15]

राग-चारुकेसी - एकताल-मध्य लय

स्थायी- हमरी तुम्हारी राजन जाति-पाति केवट की बिनती मानिये
अंतरा- हम तुम नाथ एक बिरादरी के
उतराई देय जात ना बिगारिये।[15]

राग चारुकेसी - त्रिताल (मध्य लय)

स्थायी- उतराई ना ले हों तोरी प्रभु तोई पार उतारे की
अंतरा- भवधार के हो खेवइया
कीजो पार मोरी नइया
उतराई पार उतारे की।[15]

उपर्युक्त अनुपम बंदिशों के पश्चात् प्रातः स्मरणीय गुरूवर पं0 रामाश्रय झा जी ने लंका युद्ध एवं रावण हनन के पश्चात् लंका विजय की बंदिशों की रचना किया :-

राग- अड़ाना-एकताल विलम्बित

स्थायी- राम रघुबीर रणधीर कपि संग लिये
डंक दियो लंकगढ़ हलचल मचे
अंतरा- कह दस शीश लिय, देहु जानकी पिय
'रामरंग' रंगो जासों तेरो सब संकट कटे।[16]

राग- शंकरा एकताल विलम्बित

स्थायी- राजा राम सिय अनुज संग आवत
नगर विमान चढ़े।
अंतरा- असुर संघारि विभीषण तारे
रामरंग सुर मुनि जै जै करे।[17]

लंका- विजयोपरांत भगवान राम के अयोध्या आगमन एवं उनके राजतिलक के सुअवसर पर गुरूवर पं0 रामाश्रय झा मुखरित हुए :-

कुकुभ बिलावल झपताल (विलम्बित)

स्थायी- सिंहासन बैठे आज
बिराजे सिय रघुबीर

अंतरा- गुणि गंधर्व सुजस सुरगावे
रामरंग चंवर डुलावे लखन रणधीर।[18]

राग केदार- त्रिताल मध्य लय

स्थायी- राजा भये राम रघुराई
नभ सुर सुमन बरसे हरषाई
अन्तरा- अवध नगर आनन्द भयो है
मिल नर नारि मुदित मन गावे
'रामरंग' सरस बधाई।[23]

राग मारु विहाग- एकताल (मध्य लय)

स्थायी- नभ निरख आज री, अनुज सिय संग
आवत रघुराई विमान चढ़े
अंतरा- सुजस सुर गावे मुनि संघारे लंकपति
'रामरंग' जय जय करे।[24]

राग पटमन्जरी

स्थायी- अखिल भुवनपति राजन के राजा
आज अवध पुरी सिंघासन राजे
अंतरा- देव महादेव, विनती करत सब
असुर संघारि प्रभु निज जन उबारे।[19]

पं0 रामाश्रय झा जी की राममय बंदिशो की विशेषता है कि उन्होंने रामकथा के सुखद प्रसंगों को ही अपनी बंदिशों में स्थान दिया। कथा प्रसंगों से इतर पंडित जी ने कई बंदिशों में सात्विक भक्ति को स्थान दिया :-

यमनी बिलावल-एकताल

स्थायी- आई मैं तिहारी शरण राखिये कृपा निधान नारि हूँ गंवारी।
अन्तरा- जप तप मैं कछु न जानूं
'रामरंग' भरोसे तेरो अवध बिहारी।[20]

देवगिरी बिलावल- झपताल मध्यलय

स्थायी- अब लौं न आये सीता लखन राम
उन बिन सूनों लगत मोरे धाम
अंतरा- दस चारि बीते बरस जौ न आये
कैसे रहे 'रामरंग' तन प्राण।[21]

देवगिरी बिलावल- त्रिताल मध्य लय
स्थायी- अब भये राजा राम मोरे मनवा काहे को
अंतरा- सोच करे तुम पूरें गे मन काम।[22]

राग भूपाली त्रिताल- मध्य लय

स्थायी- मंगल करहु द्रबहु मो पर प्रभु
दसरथ के सुत अवध बिहारी
अंतरा- अगम अपार चरित तव रघुपति
लघु गति बरनि न जाही
कीजै सहाय रामरंग
सियबर बुद्धि विवेक सुधारी।[25]

राग तिरभुक्ति

स्थायी- जय जानकी अम्ब जननी जगत की
जनक सुता देहु भगति चरण की
अंतरा- जय नारायणी भुवनेश्वरी जय
रामरंग दीजै दान अपने चरण की।[26]

पं0 रामाश्रय झा जी ने इस प्रकार संगीत और साहित्य मूल उद्देश्य ईश्वर प्राप्ति के लक्ष्य को पूर्ण रूप से प्राप्त करते हुए प्रतीत होते हैं। संगीत तथा साहित्य दोनों ही कलाओं में कलाकार अपनी कला की साधना में ज्यों-ज्यों बुधत्व को प्राप्त होता है त्यों-त्यों की उसकी कला यौवनत्व को प्राप्त होता है।

पं0 रामाश्रय झा जी की बंदिशों पर अपने विचार प्रकट करते हुए श्री मुकेश गर्ग जी कहते हैः-"झा जी की रचनाओं में कई बार भक्ति का प्रभाव जरूरत से ज्यादा दिखाई देता है। इस आधुनिक युग में भी हमारे शास्त्रीय संगीतज्ञों को काम भक्ति के बिना नहीं चलता है ताज्जुब की बात ज़रूर है, पर अब सच तो यही है।"[27]

प्रतिष्ठित लेखक श्री केशवचन्द्र वर्मा जी का कथन हैः- "उनकी बंदिशों की उठान और मुखड़े अक्सर इतने आकर्षक हुआ करते हैं कि उनका सहज गायन ही राम की पूरी छवि को उजागर कर देता है। पं0 रामाश्रय झा 'रामरंग' की सबसे चमत्कारिक उपलब्धि यह रही है कि उन्होंने सम्पूर्ण

रामचरित मानस की कथा वस्तु और उनके प्रसंगों को संपूर्ण मार्मिकता के साथ बड़ी कुशलता से बड़े ख्याल, छोटे ख्याल की बंदिशों में अत्यन्त अनोखे एवं अभूतपूर्व ढ़ग से बांधा।[28]

पं0 रामाश्रय झा जी की बंदिशों में राम कथा तलाशना, राममय हो जाने जैसा ही है। पं0 उमाकान्त जी के शब्दों से अपनी भावना व्यक्त कर इस शोध पत्र का समापन करती हूँ उससे पूर्व गुरूवर पं0 रामाश्रय झा जी को अपनी सम्पूर्ण श्रद्धा से नमन करती हूँ:- ''राम मेरी शक्ति है और दुर्बलता भी शक्ति इसलिये कि मैं निर्बल हूँ और राम निर्बल के बल है। राम के प्रति लोभ और काम मुझसे कभी नहीं छोड़ा जा सकेगा।[29]

तेरा तुझको अर्पण

सन्दर्भ सूची

1. हिन्दी भक्ति काव्य एवं गायन संगीत डॉ0 इभा सिरोठिया, साहित्य संगम पृ0 सं0 29
2. अभिनव गीतांजलि-भाग-5 पं0 रामाश्रय झा 'रामरंग' संगीत सदन प्रकाशन निवेदन
3. अभिनव गीतांजलि-भाग-1 पं0 रामाश्रय झा 'रामरंग' संगीत सदन प्रकाशन पृ0सं0 148
4. पृ0 सं0 156
5. अभिनव गीतांजलि-भाग-2 पृ0सं0 73 पं0 रामाश्रय झा 'रामरंग' संगीत सदन प्रकाशन
6. अभिनव गीतांजलि-भाग-4 पृ0सं0 168 पं0 रामाश्रय झा 'रामरंग' संगीत सदन प्रकाशन
7. अभिनव गीतांजलि भाग-2 पृ0सं0 55 पं0 रामाश्रय झा 'रामरंग' संगीत सदन प्रकाशन
8.
9. अभिनव गीतांजलि भाग-4 पृ0सं0 182 पं0 रामाश्रय झा 'रामरंग' संगीत सदन प्रकाशन
10. अभिनव गीतांजलि भाग-5 पृ0सं0 191 पं0 रामाश्रय झा 'रामरंग' संगीत सदन प्रकाशन
11. अभिनव गीतांजलि भाग-5 पृ0 सं0 223 पं0 रामाश्रय झा, संगीत सदन प्रकाशन
12. अभिनव गीतांजलि भाग-1 पृ0सं0 185 पं0 रामाश्रय झा, संगीत सदन प्रकाशन
13. पृ0सं0 192
14. भाग-1 पृ0सं0 80
15. अभिनव गीतांजलि भाग-4 पृ0सं0 251 पं0 रामाश्रय झा, संगीत सदन प्रकाशन
16. राग शास्त्र-भाग-2 पृ0 सं0 32 डॉ गीता बनर्जी -संगीत सदन प्रकाशन
17. राग शास्त्र-भाग-1 पृ0 सं0138 डॉ गीता बनर्जी-संगीत सदन प्रकाशन
18. अभिनव गीतांजलि भाग-4 पृ0सं0 90 पं0 रामाश्रय झा, 'रामरंग' संगीत सदन प्रकाशन
19. अभिनव गीतांजलि भाग-3 पृ0सं0 211 पं0 रामाश्रय झा, 'रामरंग' संगीत सदन प्रकाशन
20. अभिनव गीतांजलि भाग-1 पृ0सं0 97 पं0 रामाश्रय झा, 'रामरंग' संगीत सदन प्रकाशन
21. पृ0सं0 75
22. पृ0सं0 76
23. अभिनव गीतांजलि भाग-5 पृ0सं0 170 पं0 रामाश्रय झा, 'रामरंग' संगीत सदन प्रकाशन
24. अभिनव गीतांजलि भाग-1 पृ0सं0 196 पं0 रामाश्रय झा, 'रामरंग' संगीत सदन प्रकाशन
25. अभिनव गीतांजलि भागसदन प्रकाशन
26. पृ0सं0 278
27. संगीत, पं0 रामाश्रय झा अंक जनवरी 2011, पृ0सं0-8 संपादकीय, मुकेश गर्ग
28. पृ0सं0 21 केशवचन्द्र वर्मा
29. राघव राग पं0 उमाकान्त मालवीय पृ0सं0 39 आशु प्रकाशन

वैश्विक संदर्भ में राम

डॉ0 रंजीता

(संगीत विभागाध्यक्ष)

राजकीय महिला महाविद्यालय, गुलज़ारबाग, पटना

श्रीराम अनादि काल से ही भारत और भारतीयता के प्रमुख आधार स्तम्भ रहे हैं। भारतीय जनमानस में जन्म के पूर्व से लेकर मृत्यु के बाद तक का कोई क्षण, कर्म, क्रिया या कोई भी दिशा ऐसी नहीं है, जिसमें श्रीराम पूर्णरूप से अवस्थित न हों। वे तो हर जगह, हर गति, हर रीति-नीति में बड़ी निकटता से व्याप्त हैं। अतः अनेक विद्वानों का मानना है कि श्रीराम ही भारत हैं और भारत ही श्रीराम हैं जनमानस के अनुसार भारतीयता के प्राण ही श्रीराम हैं। श्रीराम की कथा से न केवल विश्व का हर व्यक्ति चाहे वह धनाढ्य हो या दरिद्र संपूर्ण आत्मीयता से जुड़ा हुआ है।

श्रीराम की जीवन-गाथा लाखों वर्षों से भारत के ही नहीं विश्व के करोड़ों लोगों को अह्लादित करके उन्हें उनके द्वारा किये गये कार्यों के अनुरूप जीवन यापन करने के लिए अनुप्रेरित करती है। विश्व के पटल पर श्रीराम के जीवन की कथा के अतिरिक्त शायद ही कोई ऐसी कथा रही हो जिसने जनों के मंन को इतना प्रभावित किया हो। यह तो युगों-युगों से जन-जन का मनोरंजन और मार्गदर्शन करती आ रही है। इसका कारण है श्रीराम के चरित्र की सरसता, सहजता और सौम्यता। श्रीराम की कथा के माध्यम से मानव सप्त सोपानों से चढ़ कर भव बंधन से मुक्त हो कर आनंद लोक में विचरण करने लगता है। श्रीराम की पावन गाथा ''रामायण'' कोटि-कोटि लोगों के जीवन में घुट्टी के तरह पिलाई जा चुकी है कि वह उसके कंठ की हार ही नहीं, जीवन का आधार भी बन गई है। इस अनूठी रचना में ऐसा कुछ भी नहीं छोड़ा गया है। जो मनुष्य जीवन को सार्थक बनाने के लिए आवश्यक है। इस अमरग्रंथ के माध्यम से एक ऐसा मार्ग प्रशस्त हुआ है। जो व्यक्ति को आत्मोत्सर्ग और आत्मोत्कर्ष के परम लक्ष्य तक पहुँचा देता है। इसमें श्रीराम के जीवन की संपूर्ण गाथा बड़े विस्तार से सात काण्डों में की गई है।

रामायण के पूर्व वैदिक ग्रंथों के अतिरिक्त छन्दों में आबद्ध कोई भी अन्य ग्रंथ या रचना उपलब्ध नहीं थी। वाल्मिकी द्वारा रचित 'रामायण' ही भारतीय संस्कृति की प्रथम अनुपम, अद्भुत और अभूतपूर्व काव्यमयी ऐतिहासिक कृति है। इसलिए वाल्मिकी रामायण को आदिकाव्य के नाम से भी जाना जाता है। रामायण, महाभारत, श्रीमद्भागवत आदि ऐसे ग्रंथ है। जिन्हें काव्य की कोटि में रखा जाता है, लेकिन ये विशुद्ध रूप से ऐतिहासिक ग्रंथ हैं। 'रामायण' श्रीराम के कार्यों की प्रतिपादक होने से ये कर्म प्रधान है। महाभारत की कथा लोक-आचार, लोक-व्यवहार तथा सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक सामग्रियों की विशाल भंडार होने के साथ श्रीमद्भागवत की कथा लोक में न्याय-अन्याय, राग-द्वेष, मैत्री-कलह के जागरूक संघर्ष को मिटाने तथा भगवान् श्रीकृष्ण की मधुर लीलाओं के कारण भक्ति प्रधान है। इन ग्रंथों के द्वारा भारत के दो स्वर्णिम युग के इतिहास की जानकारी हमे मिलती है। जिस समय हमारी संस्कृति उन्नति के चरमशिखर

पर थी। वेदों में श्रीराम कथा से संबंधित विभिन्न पात्रों का उल्लेख मिलता है, जैसे- इक्ष्वाकु, अश्वपति, जनक, कैकेई, सीता, राम आदि। 'वेदों में इतिहास नहीं है। यदि इसे प्रमाण मान कर कुछ देर के लिए वेदों में उल्लेखित पात्रों के नाम छोड़ भी दिये जाय तो भी अयोध्या, शृंगवेरपुर, प्रयागराज, चित्रकूट, पंचवटी, हिमालय आदि स्थानों के नाम तो ऐसे हैं। जो श्रीरामकथा से अनन्य भाव से जुड़े हुए हैं। ये सभी स्थान भारत भूमि पर आज भी उतने ही पूजनीय तथा दर्शनीय है। जितने श्रीराम के समय में रहे हैं। उनका श्रीरामकथा से जुड़ाव भारत भूमि पर आज भी इस बात को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त है, कि अयोध्या के 'इक्ष्वाकु वंश' के राजा दशरथ के यहाँ श्रीराम जन्में है।

अपने पिता के वचनों को प्रमाण मान कर अयोध्या का राज्य छोड़ श्रीराम चौदह वर्षों के लिए वनवास चले जाते हैं। वनवास काल के दौरान पंचवटी में उनके रूप सौंदर्य पर मुग्ध हुई शूर्पनखा को उसके अनुचित कृत्य पर दण्ड देने के लिए श्रीराम की आज्ञा होने पर लक्ष्मण जी उसके नाक कान काट देते हैं। वह रोती हुई अपने भाई खर और दूषण के पास जा कर उसे अपने अपगान का बदला लेने के लिए उकसाती है। दोनों भाई चौदह हजार राक्षसों की सेना लेकर श्रीराम के पास जाते हैं। युद्ध में श्रीराम खर और दूषण सहित पूरी सेना को कुछ समय में ही समाप्त कर देते हैं। उनके नाश के बाद शूर्पनखा अपनी व्यथा ले कर 'रावण' के पास जाती है। रावण मारीच की सहायता से अपनी बहन का अपमान और भाईयों की हुई मृत्यु का बदला लेने की दृष्टि से श्रीराम की पत्नि सीता का हरण कर उन्हें लंका ले जा कर 'अशोक वाटिका' में बंदी बना कर रख देता है। उनकी खोज में निकले श्रीराम-लक्ष्मण को हनुमान जी से यह जानकारी मिल जाने के बाद कि सीताजी लंका में हैं। श्रीराम उन्हें मुक्त कराने के लिए अपनी वानर सेना सहित लंका पहुँचना चाहते हैं। लेकिन सागर उनके मार्ग का अवरोधक बनता है। सामने अथाह सागर को देख कर सागर को कैसे पार करें और रावण को कैसे परास्त करें। यह विचार करते हुए उन्हें प्यास लगी। वानर उनके लिए जल ले लाए। लेकिन उन्हें स्मरण हुआ कि मैंने अपने स्वामी भगवान् शंकर के दर्शन किये ही नहीं, फिर यह जल कैसे ग्रहण कर सकता हूँ। उन्होने अपने ईष्टदेव 'शिव जी' की पूजा अर्चना के लिए 'श्री रामेश्वरम्' की स्थापना की भगवान् शंकर पार्वती तथा गणेश के साथ प्रकट होकर उन्हें विजयी होने का वरदान दिया। उनकी कृपा से अपार सागर को पार कर उन्होंने रावण और राक्षसों का शीघ्र ही संहार कर दिया। ये दोनों ही प्रसंग अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं। ये श्रीराम कथा का एक ऐसा महत्त्वपूर्ण मोड़ है जिसने श्रीराम की कीर्ति-कथा की ध्वज पताका को दिगदिगन्त में फहरा दिया है। जिसके फलस्वरूप भारत की इस महान् धार्मिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक गाथा को अर्न्तराष्ट्रीय स्वरूप प्राप्त हुआ। इनका वर्णण हजारों वर्ष पूर्व से लिखे जाते रहे विभिन्न ग्रंथों में आया है, बल्कि स्थान-स्थान पर बने चित्रों, विभिन्न मंदिरों आदि में उत्केरित भित्तिचित्रों तथा शिलापट्टों में भी विद्यमान हैं। भारतीय संस्कृति की इस अनुपमेय विभूति 'श्रीरामचंद्र' ने संस्कृत, प्राकृत, पालि आदि प्राचीन भाषाओं में ही नहीं बल्कि तमिल, बंग्ला, मराठी, हिन्दी, पंजाबी तथा आधुनिक भारतीय भाषाओं के साथ-साथ अनेक विदेशी भाषाओं जैसे खोतानी, मंगोली, गारो, चीनी, थाई, जापानी, नेपाली, सिंहली, कवि (इण्डोनेशिया-जावा), ख्मेर (कंबोडिया) मलय, अंग्रेजी, पुर्तगाली, स्पेनी, फ्रांसिसी, इतालवी, जर्मन, रूसी, हंगेरी, इथोपियन आदि विद्वानों, कथाकारों, मूर्तिकारों, चित्रकारों कलाकारों आदि को भी अपनी और आकर्षित कर उन्हें प्रेरित किया है। इस प्रकार भारत की प्राचीन और अर्वाचीन भाषाओं सहित एशिया के प्रमुख भाषाओं के अलावा यूरोप, अफ्रीका, अमेरिका आदि महादेशों में श्रीराम की कथा न जाने कब भारतीय सीमाओं को लांघ कर विश्व पटल पर पहुँच गई। तभी से वह निरंतर अपनी उपादेयता और उपयोगिता ही नहीं अपनी गरिमा और महत्ता भी स्थापित करती आ रही है। यही कारण है, कि आज भारत की सभी भाषाओं, उपभाषाओं, बोलियों

और उपबोलियों के साथ-साथ विश्व की सभी प्रमुख भाषाओं में यह न केवल विद्यमान है बल्कि उन क्षेत्रों के जन-जीवन को अपनी सुगंधी से सुवासित करती आ रही है। यह आज विश्व भर में स्थान, विचार, काल, परिस्थिति, व्यक्ति आदि के भेदों के होते हुए भी सभी जगह विविध रूपों, विद्याओं और प्रकारों में लिखि, गढ़ी, चित्रित, उत्क्रेरित आदि रूपों में मिलती है। इस प्रकार वाल्मिकी के श्रीराम कथा के आधार पर विश्व के कोने-कोने में स्थित हजारों ग्रंथ लिखे गये हैं। इतने विस्तृत क्षेत्र में इतनी अधिक भाषाओं में इतने विशाल साहित्य भंडार का निर्माण हजारों वर्षों से लगातार किसी काल्पनिक कथा पर लिखे जाते रहना असंभव है। इस कथा के पीछे ठोस ऐतिहासिक आधार है। अमेरिका की प्रसिद्ध वैज्ञानिक संस्था 'नासा' (नेशनल एरोनॉटिक्स एण्ड स्पेस एजेन्सी) द्वारा 1992 में छोड़े गये आई0आर0एस0-1 द्वारा खींचे गये भूमि से नीचे के चित्रों का इसके प्रमाणिकता में महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। इन चित्रों में भारत और श्रीलंका के बीच स्थित श्रीराम सेतु/ एडम ब्रिज साफ दिखता है। 1993 में आयोजित दिल्ली के एक प्रदर्शनी में जनता के लिए इसे प्रदर्शित किया गया था।

2300 वर्ष पूर्व बौद्ध धर्म के इतिहास के अनुसार अशोक के पुत्र महेन्द्र और पुत्री संघमित्रा लंका में बौद्ध धर्म के प्रचार के लिए इसी सेतु से गये थे।

लंका के प्राचीन काल के सिक्कों पर भी इस सेतु का चित्र विद्यमान है। पाँचवीं शताब्दि में राजा दामोदर सेन द्वारा प्राकृत भाषा में रचित सेतुबंध काव्य में इस सेतु का उल्लेख है।

1747 में यूरोप के एक देश नीदरलैंड में मालाबार-बोवन के बने एक मानचित्र में इस सेतु को 'रामन कोबिल' नाम से दर्शाया गया है। नौवी शताब्दि के इण्डोनेशिया जावा के प्रम्बनम मंदिर की परिक्रमा में इस सेतु के निर्माण की कथा का चित्रण मिलता है। इस प्रकार के अन्य साक्ष्य इतिहास में मिलते हैं:-

1. थाईलैंड में श्रीराम की कथा काफी समय पूर्व जब वहाँ भारत के लोग पहुँचे थें। उसी समय से प्रभावी रूप से चलती आ रही है। वहाँ की जनता में श्रीराम कथा को बड़ी लोक प्रियता प्राप्त है। वहाँ भारत के श्रीराम कथा से संबंधित वाल्मिकी की रामायण संस्कृत के ग्रंथ अनुवाद सहित तो सुलभ है ही साथ ही स्थानीय भाषा में भी यह कथा लिखी गई है। जिसे 'रामकीन' नाम से अभिहित किया गया है। जो वाल्मिकी के श्रीराम कथा का ही अनुसरण करती है। लेकिन इसमें घटनाओं का विकास भिन्न रूप में हुआ है तथा पात्रों के नाम भी बदल दिये गये हैं।

2. कम्बोडिया में वहाँ की भाषा में श्रीराम कथा को रामकेर/रामकीर्ति नाम दिया गया है। इसमें राम की कीर्ति का ही गान है। इसमें रचनाकार का नाम और रचनाकाल अज्ञात है। इसकी कथा पर मलय भाषा में लिखित सेरिराम का प्रभाव बड़ी मात्रा में है। इसमें श्रीराम को विष्णुभगवान का अवतार माना गया है।

3. इण्डोनेशिया में सैकड़ो वर्ष पूर्व ही भारतीय संस्कृति का प्रभाव बड़े व्यापक रूप में गहराई से व्याप्त रहा है। इस देश के मुस्लिम बहुल हो जाने पर भी श्रीराम कथा का मंचन बड़े ही प्रभावशाली ढ़ंग से किया जाता है। वहाँ के राष्ट्रीय जीवन में श्रीराम कथा का अंत्यत प्रमुख स्थान रहा है।

4. एशिया के मध्यभाग में आज जहाँ सिक्यांग है। वहाँ पूर्व काल में भारत की 'खोतान' नाम की एक प्रसिद्ध व्यापारिक मण्डी थी। इस क्षेत्र में भारत के किरातवंशी लोग पहुँच गये थे। कुछ लोग वहाँ बसे भी। इस प्रकार जहाँ भारतीय होगें, वहाँ श्रीराम कथा तो होगी ही लेकिन प्रस्तुति थोड़ी भिन्न है।

5. जापान में वाल्मिकी रामायण के आधार पर जापानी भाषा में लिखित 'होबुत्सुशू' में श्रीराम कथा को संक्षिप्त रूप में संकलित किया गया है। यह सीधे भारत के बदले चीनी भाषा में हुए अनुवादों के माध्यम से आई है। इसमें श्रीराम कथा जातक शैली में दी गई है। इसमें श्रीराम 'बुद्ध' के पूर्व जन्मधारी बतलाये गये हैं।

6. भारत के प्राचीन साहित्य में उस देश को जिसे आज 'मलेशिया' कहा जाता है उसे मलयदेश के नाम से अभिहित किया गया है। भारत और मलय के संबंध अत्यंत प्राचीन काल से ही बड़े घनिष्ठ रहे हैं। भारतीय साहित्य में सुंदर वायु को सदा ही मलयांचल से आने वाली वायु के रूप में लिखा गया है। इस देश में इस्लाम के पहुँचने से पूर्व वहाँ के जीवन-दर्शन, सामाजिक-परिवेश, भाषा आदि पर भारतीय प्रभाव पूरी तरह से छाया हुआ था। अतः यहाँ भी श्रीराम कथा का विस्तार होना स्वभाविक ही था। इसका आधार भी वाल्मिकी का रामायण ही है। लेकिन कथा के विस्तार, पात्रों के नाम, चरित्र-चित्रण तथा घटनाओं के स्वरूप आदि पर बौद्धमत, जैनमत और स्थानीय मुस्लिम प्रभाव का बहुत प्रभाव है। सेरीराम की कथा में राजा दशरथ को हज़रत अल्लाह का पड़पोता बतलाया गया है। हनुमान जी के अनेक विवाह एवं रावण द्वारा 20 वर्ष तक अल्लाह की तपस्या कराई गई है।

7. भौगोलिक दृष्टि से स्वेज नहर के निर्माण से पूर्व अफ्रीका भारत सहित एशिया के विभिन्न देशों के साथ भू-भाग से जुड़ा हुआ था। जिसके कारण भारतीय संस्कृति का प्रभाव वहाँ के देशों में पहुँचा। आज भी वहाँ कई नीग्रो कबीलों के जन जीवन में भारतीय जीवन के अनेक संस्कार विद्यमान है। डा0 शिव कुमार अवस्थी के अनुसार भगवान श्रीराम के पुत्र कुश ने इराक, ईरान, अरब, अफ्रीका को विजित कर अपने साम्राज्य की स्थापना की। अफ्रीका के देशों के नाम आज भी भारतीय भाषाओं के बिगड़े हुए स्वरूप ही हैं, जैसे सूडान (शिवदान), त्रिपोली (त्रिपुर साम्राज्य) सोमालिया (रावण के नाना सुमाली का राज्य)। इथोपिया के राजा स्व0 हैल सिलासी तो स्वंय को कुशाइट ही मानते थे। उनकी रामायण के प्रति बड़ी श्रद्धा थी।

श्रीराम कथा को विश्वव्यापी बनाने में जहाँ वैष्णवों, शैवों का योगदान रहा वहाँ बौद्ध भी पीछे नहीं रहे। वे इसे दक्षिण पूर्व एशिया के सुदूर देशों जैसे- इण्डोनेशिया, मलेशिया कम्बोडिया, वियतनाम, चीन, जापान, कोरिया, आदि जगहों पर प्रचारित प्रसारित किया। इन देशों में श्रीराम मौलिक और अनुवादित दोनों रूपों में विद्यमान है। जो विश्व के जनमानस को आदर्श जीवन यापन के लिए अनुप्रेरित करती आ रही है ओर जब तक ये पृथ्वी है करती रहेगी।

संदर्भ ग्रथ

1. विश्वव्यापी भारतीय संस्कृति - डा0 शिव कुमार अवस्थी।
2. श्रीराम सेतु - श्री रघुनन्दन प्रसाद शर्मा
3. 30 अक्टूबर 2007 को हिन्दी 'दैनिक जागरण' में प्रकाषित सुश्री सरोज बाला का लेख 'हमे गर्व होना चाहिए' के आधार पर।
4. अफ्रीका में हिन्दू संस्कृति 'राष्ट्रधर्म' मासिक आक्टूबर 2000 के अंक से आदि।

ग़ज़ल की साहित्यिक एवं सांस्कृतिक उपलब्धियाँ

श्रीमती स्मृति शुक्ला

गायन विद्भाग, संगीत एवं मंचकला संकाय
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

मनुष्य जाति का वह सौंन्दर्य-बोध जो बहुतों को आकर्षित कर बार-बार प्रभावित करता रहा है उसे विद्धानों ने कला के रूप में परिभाषित किया है।

क्षणै : क्षणै : यगनवता भुपैति,
तदैव रूपम रमणीयतयाः।।

अर्थात्-प्रतिक्षण जो विचार या वस्तु श्रोता या दर्शक के समाने बार-बार देखने पर हर बार नया रूप लेकर के सामने आये वही खूबसूरत, सुन्दर व रमणीय है। इंसानी जिंदगी से जुड़ा हुआ यह संगीत भी कई विधाओं में प्रकट हुआ है जिसे शास्त्रकारों ने नियमबद्ध कर अलग-अलग नाम दिये है। वर्तमान काल में विधाओं को दो भागों में प्रस्तुत किया जाता है-शास्त्रीय विद्या तथा उप-शास्त्रीय विद्या। शास्त्रीय विधा को नियमों में बाधा जाता है तथा उपशास्त्रीय विद्या के अन्तर्गत संगीत कला के सभी तत्व होते हुए भी नियमों के प्रति प्रतिबद्धता नही रहती। ऐसी उपशास्त्रीय शैलियों में गज़ल गायन शैली प्रमुख है और जिसका प्रभाव क्षेत्र निरंतर फैलता जा रहा है। गज़ल जो अपने मूल में एक काव्यात्मक साहित्यिक रचना है, संगीत के साथ संगठित होकर एक विशिष्ट शैली बन गयी है, इस शैली ने काव्य तथा संगीत दोनों ही कलाओं पर अपना पूर्ण अधिपत्य जमा दिया है। गज़ल जिन्दगी का मिठास है, जिन्दगी की खूबसूरती और अन्दर की खुशबू का एहसास है। गज़ल-गायन शैली हर दौर में, हर वर्ग में और हर धर्म में मानने वालों में सबसे अधिक लोकप्रिय शैली रही है।

यद्यपि अभिव्यक्ति के सन्दर्भ में आज की गज़ल में प्रतीक के रूप में एक व्यक्ति या एक वस्तु को आधार माना जाता है, किन्तु प्रभाव के स्तर पर उसका क्षेत्र सम्पूर्ण समाज और मानव जाति होती है इसलिए वर्तमान काल में गज़लों में हुस्न-इश्क और प्यार की अमराईयों की महंक के साथ पारिवारिक प्रेम देश-प्रेम व विश्व-प्रेम का व्यापक समावेश मिलता है। फारसी या उर्दू कविता में छन्द में बंधे हुए शब्दों को शेर कहते हैं किन्तु एक ही छन्द में बंधु हुए कई शेरों से बनी रचना में जब गीतात्मक का तत्व प्रकट होता है तो वह ग़ज़ल कहलाती है। गीत को लयबद्ध कात्यात्मक अभिव्यक्ति कहा जा सकता है। गज़ल का स्वरूप चार तत्वों, काव्य की विषय-वस्तु, शिल्प, गीतात्मक और संगीत से मिलाकर बनता है। ग़ज़ल का प्रादुर्भाव 12 वीं शताब्दी में हुआ और इसी काल में उर्दू, भाषा का जन्म हुआ। इस उर्दू भाषा में स्थानीय भाषा के अलावा अरबी, फारसी, तुर्की शब्दों का समावेश हआ। उर्दू भाषा को कुछ लोग 'लश्करी' हिन्दी, या हिन्दवी नाम से पुकारते है। 13वीं शताब्दी में अमीर खुसरों ने न सिर्फ फारसी ग़ज़ल वरन् हिन्दी ग़ज़ल कहने का भी एक खास अंदाज पैदा किया। 12वीं शताब्दी में आकर ग़ज़ल गायन शैली को भी एक महत्वपूर्ण

गायकी माना गया है। सरल भाषा एवं संगीत के हर पहलू की गायकी का ग़ज़ल गायन शैली में समावेश होता है। ग़ज़ल में ईश्वरीय प्रेम समावेश करते हुए उसे सांगीतिक स्वरूप में प्रस्तुत करके सूफीयों ने लोगों में प्रेम तथा दया के भाव को फैलाया।

ग़ज़ल ने पूरे देश को एक सूत्र में बांधने और देश के एक कोने से दूसरे कोने तक के रहने वालों में एक देशीयता की भावना का एहसास करानें में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। गज़ल ने व्यक्तियों और सामूहिक स्तर पर समाज की दार्शनिक दृष्टि धार्मिक, भावना, और कलात्मक रूचियों को परिस्कृत करने में अधिकांश जीवन के दार्शनिक दृष्टि की व्याख्या की जाती है। ग़ज़ल अपने साहित्यिक और सांगीतिक रूप में पूरे भारत के विभिन्न धर्मो के मानने वालों को सामान्य रूचि का विषय है। ग़ज़ल ने समाज के विभिन्न पक्षों व रूचियों को समृद्ध किया है और समाजिक व सांस्कृति परिवर्तनों को सही दिशा-बोध प्रदान करने में अपनी अहम भूमिका निभायी है ग़ज़ल ने संगीत के साथ-साथ सभी कलाओं को प्रभावित किया है।

दुनिया जिसे कहते है जादू का खिलौना है,
मिल जाए तो मिट्टी है, खो जाए तो सोना है।
जगजीत-चित्र
निदा-फ़ालजी

मैं हवा हूँ कहाँ, मेरा,
दशत मेरा ना ये चमन मेरा।
अहमद हुसैन मोहम्मद हुसैन
अमीक हनफी

गज़ल के इन्ही शेरों का व अनेक भावों को संगीत के माध्यम से आम लोगों के दिलो-दिमाग में उतारा गया है और उससे सामान्य लोगों के व्यवहार प्रतिमाओं एवं चारित्रिक मूल्यों को ऊपर उठाने में सहयोग मिला है।

गज़ल एक कात्यात्मक संगीतात्मक अभिव्यक्ति है जिसमें साहित्य और संगीत दोनों का रूप, सौन्दर्य लावण्य और अनुरंजकता एक साथ एक स्थान पर विद्यमान रहती है। आधुनिक काल में गज़ल में इन्सानी जिन्दगी का हर पहलू अपने सूक्ष्म से सूक्ष्मतर तक बयान होता है। जिन्दगी का कोई लम्हां और फिजां ग़ज़ल के दायरे से बाहर नही होता और हर बयान इन्सान की अन्दर की सांसो को छूने वाला होता है। ग़ज़ल साहित्य एवं संगीत का एक समन्वित सम्मिलित रूप है, इसमें जितनी नज़ाकत, नफ़ासत और सूक्ष्मता के साथ साहित्यिक अभिव्यक्ति होती है उतनी ही सूक्ष्मता, बारीकियों व गहराई लिए हुए संगीत भी जुड़ा हुआ रहता है। संगीत के सभी सामान्य एवं सूक्ष्म तत्वों को अपने साथ लिए ठहरते हुए भी ग़ज़ल शुद्ध शास्त्रीय शैली न रहकर लोकनुरंजन गायन शैली के रूप में प्रकट हुई। ग़ज़ल संगीत का वह स्वरूप है जो कि संगीत की अत्यन्त लाक्षणिकता को अपने में समेटे हुए संगीत की समग्र सार्वभौम कल्पना, मूल्यों और मानदण्डों को एक भिन्न स्वरूप और स्वभाव में सुप्रतिष्ठित करती है। सांगीतिक रूप में गज़ल के काव्यगत अर्थो भावो के अनुरूप रागों और स्वरों का संयोजन और ताल ठेकों का संयोजन नज़र आता है। यही ध्यान देने योग्य बात है कि गज़ल की सांगीतिक संरचना की यह विशेषता उर्दू गज़ल को साहित्यिक शास्त्रीय से प्रभावित रहती है। देश के विभिन्न प्रांतो और विभिन्न धर्मो के गायकों तथा जगजीत सिंह, राजकुमार रिज़वी, पीनाज मसानी, ऐ0 हरिहरन, चन्दनदास जैसे गायक-गायिकाओं ने इसका श्रृंगार किया है। गज़ल पर मेंहदी हसन और गुलाम अली का भी उतना ही हक है जितना के0 एल, सहगल का अर्थात गज़ल पर जितना हक पाकिस्तान का है उतना ही एक हिन्दुस्तान का भी है। गज़ल गायन के परिणाम स्वरूप शास्त्रीय शैली में कंठ संगीत से लेकर नृत्य तक नई-नई उपजे और प्रस्तुतियाँ शास्त्रीय सांगीतिक परिवेश में समाविष्ट हुई हैं। यही नहीं आधुनिक काल के गज़ल गायन

ने जन सामान्य की साहित्यिक सांगीतिक व सांस्कृतिक रूचियों के स्तर बढ़ाते हुए हिदुस्तानी संगीत के समाजीकरण में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। गज़ल ने देश से राष्ट्रीय एकता और भावात्मक एकता के दृष्टिकोण को आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने के साथ आदर्श, नैतिकता, निरपेक्षता, देशप्रेम, त्याग आदि जीवन मूल्यों को जनसाधारण के व्यवहार का अंग बनाने में मदद की है।

गज़ल संगीत की समग्र, सार्वभौम, कल्पना मूल्यों व मानदण्डो को अपने आन्तरिक कलेवर में समेटे हुए संगीत की एक लोकप्रिय शैली के रूप में सुप्रतिष्ठित हुई है।

सन्दर्भ सूची

1. भण्डारी, डॉ0 प्रेम, हिन्दुस्तानी संगीत में ग़ज़ल गायकी राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1992
2. www.wikipidia.com
3. www.ghazal.net.
4. शर्मा, डॉ0 मृत्युंजय, त्रिपाठी राम नारायण, संगीत मैनुअल, एच0जी0 पब्लिकेशन नई दिल्ली, -110062

वैश्विक संदर्भ में राम

कुमारी गीतांजली

हिन्दी साहित्य, नेट/जे0आर0एफ0
बी0आर0ए0 बिहार विष्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर

यह तथ्य सर्वविदित हैं कि संसार को श्रीराम कथा महर्षि वाल्मीकि के द्वारा प्रप्त हुई, जिनका अभिनंदन गोस्वमी तुलसीदास जी ने रामचरितमानस की प्रारंभिक पंक्तियों में इस प्रकार किया - ''वंदे विशुद्ध विज्ञानो कवीश्वर कपीश्रै।'' अर्थात श्री वाल्मीकि जी को श्री हनुमान के समकक्ष रखा - वह भी हनुमान जी से पहले।

आज से लगभग सवा चार सौ वर्ष पूर्व गोस्वामी तुलसीदास जी ने रामचरित मानस की रचना की (सम्वत् 1631 अब 2067) जो एक युगांतकारी घटना थी। हिन्दी की सरल अवधी बोली में होने के कारण इसकी लोकप्रियता दिन दूनी - रात चौगुनी बढ़ने लगी। अब बहूसंख्यक हिन्दी भषियो को रामकथा जानने समझने के लिए अन्य माध्यम यानी विद्वान या पंडित की जरूरत नहीं थी। इसके साथ ही श्रीराम के परमात्म तत्व को प्रकट करने वाली दो धारा वाल्मीकि रामायण सहीत बेदों, उपनिषदों, पुराणो, संहिताओं आदि में थी, वह रामचरित मानस के माध्यम से कहीं अधिक सशक्त और व्यापक बनकर जन-जन के ह्रदय तक पहुच गई। तत्पश्चात् उन्नीसवी शताब्दी में जब लाखो प्रवासी भारतीय कुली या मजदुर बनकर पूर्व और पश्चिम के सुदुर देशों - फिजी, मॉरीशस, गुयाना, सूरीनाम, ट्रिनीदाद आदि में पहुचे तथा बीसवी शताब्दी में व्यापारी बनकर अफ्रीकी, अमेरीकी, युरोपीयन तथा अनेक एशियाई देशों में पहूंचे, ते इन अधिकांश आस्थावादी धार्मिक लोगों के द्वारा रामचरितमानस भी वहाँ पहुँच गया। मानस के अध्यात्मिक अवलम्ब के बल पर ही उन्होने उन देशों मे बड़ी से बड़ी समस्याओं और संकटो का सामना किया, अपने अस्तित्व और अस्मिता की रक्षा की और बाद में ऐसी महत्वपुर्ण सामाजिक स्थिति बना ली जिसमें वे उन देशो के भाग्य विधाता यानी गवर्नर जनरल, राष्ट्रपति, प्रधानमंत्रे, मुख्य न्यायधीश आादि बने। मानव इतिहास में यह धटनाक्रम अपना एक अलग ही महत्व रखता हैं।

रामचरितमानस प्रवासी भारतीयों के माध्यम से कोटि-कोटि घरों में पहूँचा। इस प्रकार रामकथा को विश्वव्यापकता प्रदान करना मानव इतिहास का एक गौरवपूर्ण अध्याय बन गया हैं। इसे यदि हम रामकथा के माध्यम से भारतीय संस्क ति के दिग्विजय की कथा मानें तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। वास्तव में यह दिग्विजय से अधिक विश्ववंधुत्व की स्थापना का एक उपक्रम है। श्रीराम ने वास्तुतः राज्य नहीं जिते बल्कि लोगो के ह्रदय जीते। लंका जीतकर विभीषण को सौपना और किष्किंधा जीतकर सुग्रीव को राजा बनाना श्रीराम के स्वभाव की उसी उदारता का परिचायक हैं। इसके बाद ही रामराज्य की स्थापना हुई थी। मानव ह्रदयों में रामराज्य की स्थापना का आधार भी यहीं माना जा सकता हैं।

हरियाणवी लोकगीतों में राम

डॉ0 मन्दीप कौर
गुरू नानक गर्ल्स कॉलेज , पंजाब

हरियाणा उत्तर भारत का एक प्रसिद्ध राज्य है। यह उत्तर भारत में हिमाचल, दक्षिण एवं पश्चिम में राजस्थान और पंजाब, पूर्व में यमुना नदी इसे उत्तराखण्ड और उत्तरप्रदेश से अलग करती है। राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली तीन और से इससे घिरी हुई है।

हरियाणा शब्द की उत्पत्ति ही 'हरि' के नाम से हुई है। हरियाणा शब्द 'हरि' और 'अयण' इन दो शब्दों के मेल से बना है। हरि का अर्थ है भगवान विष्णु और अयण का अर्थ है निवास। अतः हरियाणा शब्द का अर्थ हुआ भगवान विष्णु का निवास स्थान। कोई हर अर्थात भगवान शंकर से इसका सम्बन्ध जोड़ता है। हरियाणा का एक अर्थ हरिआरण्यक अर्थात हरि का वन भी लिया जाता है। वैदिक युग में यह देवभूमि ऋषियों का तपस्थल रही है। कितने ही शास्त्र ग्रन्थ एवं पुराण इसी देवभूमी में प्रणीत हुए।

हरियाणा के लोकगीतों का हरियाणवी संस्कृति और लोक साहित्य में बहुत बड़ा स्थान है। हरियाणवी जीवन का हर पक्ष किसी ना किसी रुप में इनसे जुड़ा हुआ है। हरियाणा में विभिन्न अवसरों पर लोक गीत गायन की परम्परा है चाहे विवाह आदि का अवसर हो, त्यौहार हो या धार्मिक आयोजन। हरियाणवी लोकगीतों का अध्ययन करने से पहले यह जान लेना आवश्यक है कि लोकगीत होते क्या हैं।

लोकगीत लोक के गीत होते हैं, जिन्हें कोई एक व्यक्ति नहीं बल्कि पूरा समाज अपनाता है। सामान्य लोक में प्रचलित, लोक द्वारा रचित एंव लोक के लिए लिखे गए गीतों को लोकगीत कहा जाता है। शास्त्रीय नियमों की परवाह न करते हुए सामान्य लोक व्यवहार के उपयोग में लाने के लिए मानव अपने आनन्द की तरंग में जो छन्दोबद्ध वाणी सहज उ ूत करता है, वही लोकगीत है। अतः लोकगीत शब्द का अर्थ है :

1. लोक प्रचलित गीत
2. लोक रचित गीत
3. लोक विशयक गीत

लोकगीतों के अन्तर्गत संस्कार गीत (जन्म, मुण्डन, पूजन, विवाह, जनेऊ आदि अवसरों के गीत), पर्व गीत (बसंत, सावन आदि), लोक गाथा या गाथा गीत (आल्हा, ढोला आदि), पेषा गीत (गेहूँ पीसते हुए, फसल काटते हुए) तथा जातीय गीत आते हैं। ये लोकगीत खुषी, दुःखों, ऐतिहासिक घटनाओं तथा पौराणिक कथाओं का प्रतिनिधित्व करते हैं।

हरियाणा के लोकजीवन में राम नाम का सुमिरन जीवन पथ का सबल सहारा बना हुआ है। हरियाणा में किसी के मिलने पर 'राम - राम' शब्द से अभिवादन किया जाता है। पाष्चात्य प्रभाव के कारण शहरी क्षेत्र में भले ही हैलो, गुड मॉर्निंग आदि शब्दों को अपना लिया है परन्तु ग्रामीण आँचल में अभी भी राम - राम शब्द का महत्व कम नहीं हुआ

है। 'राम' शब्द हरियाणा के जनमानस में रचा बसा हुआ है। हरियाणवी जीवन की उक्तियाँ ''कर लो सो काम, भज लो सो राम'', अन्धे की माक्खी राम उड़ावै'' आदि स्पष्ट करती हैं कि हरियाणा के लोगों के मन में राम नाम के प्रति गहरी आस्था है। किसी नए कार्य के शुभारम्भ से पहले 'ले राम का नाम सब भली करे भगवान' कहते लोगों को अकसर सुना जा सकता है।

हरियाणा में दशहरे से पहले राम कथा का मंचन हर गाँव, हर शहर में किया जाता है, जिसे रामलीला कहा जाता है। हरियाणा में सभी नर नारी, बच्चे बूढ़े राम लीला का आनन्द लेते हैं। हरियाणवी लोकगीतों में राम के जन्म सें लेकर जीवन पर्यन्त उनके प्रत्येक किया कलाप सम्बन्धी लोकगीत मिलते हैं। राम के जन्म से पूर्व राजा दशरथ की चिन्ता को दर्शाता एक लोकगीत निम्न है :

छज्जे पे बैठे राजा दशरथ बहुत दुखी हैं जी।
राणी कहो न गरभ की सी बात संतान म्हारै ना है जी।।
आच्छे पंडत बुलाओ, हां बेग बुलाओ जी।
पंडत करम तो बाँच संणाओ संतान म्हारै ना है जी।।
कागद हो ते मैं बाँच्या, हाँ बाँच सुणाऊ जी।
राजा करम तो बाँच्या ना जाय, संतान थारै होगी जी।।
आच्छे आच्छे माली अर बेग बुलाओ जी।
माली ल्याओ जंगल की बूटी, कौसल्या के ताँही जी।
सुमित्रा के ताँही जी, केकई के ताँही जी। कहाँ ते ल्याओ सिलैया अर कहाँ ते लुढ़िया जी।।
पहाड़ा ते ल्याओ सिलैया अर वहीं ते लुढ़िया जी।
ठठेरे ते आला - प्याला बजाज के तै स्वापी जी।।
पहला तै प्याला कौसल्या अर दूजा सुमित्रा जी।
राजा तीजा तै प्याला केकई, तीनों गरभ तै जी।।
ये नौ दस मास हुए हैं कौसल्या ने जाए राम समित्रा ने लिछमण ए जी केकई ने भरत - चरत ये चारु भाई जी।।
जो ब्याही इस नै गावै, अर जच्चा तै सुणावै अर बोत रिझावै जी।
उसके कटैं जनम के पाप बहुत सुख पावै जी।।

उपरोक्त लोक गीत पुत्र जन्म पर गाया जाता है। हरियाणवी लोक गीतों में राम, भरत, लक्ष्मण तथा शत्रुघ्न के जन्म का वर्णन एक साथ मिलता है।

सीता के स्वयंवर के समय किस प्रकार श्रीराम अपने गुरु से आशीष लेकर अपने अँगूठे की दाब से ही शिव धनुष तोड़कर स्वयंवर जीत जाते हैं इस प्रसंग पर एक प्रसिद्ध हरियाणवी लोकगीत इस प्रकार है :

सीता का सुअम्बर रच रह्या है,
उड़े राज्जा जुड़े हजार।
वो रावण घणा घमण्डी हे,
वो ल्याया फौज चढ़ाए।
वा फौज चुगरदे नै फिरग्यी हे,
उह्तै टूट्या ना धनस बाण।

वो लिछमन झट - पट उठया हे, उसकी सै उमर नादान। वो रामचन्दर जी उठ्ये हे, लिए गुरू चरण चुचकार।

गूट्ठे की दाब लगी थी हे, उह्के हो गए टुकड़े च्यार। राजा जनक ने मारी किलकारी हे यो किस राणी का लाल।

राजा दसरथ फूल्या हाण्डै हे, यो सै कौसल्या का लाल। सीता जयमाला ल्याई हे, उह्के संग की सहेली साथ।

थाली मै चमकता दीवा हे, उड़ै हो रह्यी जय - जयकार।।

उपरोक्त लोकगीत में श्रीराम के योद्धा रुप के दर्शन तो होते ही हैं जो अपने अँगूठे की दाब मात्र से ही उस धनुष को तोड़ देते हैं जिसे रावण अपनी पूरी सैना की मदद से भी नहीं तोड़ पाया, साथ ही श्रीराम की अपने गुरु के प्रति आस्था को भी सरलता से दर्शाया गया है। स्वयंवर के प्रसंग से नारी को अपना वर चुनने की दी जाने वाली स्वतन्त्रता का भी पता चलता है।

श्रीराम के वन गमन का दृश्य भी कई लोकगीतों में दिखाई देता है। केकई किस प्रकार प्रभु राम के लिए वनवास और भरत के लिए राज्य की माँग करती है इस प्रसंग का एक उदाहरण देखिए :

- - - - - - - - - - - - -

माँगण हो सो माँग ले राणी, आहें तन्नै द्यू सू दो वरदान।।
माँगूगी हो पिया दिया ए ना ज्यागा, आहें क्यों झूट्ठे करो करार।।
हम बचाणाँ तै नहीं फिरणियाँ, आहें राणी क्यों करे मखौल।।
राम अर लिछमण फिरे बणाँ मैं, आहें दियो चरत - भरत नै राज।।

उपरोक्त लोकगीत में रघुकुल की वचनबद्धता का पता चलता है। अपनी वचनबद्धता के कारण राजा दशरथ अपने प्राणप्रिय पुत्र राम को वनवास देते है। परन्तु अपने प्राणप्रिय पुत्र राम को वनवास भेजना उनके लिए कितना कष्टकारी रहा होगा इसका मार्मिक वर्णन निम्न लोकगीत में देखिए :

मत जाओ रे राम बणुवास, केकई ने जुलम करे।
गद्दी बैठे बाबल रोवै, सुणो राम म्हारी बात।
तम तो रे बैठा चले बाणाँ मै कोण करेगा अड़े राज।
पाह्या पड़ कै राम न्यूँ बोल्ले, सुणो पिता म्हारी बात।
मैं तो वचन निभाऊँ थारा, भरत करेगा अड़े राज।

श्रीराम, लक्ष्मण और सीता जी के वन गमन और वन में व्याप्त मुश्किलों का वर्णन निम्न लोकगीत में झलकता है।

राम अर लछमण दसरथ के बेटे दोनों बण खण्ड जां
एजी कोए राम मिले भगवान।
इक बण चालै दो बण चालै तीजे मैं लग आई प्यास
एजी कोए राम मिले भगवान।
ना अड़े लोटा ना अड़े गागर ना अड़े सरवर ताल
एजी कोए राम मिले भगवान।
सीताजी के बाग मां ते उड्डी ए बदरिया बरसण लागे राम एजी कोए राम मिले भगवान।

उपरोक्त लोकगीत में वन में व्याप्त मुश्किलों के साथ - साथ राम नाम की महिमा और राम के रंग में रंगने की बात भी कही गई है। एक अन्य प्रसंग में दुष्ट रावण ने सीता जी का हरण कर बंदी बना कर रख हुआ है। रावण की पत्नी मंदोदरी अपने पति के इस कुकृत्य से क्षुब्ध होकर उसे समझाने का प्रयास करती है। वह श्रीराम की शक्ति से भी परिचित है। निम्न लोकगीत में राम के साथ हनुमान और लक्षमण की भी महिमा की गई है :

कहै मंदोदरी सुण पति रावण सुपना बीसों बीस।
कूदत दिखे बांदरां और यो कटा दीखै सीस,
तुम सिया नै लैके राम से मिलो।
आठ घाट के आठ समन्दर,
आठ लगैं मेरै खाई।

मेघनाथ से पुत्र मेरे, कुम्भकरण से भाई, हनुमान जैसे बलि सै उनकै, लक्ष्मण जैसे भाई।

झट से वे समुंद्र कूदें, झट से कूदें खाई, तुम सिया नै लैके राम से मिलो।

हरियाणवी समाज में राम - लक्ष्मण और सीता की पूजा का विधान है। लोग उन्हें भगवान मानते हैं और आर्यसमाजी उन्हें मर्यादापुरुषोत्तम राम मानते हैं। हरियाणवी स्त्रियाँ पानी भरते समय, खेत जाते समय भजन गाती हैं, जिनमें श्रीराम के दर्शन की तीव्र इच्छा और दर्शन न हाने पर दुःख व्यक्त होता है :

आए थे मिले ना राम
इबके आवैं हमे बताइए
बूझें हें धरम की बात
गाय बिना हे सखी गोरा सूना
सूनी हे भाई बिना भांण
आए थे मिले ना राम

राम भक्ति की महिमा से युक्त एक अन्य हरियाणवी लोकगीत निम्न है :

मुख तै बोलो रे जै जै सीता राम,
बड़े भाग मानस तन पाया सुर ग्रन्थों ने गाया
राज भजन का करतब बनाया तज द्यो छोटे काम,

बिरथा मत डोलो रे जै जै सीता राम
राम नाम है रतन अमोला संत जन्यां नै खूब टटोल्या,
एक रत्ती अर बावन तोला पूरे कर दे काम, हिरदै मैं तोलो रे जै जै सीता राम।
आठ परकार काम नै त्यागो भगवत भगती मै तम लागो,
सोए बोत दिना तै जागो कौड़ी लागै ना दाम,
त्यार तम होल्यो रे जै जै सीता राम
इष्ट धरम आश्रम का राखो मुख ते झूठ कदे ना भाखो
गाम गाम हो आसरम लाखों बने देस हरि धाम,
पाप को ध्यो ल्यो रे जै जै सीता राम।
गऊ बैल्या की सेवा करल्यो सेवा करके पार उतरल्यो,
ईसवर भक्ति मैं चित्त धरल्यो ले ईसवर का नाम,
आश्रम खेलो रे जै जै सीता राम।

उपरोक्त लोकगीत से स्पष्ट होता है कि राम की भक्ति आज मनुष्य की अध्यात्मिक और मनोवैज्ञानिक आवश्यकता है। जब संसारिक दुःखों से मन विचलित और अशांत हो जाता है तब प्रभु सिमरन से ही आत्मा को संतुष्टि और स्थिरता प्राप्त होती है। जो व्यक्ति स्थिर चित्त होकर भगवान के नाम पर अडिग रहता है उसे भगवान की सहज प्राप्ति होती है। अतः हरियाणवी लोकगीतों में राम का महत्व सर्वत्रा दृष्टिगोचर होता है। भक्ति हरियाणवी संस्कृति की नींव है। जिस प्रकार प्राणों के बिना प्राणी का अस्तित्व बेकार है उसी प्रकार भक्ति के बिना हरियाणा के लोगों का जीवन नहीं चल सकता। हरियाणवी संस्कृति में मनुष्य का जन्म कर्म करने एवं प्रभु सिमरन के लिए माना जाता है और राम भक्ति उन्हें हीन कर्मों का त्याग कर सत्कर्मों की ओर प्रेरित करती है। लोकगीत किसी भी समाज का दर्पण होते हैं और हरियाणवी लोकगीतों से स्पष्ट है कि किस प्रकार राम हरियाणवी जनमानस में रचे बसे हुए हैं।

हिन्दी साहित्य में रामकाव्य धारा का विकास

कुमारी प्रियंका ठाकुर

शोधार्थी (कलकत्ता विश्वविद्यालय)

संसार के प्रत्येक देश के कवियों ने आदर्श पुरूष की कल्पना की है। प्रत्येक कवि की कल्पना के आधार उसके देश के सामाजिक, राजनीतिक तथा आध्यात्मिक अनुभव ही रहे हैं। अतएव किसी देश के साहित्य में चित्रित उसके सर्वोत्कृष्ट पुरूष के दर्शन कर हम उसके निवासियों के जीवन के अनुभवों की गहराई की थाह पा सकते हैं। भारतीय कवियों ने अपने काव्यों में जिन दो उत्तम पुरूषों को अभिव्यक्त किया है वे मर्यादा पुरूषोत्तम राम तथा लीला पुरूषोत्तम कृष्ण है। ये दो चरित्र इतने लोकप्रिय रहे है कि केवल भारत की विभिन्न भाषाओं में ही नहीं, अपितु अन्य देशों की जनभाषाओं में भी एक विशाल साहित्य की रचना हुई है।

रामकाव्य को भारतीय जनमानस के मध्य प्रतिष्ठित करने का मुख्य श्रेय आदि कवि वाल्मीकि को है। किन्तु रामकथा का मूलस्रोत क्या है? यह स्वयं में एक विवादित प्रश्न है। आदिकवि वाल्मीकि के पूर्व राम कथा सम्बन्धी आख्यान काव्य प्रचलित हो चुका था और इसके आधार पर वाल्मीकि ने रामायण लिखा है, इसके संबंध में बहुत मतभेद नहीं है। लेकिन अनेक विद्वानों की धारणा है कि वाल्मीकि ने पहले पहल दो अथवा तीन नितांत स्वतंत्र आख्यान एक ही कथा सूत्र में ग्रंथित करके राम कथा की सृष्टि की है। ''डॉ. वेबर के अनुसार राम कथा का मूलरूप बौद्ध दशरथ जातक में सुरक्षित है। इस कथा में सीताहरण तथा रावण से युद्ध का कोई उल्लेख नहीं मिलता। डॉ. वेबर का अनुमान है कि सीताहरण की कथा का मूल स्रोत संभवतः होमर में वर्णित पैरिस द्वारा हेलेन का हरण है और लंका में जो युद्ध हुआ, उसका आधार संभवतः यूनानी सेना द्वारा त्राय का अवरोध है।''[1] डॉ वेबर की भांति डॉ याकोबी भी राम कथा के दो प्रधान आधार मानते हैं। उनका कहना है कि ''रामायण की राम कथा स्पष्टतया दो स्वतंत्र भागों के संयोग से उत्पन्न हुई है। प्रथम भाग अयोध्या की घटनाओं से संबंध रखता है और इसमें दशरथ प्रधान नायक हैं। द्वितीय भाग में दण्डकारण्य तथा रावणवध सम्बन्धी कथा मिलती है, इसका मूलस्रोत वेदों की देवता सम्बन्धी कथाएं प्रतीत होती है।''[2] अनेक विद्वानों का यह भी मत है की वाल्मीकि ने चारणों के गाथागीति के रूप में लोक प्रचलित वीराख्यान को ही प्रबंध का रूप देकर रामायण महाकाव्य की रचना की।

''रामकथा और रामकाव्य के नायक राम के व्यक्तित्व में कितनी ऐतिहासिकता और कितनी कवि कल्पना है, यह कहना बहुत कठिन है। परन्तु, इस बात में कोई संदेह नहीं है कि वाल्मीकि के महाकाव्य 'रामायण' ने ही सर्वप्रथम महामानव राम को लोकनायकत्व प्रदान किया। राम का जो गौरवपूर्ण चरित्र जगविख्यात है, उसका श्रेय महर्षि वाल्मीकि को ही है। उनके बाद रामकाव्य की परम्परा को आगे बढाया जयदेव, कालिदास और तुलसीदास आदि महान कवियों ने। उन्होंने वाल्मीकि रामायण की ही कथावस्तु का अपनी अपनी शैली

में उपयोग कर रामोपाख्यान प्रस्तुत किए। हिन्दी और संस्कृत साहित्य की इस रामकाव्य परम्परा ने मर्यादा पुरूषोत्तम राम के चरित्र को और अधिक व्यापक बनाया।''[3]

प्रवर्तन काल से लेकर आठवीं शती तक रामोपासना व्यक्तिगत साधना के क्षेत्र में ही विद्धमान रही। उसका सांप्रदायिक रूप इसके पश्चात् विकसित हुआ। रामोपसना को संगठित तथा स्वतंत्र संप्रदाय के रूप में प्रतिष्ठित करने का श्रेय स्वामी रामानंद को जाता है। इनके पूर्व श्री संप्रदाय में श्रीराम की प्रतिष्ठा होते हुए भी प्रधानता लक्ष्मीनारायण को ही दी जाती थी। आरंभिक आचार्यो की दृष्टि में दोनों समान रूप से पूज्य थे, किन्तु संप्रदाय के प्रसार के साथ उसकी कुछ शाखाओं में भेदपूर्ण व्यवहार होने लगा था। स्वामी रामानंद ने श्रीसंप्रदाय के विशिष्टाद्वैत दर्शन और प्राप्ति सिद्धांत का आधार लेकर 'रामयत संप्रदाय' का संगठन किया। इसमे उन्होंने कुछ नये विचार रखे, जो पुराने मत के विरूद्ध पड़ते हुए भी सामयिक परिस्थिति के अनुकूल तथा लोकोपयोगी थे। ''उन्होंने श्री वैष्णवों के नारायण मंत्र के स्थान पर रामतारक अथवा षडक्षर राममंत्र को साम्प्रदायिक दीक्षा का बीज मंत्र माना, ब्रम्हा सदाचार की अपेक्षा साधना में आतंरिक भाव की शुद्धता पर जोर दिया, जाति पाँति, छुआ छूत, ऊंच नीच का भाव मिटा कर वैष्णव मात्र में समता का समर्थन किया, नवधा से परा और प्रेमसक्ति को श्रेयकर बताया और सांप्रदायिक सिद्धांतों के प्रचार में परम्परापोषित संस्कृत भाषा की अपेक्षा हिन्दी अथवा जनभाषा को प्रधानता दी।''[4] इन कार्यों का मुख्य उद्देश्य यह था कि रामोपासना युगधर्म के अनुकूल बने और पंथों के दलदल में फंसी हुई जनता का उद्धार करके उन्हें उचित मार्ग प्रदर्शन कर सके।

इसी रामानंदीय वैष्णव परम्परा में तुलसी का आविर्भाव हुआ। वे अनंतानंद जी के प्रशिष्य और नरहरिदास अथवा नरहर्यानन्द के शिष्य थे। ''यदि रामावत संप्रदाय के प्रवर्तन का श्रेय स्वामी रामानंद को है तो जन जन तक उसका संदेश पहुंचाकर लोकमानस में रामभक्ति की प्रतिष्ठा और रामचरित के प्रति श्रद्धा का भाव जागरित करना तुलसी का ही काम थाण्उनके 'मानस' से जो रामलहरी उठी उससे शताब्दियों के राजनीतिक उत्पीड़न, सामाजिक अनाचार और आर्थिक अव्यवस्था से संतप्त राष्ट्रहृदय तृप्त हो गया।''[5] गोस्वामी जी ने रामचरित के जिस स्वरुप की अभिव्यक्ति अपनी कृतियों में की, वह ऐश्वर्य प्रधान है। उनके राम लोकमर्यादा के रक्षक, लोकविरोधी तत्वों के उन्मूलक और लोकधर्म के संस्थापक है।

तुलसी द्वारा चित्रित आदर्श समाज में राजा प्रजा, उंच नीच, ब्राहमण शूद्र, स्त्री पुरूष। सभ्य असभ्य, जड़ चेतन सभी अपनी मर्यादा के भीतर अनुशासित हैं। जिसने मर्यादा भंग की है, उसी का मान मर्दन हुआ है। राम राज्य की मर्यादानिष्ठ समाज व्यवस्था का वर्णन करते हुए वे लिखते हैं–

''वरनाश्रम निज निज धरम, निरत वेद पथ लोग।
चलहिं सदा पावहिं सुखहिं, नहीं भय सोक ना रोग।।

xxxxx

सरिता सकल वहहिं बार बारी, सीतल अमल स्वाद सुखकारी।।
सागर निज मरजादा रहहीं, डारहिं रत्न तटन्ही नर लहहीं।।
विधु महि पुर मयूरवन्हि, रवि तपि जेतनहिं काज।।
मांगे बारिद देहिं जल रामचंद्र के राज।।'[6]

आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार ''रामचरित के सौंदर्य द्वारा तुलसीदास ने जनता को लोकधर्म की ओर जो फिर से आकर्षित किया, वह निष्फल नहीं हुआ। वैरागियों का सुधार चाहे उतना न हुआ हो, पर परोक्ष रूप में साधारण गृहस्थ जनता की प्रवृत्ति का बहुत कुछ संस्कार हुआ।''[7] तुलसी का 'रामचरितमानस' भारतीय लोकमानस का प्रतिबिम्ब है। रामविलास शर्मा कहते हैं ''तुलसी ने जनसाधारण को भरमाने के लिए किसी काल्पनिक स्वर्ग की रचना नहीं की जहाँ रामनाम जपकर पहुंचने से सब दुःख दूर हो जायेंगे। दुःख दूर करना है इसी संसार में और भक्त को रामकृपा की

आवश्यकता है इस संसार में रहते हुए मुक्ति पाने के लिए। रामचरितमानस के आरम्भ में उन्होंने सतसमाज को तीर्थराज कहा है, रामभक्ति गंगा के समान है। उसमें स्नान करने से इस शरीर के रहते हुई ही चारों फल प्राप्त होते है।''[8]

गोस्वामी जी के समय से ही काव्य में रीति का प्रभाव प्रारंभ हो गया था। यद्यपि रीति कालीन कवियों के प्रिय आलंबन राधा कृष्ण ही थे, तथापि राम चरित पर भी पर्याप्त रचनाएँ हुई। इनमें 'रामचंद्र जी का नख शिख' (प्रताप कवि), 'रामायण महानाटक' (प्राणचन्द्र चौहान), 'राम रसायन वर्णन', 'रामायण वर्णन' (सेनापति), 'हनुमन्नाटक' (हृदयराम), 'अवध विलास' (लालदास), 'सीता चरित्र' (रामचंद्र), 'जनक पचीसी' (मंडन), 'गोविन्द रामायण' (गुरूगोविंद सिंह) प्रमुख है। किन्तु रीतिकालीन रचनाओं में कोई विशेष मौलिकता दिखाई नहीं देती, केवल मात्र परम्परा का ही पालन किया गया है। तुलसीदास के समकालीन आचार्य केशवदास ने 'रामचंद्रिका' की रचना द्वारा रामकाव्य परम्परा में एक अभिनव क्रांति उपस्थित की है। केशवदास जी ने अनेक प्रसंगों की मौलिक उद्भावना की है, यथा वामदेव का आकर परशुराम को समझाना, राम द्वारा कौशल्या को विधवा धर्म का उपदेश देना, राम सीता का वन में राजोचित जीवन, मन्दोदरी का रावण को राजनैतिक परामर्श, लंका विजय के पश्चात त्रिवेणी वर्णन इत्यादी प्रमुख है। छंदों और अलंकारों के प्रयोग के माध्यम से भी केशवदास जी ने नवीनता उपस्थित की है।

रीतिकाल के पश्चात 'भारतेंदु युग' में भी रामकाव्य परक रचनाएँ मिलती है, भारतेंदु द्वारा रचित 'दशरथ विलाप' को खड़ी बोली की प्रथम कविता मानी जाती है। श्री जगन्नाथ प्रसाद भानु द्वारा रचित 'नव पंचामृत' तथा बालमुकुन्द गुप्त का 'रामस्तोत्र' इस काल की प्रमुख रचनाएँ मानी जाती है।

'द्विवेदी युग' में भी रामकथा को केंद्र बनाकर अनेक रचनाएँ हुई। मैथलीशरण गुप्त रचित 'साकेत', 'पंचवटी', हरिऔध रचित 'उर्मिला', 'वैदेही वनवास', गया प्रसाद शुक्ल 'सनेही' रचित 'कौशल्या विलाप', 'जनक विलाप', 'अशोक वाटिका में सीता' प्रमुख है। 'साकेत' में गुप्त जी का उद्देश्य नर को ईश्वरता प्राप्त करना है। राम यहाँ ईश्वर कम है, मनुष्य रूप में अधिक। इस कृति में प्राचीन राम कथा में मौलिक उद्भावनायें जोड़कर उसे नवयुग के लिए विश्वसनीय बनाकर प्रस्तुत किया गया है। 'साकेत' की रचना का उद्देश्य था उपेक्षित उर्मिला को महत्व प्रदान करना। किन्तु साथ ही अन्य उपेक्षित पात्रों के साथ भी न्याय करने का प्रयत्न किया गया है।

कवि सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' द्वारा रचित 'पंचवटी' तथा 'राम की शक्ति पूजा', सुमित्रानंदन पंत द्वारा रचित 'अशोक वन' छायादाद युग की महत्वपूर्ण रामकाव्यपरक कृतियाँ मानी जाती हैं। 'राम की शक्ति-पूजा' न केवल निराला की बल्कि खड़ी बोली हिन्दी की सर्वाधिक महत्वपूर्ण रचनाओं में से एक है। डॉ रामविलास शर्मा इस कविता में राम के संघर्ष को निराला के संघर्ष से जोड़कर देखते हैं–'' 'धिक् जीवन को जो पाता ही आया विरोध', यह पंक्ति पूरी कविता का सूत्र है। कहना न होगा कि यह पंक्ति स्वयं कवि के जीवन पर खूब घटित होती है। राक्षस, वानर, लंका, समुद्र तट, यह सब एक विशाल सेटिंग मात्र है (वास्तविक संघर्ष राम के हृदय में है। वह शक्ति की आराधना कर रहे है और प्रश्न है कि वह विजयी होंगे या नहीं। 'तुलसीदास' में कवि एक हद तक तटस्थ है। 'राम की शक्ति पूजा' पर कवि की अपने व्यक्तित्व की छाप है।''[9] यहाँ राम एक ऐसे साधारण मनुष्य है जो विपरित परिस्थितियों में हताश निराश अवश्य होता है किन्तु हार नही मानता। वह अपने अन्दर की सकारात्मक ऊर्जाओं के द्वारा पुनः संघर्ष के लिए प्रेरित होता है–

''धिक् जीवन को जो पाता ही आया विरोध,
धिक् साधन, जिसके लिए सदा ही किया शोध!
जानकी! हाय, उद्धार प्रिया का हो न सका।
वह एक और मन रहा राम का जो न थकाय
जो नहीं जानता दैन्य, नहीं जानता विनय

कर गया भेद वह मायावरण प्राप्त कर जयए
बुद्धि के दुर्ग पहुँचा विद्धुत गति हतचेतन
राम में जगी स्मृति, हुए सजग पा भाव प्रमन।''[10]

वर्ष 1962 में नरेश मेहता द्वारा रचित कृति 'संशय की एक रात' रामकथा को एक नवीन आयाम देता है। काव्य कृति का कथानक 'राम-कथा' के उस प्रसंग पर आधारित है जब सागर पर सेतु-बन्ध तैयार हो चुका है और राम के सारे 'शांति दूत' लंका से विफल होकर लौट चुके हैं। अब केवल अगले दिन से युद्ध की बारी हैण्राम सोचते है की क्या युद्ध के बाद शांति मिल पायगी और अपनी व्यक्तिक समस्या (सीता की मुक्ति) के लिए इतने व्यापक स्तर पर युद्ध कर जन विनाश उचित है। इस काव्य में राम के हृदय के करूण पक्ष को अत्यंत ही सजीवता के साथ प्रस्तुत किया गया है। रामकमल राय के अनुसार ''तुलसी के राम भले ही शील सौन्दर्य और शक्ति के अपूर्व समन्वय रहे हों, परन्तु 'संशय की एक रात' में जो राम का करुणामय स्वरुप चित्रित हुआ है वह कवि की निश्चय ही एक नव्य दृष्टि का परिणाम है। राम की वीरता का तो वर्णन सर्वत्र हुआ है। राक्षसों के महाविनाश के लिए तो उनका अवतार ही माना गया है। पुराणों की इस अवतारी अवधारणा के पश्चात राम के करूण रूप को उभारने की आवश्यकता ही नहीं समझी गयी परन्तु नरेश जी राम के व्यक्तित्व में इस महाकरूणा की अवतारणा बड़े ही मार्मिक स्तरों पर करते हैं।''[11] राम के चरित्र के करूण पक्ष को उभारना इस कृति का अपना वैशिष्ट्य है।

अतः हम देख सकते है कि 'बाल्मीकि रामायण' से रामकथा की जो परम्परा आरम्भ हुई थी आधुनिक काल तक उसके रूप में अनेक परिवर्तन हुए है। आधुनिक रामकथा के केंद्र में वर्तमान जीवन की समस्याएँ तथा संघर्ष है। ये काव्य कृतियाँ रूप, विचार, शैली, आदि सभी दृष्टियों से विविध प्रयोगों से युक्त है।

संदर्भ सूची

1. बुल्के, फादर कामिल, राम कथा : उत्पत्ति और विकास, हिन्दी परिषद् प्रकाशन, प्रयाग, संस्करण 1962, पृ.सं. 106
2. वहीं, पृ.सं. 107
3. http:@@abhivyakti.hindi.org@snibandh@2007@ramkavya.htm
4. सिंह, भगवती प्रसाद, रामकाव्यधारा : अनुसन्धान एवं अनुचिंतन, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ.सं. 22, 1976, पृ.सं. 22
5. वहीं, पृ.सं. 24
6. वहीं, पृ.सं. 314
7. उदयभानु, सिंह (सं.), तुलसी, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, आवृत्ति 2002, पृ.सं. 169
8. शर्मा, रामविलास, परम्परा का मूल्यांकन, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2011, पृ.सं. 64
9. शर्मा, रामविलास, निराला, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, आवृत्ति 2004, पृ. सं. 94
10. निरालाएराग विराग, लोकभारती प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2005, पृ. सं. 102
11. कुमार, राजेश्वर, राम की शक्तिपूजा और संशय की एक रात पाठ पुनर्पाठ, अनुज्ञा प्रकाशन, 2017, पृ. सं. 17

भारतीय संगीत में श्री राम लोक गीतों के संदर्भ में

डा0 नमिता यादव

एसोसिएट प्रोफेसर, संगीत गायन-राजर्षि टण्डन महिला महाविद्यालय, इलाहाबाद विश्वविद्यालय इलाहाबाद

इक्ष्वाकुवंश के वीर राम की वीरता सम्बन्धी गाथाएँ अयोध्या के सूत पद्य में निबद्ध कर वर्षो से गाते रहे होगें। पाश्चात्य एवं भारतीय विद्वानों ने मुक्त कंठ से इस बात को स्वीकार किया है कि विश्व भर के साहित्य में कोई भी ऐसा ग्रन्थ नहीं है जिसने लोगों के जीवन और चिन्तन को इतना प्रभावित किया हो जितना रामायण ने किया है तत्कालीन समाज का पूरा चित्र रामायण में मिलता है जीवन के मुख्य आदर्श भिन्न-भिन्न प्रकार की जातियाँ और सभ्यता आहार-विहार यात्रा के साधन सामाजिक रीतियाँ, संग्राम की विधियों और साधन और संगीत इन सबकी झाँकी हमको रामायण में मिलती है। रामायण के महापुरूष राम है राम के भारत में अगणित मंदिर है। इनके जीवन के आधार पर न जाने कितने चित्र बने हैं न जाने कितने काव्य, नाटक, चम्पू इत्यादि का प्रणयन हुआ है न जाने कितने प्रबन्ध, ध्रुवपद, ठुमरीं भजन, कीर्तन, लोकगीत, लोक गाथाएँ इत्यादि बनाये और गाये गये हैं। भारत ही नहीं भारत के उपनिवेशों सुमात्रा, जावा आदि देशों में भी राम के मंदिर है। यद्यपि इनमें से बहुत से देश के लोग मुसलमान हो गये तथापि उनके नाटक, नृत्य गान इत्यादि अभी भी राम के आधार पर होते हैं।[1]

श्री रामचन्द्र के विषय में कहा गया है कि वह गान्धर्व में श्रेष्ठ थे श्री रामचन्द्र के विषय में अयोध्याकाण्ड में यह श्लोक आता है -

गान्धर्वे च भुवि श्रेष्ठो बभूव भरताग्रजः।
कल्याणाभिजनः साधुरदीनामूर महाभतिः।।
अयोध्याकाण्ड सर्ग - 2-35

भरत से ज्येष्ठ राम संसार भर में गान्धर्व में श्रेष्ठ अतिशय कल्याण विशिष्ट, सज्जन क्षोभ के कारण उपस्थित होने पर भी अक्षुब्ध रहने वाले और महामति थे। राम की संगीत प्रियता के दर्शन हमें बाल्मीकि रामायण के अयोध्याकाण्ड बालकाण्ड उत्तरकाण्ड के अनेको सर्गो में देखने को प्राप्त होती है। कुश और लव ने रामायण काव्य को गाया। श्री रामचन्द्र ने अपने पुत्रों के मुख से अपना चरित सुना "तब उन दोनों बालकों ने राम के कहने से मार्गीय संगीत के विषयानुकूल (रामचरित) गाया। सभा में बैठे हुये राम अपने चरित्र की चिरन्तन स्थिति की इच्छा से उस गान की ओर आकृष्ट हुए।"

भारतवासियों का जीवन सदा से ही संगीत मय रहा है शायद ही दूसरी कोई जाति होगी जिसके जीवन पर संगीत का इतना प्रचुर प्रभाव पड़ा हो। प्रत्येक उत्सव, पर्व त्यौहार के अवसर पर समयोचित गीत गाकर चित्त विनोद हमारी दिनचर्या का एक आवश्यक अंग है इन सभी अवसरों पर श्री राम के जीवन पर आधारित गीत हमें प्राचीन काल से निरन्तरता के साथ सुनाई पड़ते हैं। पुत्र जन्म यज्ञोपवीत, विवाह, द्विरागमन, आदि हमारे समस्त उत्सवों के अवसर पर स्त्रियाँ कोमल कल-कण्ठों से श्रीराम पर आधारित रमणीय गीत गाकर अपना तथा उपस्थित मण्डली का पर्याप्त मनोरंज करती है। वाल्मीकीय रामायण में रामजन्म के अवसर पर स्त्रियों के एकत्र होकर मनोरंजक सामयिक गीतों के गाने का स्पष्ट वर्णन मिलता है।[2]

लोक गीतों की गति-विधि दूसरे ही ढंग की है। न तो वे लिपिबद्ध होती है न उनके रचयिता का ही पता होता है स्त्री पुरूषों की जिव्हा ही उनके आवास स्थल है। कृत्रिमता उनमें छूकर भी न मिलेगी, उनमें मिलेगी सरलता और स्वाभिकता। जिन भावों में तनिक भी बनावटीपन नही है और जो मानव प्रकृति के साथ जन्मतः सम्बद्ध है उन्हीं भावों का प्रकाश हमें इन गीतों में मिलता है। उनमें एक विचित्र मिठास मिलती है जिसके कारण जो कोई इन्हें एक बार भी चख लेता है वह इनके स्वाद को जन्म भर भूल नहीं सकता। वैयक्तिकता के स्थान पर इनमें सार्वजनीनता विद्यमान रहती है। गीतों में वर्णित भाव चाहे वे किसी आराध्य के हो चाहे महापुरूष या प्रकृति से सम्बन्धित हों किसी एक व्यक्ति के हृदय के उच्छ्वास नहीं होते, प्रत्युत उनमें उस समाज के समस्त व्यक्तियों के दृष्टगत भाव अभिव्यक्त होते हैं यही कारण है कि इनमें हृदय में घर कर लेने का, मर्मस्थल को स्पर्श करने का विशेष गुण पाया जाता है।

भारत भूमि बड़ी विस्तृत है इसमें भिन्न जातियाँ निवास करती हैं तथा भिन्न-भिन्न भाषाएँ बोली जाती हैं प्रत्येक प्रान्त की एक अपनी भाषा है जिसके भीतर अनेक बोलियाँ है प्रत्येक प्रान्त में सामाजिक उत्सवों के अवसरों पर गाने योग्य अनेक गीत प्रचलित है।[3] इन लोक गीतों अंगिका लोकगीत, मैथिली लोकगीत, मगही लोक गीत, भोजपुरी लोकगीत, अवधी लोकगीत, बुन्देली लोक गीत, बघेली लोकगीत, छत्तसीगढ़ी लोकगीत, ब्रज लोक गीत, कनउजी लोक गीत, राजस्थानी लोक गीत, मानवी लोक गीत, निमाड़ी लोक गीत, कौरवी लोक गीत, हरियानी लोक गीत, गढ़वाली लोक गीत, कुमाऊँनी लोकगीत, इन सभी में से अधिकांश ने श्री राम की लोक गाथाओं को अपना प्रिय विषय बनाया है। उनके कुछ उदाहरण भोजपुरी गीतों के प्रस्तुत करने का प्रयास कर रही हूँ–

भोजपुरी लोकगीतों को निम्नांकित छः श्रेणियां में विभाजित किया जा सकता है। 1. संस्कार गीत 2. ऋतु गीत 3. व्रत गीत 4. जाति गीत 5. श्रम गीत 6- विविध गीत। हमारे शास्त्रों में षोडश संस्कारों का उल्लेख मिलता है परन्तु लोकगीतों को केवल पाँच, छः संस्कारों के अवसर पर ही गाया जाता हैं। 1- पुत्र जन्म 2- मुण्डन 3- यज्ञोपवीत 4- विवाह 5- द्विरागमन 6- मृत्यु। ऋतु गीत वे हैं जो विभिन्न ऋतुओं में गाये जाते हैं जैसे-कजली, फगुआ चहता तथा बारह मासा। व्रत गीत विभिन्न व्रतों तथा त्यौहारों के अवसर पर गेय हैं जैसे पिड़िया आदि। विभिन्न जातियाँ जिन गीतों को गाती हैं वे जाति गीत कहे जाते हैं जैसे - बिरहा, पचरा आदि। जॉत पीसते, धान रोपते, फसल काटते समय जो गीत गाये जाते हैं वे ही श्रम गीत हैं।

संस्कार गीत - पुत्र जन्म

सोहर

पुत्र जन्म के अवसर पर जो गीत गाये जाते हैं उन्हें सोहर कहा जाता है। गोस्वामी तुलसीदास जी ने रामलला नहछू की रचना इसी सोहर छन्द में की है। सोहर के गीतों की परम्परा बड़ी प्राचीन है। महाकवि वाल्मीकि तथा तुलसीदास ने रामायण तथा रामचरित मानस में राम जन्म के अवसर पर इन गीतों के गाने का उल्लेख किया है।

प्रसंग - राम के पैदा होने पर अन्य स्त्री का पुत्र-प्राप्ति का उपाय पूछना।

मचियाँ[4] ही बैठली कोसिल रानी, सिंहासन राजा दसरथ हो।
आरे कोसिला कवन व्रत कइलू, रमइयांजी के पावेलू हो।।
गंगा त हमहू नहइली, सूरूज गोड़वा लागीले हो।
आरे मूसीले हम अवतार रमइयाजी के पाइले हो।।
मूखल[5] ब्राह्मन जेवाइलें[6] लेगटा[7] के बसतर[8] हो।
आरे तुलसी के दियरा[9] वराइले,[7] रमइयाजी के पाइले हो।।

राजा दशरथ सिंहासन पर और रानी कौशिल्या मचिया (1-छोटी खाट) पर बैठी हुयी है। तब कोई स्त्री पूछती है कि ऐ कौशल्या! तुमने कौन सा व्रत किया, जिससे तुम्हें राम ऐसा पुत्र मिला। कौशल्या ने उत्तर दिया - मैने गंगा में स्नान किया, सूर्य देव को प्रणाम किया और रविवार का व्रत किया, तब

राम ऐसे पुत्र को पाया। मैंने भूखे ब्राहमण[2] को भोजन कराया,[3] नंगे[4] को वस्त्र[5] दिया, और तुलसी जी के चौतरे पर दिया[6] जलाया[7] तब रामचन्द्र को प्राप्त किया।

विविध गीत - झूमर

<u>प्रसंग</u> - राम का सीता के यहाँ सजधज कर विवाह करने के लिये जाना।

सीता जे चिठि' लिखि भेजली हरि झूमरी।
अब उमड़ि ना आई सिरि राम खेलबि हरि झूमरी।।
राम जे चिठि लिखि भेजले हरि झूमरी।
अब सीता सुन्दरि करसुँ सिंगार खेलबि हरि झूमरी।।
केकरा के हाथे लागल बुकावा हरि झूमरी।
केकरा ही हाथ अबीर, खेलबि हरि झूमरी
सीता के हाथे लागे वूकवा हरि झूमरी।
अब राम के हाथे अबीर खेलबि हरि झूमरी।।
उड़त आवेला वूकवा हरि झूमरी।
अब चमकत आवेला अबीर खेलब हरि झूमरी।।

विवाह के समय सीताजी पत्र[1] लिखिकर भेजती हैं और कहती है कि ऐ श्रीराम। आप सजधज कर आइए। रामजी भी चिट्ठी लिखकर भेजते हैं कि ऐ सीता तुम श्रृंगार करो। मैं अवश्य आऊँगा। किसके हाथ में बुकवा (उपटन) लगा है और किसके हाथ में अबीर लगा है। सीता के हाथ में उबटन लगा है और राम के हाथ में अबीर लगा है। वुकवा उड़ता हुआ आ रहा है और अबीर चमकता हुआ आ रहा अर्थात राम विवाह करने के लिये शान से आ रहे हैं। मैं झूमर गाऊँगी या खेलूँगी।

विवाह गीत तिलक चढ़ाना

बारह बरिस के राम क उमिरिया, कौन विधि रची धमारि हो।

"बाउर राजा तू बाउर राजा, केहु नाही हरेला गियान हो।
रघुबर खादी नयन भर देखबई हिरदय जइहे जुड़ाइ हो"
"का देखि झलकइ जाल कइ मछरिया का देखि भवरा भेड़राई रे।
केकर बोलाए राम गइले ससुररिया के के देख राम लोभाइ रे।"
"जल देख झलकइ जल के मछरिया, फूल देखि गइले लोभाइ रे।
उतरत चइतवा चढत वइसखवा लिइले सोपरिया भरि हाथ रे।
हाली बेरे के लगन धराव मोरे वनवा, हम जाइबि वैजनाथ रे।

ऋतु गीत

भोजपुरी क्षेत्र के ऋतु गीतों में कजली, फगुआ, चैत और बारहमास प्रधान है। इन सभी प्रकार के गीतों में राम के प्रसंग हमें प्राप्त होते हैं विभिन्न महीनों में इन गीतों को गाकर ग्रामीण जनता अपना मनोरंज किया करती है।

फगुआ (होली)

<u>प्रसंग</u> - राम और सीता के होली खेलने का वर्णन।

होरी खेले रघुवीरा अवध में होरी।
केकरा हाथ कनक पिचकारी, केकरा हाथ अबीर।
राम के हाथ कनक पिचकारी सीता के हाथ अबीर।
होरी खेले रघुवीरा अवध में होरी।

रामचन्द्र अवध में होली खेलते हैं किसके हाथ में सोने की पिचकारी है और किसके हाथ में अबीर है। राम के हाथ में सोने की पिचकारी है और सीता के हाथ में अबीर है। रामचन्द्र जी अयोध्या में होली खेलते हैं।

चैता

प्रसंग - जनक के धनुष-यज्ञ में राम के द्वारा धनुष का उठाया जाना। सखी की उक्ति अन्य सखी के प्रति।

आहो रामा अजोधा नगरिया बसेले राजा दसरथ हो रामा
उनहूँ के, राज कुँवर दोऊ भइया हो रामा, उनहूँ के।
आहो रामा एक हाथे रामचन्द्र धेनुहा उठावे हो रामा।
दूजे हाथे, कीट मुकुट सरिहावे हो रामा। दूजे हाथ।

अयोध्या नगर में राजा दशरथ रहते हैं। उनके दो राजकुमार राम और लक्ष्मण भी आये हैं। रामचन्द्र जी एक हाथ से धनुष को उठा रहे हैं और दूसरे हाथ से अपने सिर की जटाओं को ठीक कर रहे हैं।

कजली

प्रसंग - वन को जाते समय सीता का सास तथा अयोध्या छोड़ने का दुख राम ने निवेदन।

धीरे चल हम हारी ए रघुवर। - टेक -
एक त छुटेला मोर नाक के नथियवा, दोसर छुटेले महतारी ए रघुवर।।
एक तो छुटेलर मोर गरे की हसुलिया, दोसर छुटेला झीन सारी ए रघुवर।।
एक तो छुटेला नगर अयोध्या, दोसर छुटेला महतारी ए रघुवर।।

राम के साथ वन को जाती हुई सीताजी कहती है कि ऐ रामचन्द्र। तुम जरा धीरे चलो, मैं चलने से श्रान्त हो गयी हूँ। एक तो मेरे नाम की नथिया छूट गयी है, दूसरी माता कौशल्या छूट गयी है। मेरे गले की हसुली और पतली साड़ी भी अयोध्या में छूट गई, अयोध्या नगरी और माता कौशल्या को भी छोड़ना पड़ा।

बारहमासा

प्रसंग - लक्ष्मण को शक्ति लगना, हनुमान का संजीवनी बूटी लाना, लक्ष्मण को होश आने तथा सीता की प्राप्ति का वर्णन।

चइत मास घर छूटे रघुपति के, बन में विपति परी।
काला नदिया पार उतर गइले, तपसी भेस धरी।।
घाम लूक बइसाख में लागत, देह में नीर चली।
सीता हरन भइल पिता मरन भइल विपति के विपति परी।।
जेठबान लगन लहुमन के, मुरझित भुइयाँ परी।
बैदा सुखेन बतउले सजीवन तब लक्ष्मन उबरी।।
राम सुमिर हनुमान जी गइले धवला गिरि कइले पयान।
तब तक चढ़ले मास असाड़ा साम घटा घिर आन।।
सावन मास सुहावन सजनी, सजीवन सूझि ना परी।
बादल गरजे बिजुरी चमके महाबीर जी क्रोध भरी।।
भादों रैन भयावन सजनी तनिको सूझि ना परी।
चहुँ अधियारी दिसा नाहीं सूझे, राम सुमिर के वीर चली।।
कुवार हाल बेहाल लछुमन के गोद में लेके विलखाई।
बानर भालू के कवन ठिकाना, फल पर गइले लुभाई।।
मास कातिक में आसा लागल सजीवन अइहें तत्काल।
राम रमेसर पूजले पूजेली बिरहिंन बात।।
अगहन मास अति गहन बाटि, जानत सकल संसार।
ओहि समय लवटि अइले वीर जी अपना सिखा पर लेगे पहार।।
पूस मास जठारि पड़ता, जस कुठार के धाई।
पीस के बूटी विहले लक्ष्मन के, उठेले बीर अंगिड़ाई।।
माघ मास में लागेला पंचमी, सखी लोग करेला सिंगार।
आपन बदनिया निराइलेरामजी, सीता बिना भइले उदास।।
फागुन में रंग होली मचेला, उड़ेला गुलाल अबीर।
रावन मारि के सीता उबारे, पार उतर गइले राम जी बीर।।

चैत के महीने में रामचन्द्र का घर छूट गया अर्थात् वे अयोध्या में बनवास के लिये चले और वन में जाते ही उन पर विपत्ति पड़ी। वे काली नदी के पार उतर गये और तपस्वी का वेश उन्होंने धारण कर लिया।। वैसाख मास में उनके शरीर में धूप और लू लग गयी और देह से पसीना बहने लगा। इसी समय सीता का हरण हुआ, पिता का मरण हुआ और विपत्ति के ऊपर विपत्ति पड़ती गयी। जेठ के महीने में लक्ष्मण जी को वाण (शक्ति) लगा और वे मूर्छित होकर जमींन पर गिर पड़े। सुषेण वैद्य ने संजीवनी बूटी नामक दवा लक्ष्मण के लिये बतलाई और कहा बूटी लाने पर ही उनके जीवन की रक्षा हो सकती है।।

राम का स्मरण कर हनुमान जी ने धवलागिरि के लिए प्रयाण किया। तब तक आसाढ़ का महीना चढ़ गया और काली-काली घटायें घिर आयीं।। ऐ

सखी सावन का महीना बड़ा सुहाना है। अंधेरा होने के कारण संजीवनी बूटी दिखाई नहीं पड़ती। बादल गरज़ते हैं तथा बिजली तड़पती है अतः हनुमान जी क्रोधित हो गये।। ऐ सखी भादों की रात्रि बड़ी भयावनी मालूम पड़ती है और कुछ भी दिखाई नहीं पड़ता। चारों तरफ अँधेरा है, अतः दिशा दिखलाई नहीं पड़ती राम का स्मरण कर हनुमान जी चल पड़े। क्वार के महीने में लक्ष्मण की बुरी दशा हो गई उनका हाल बेहाल हो गया। रामचन्द्र उन्हें गोद में लेकर रोने लगे। उनके सैनिक बानर तथा भालुओं का क्या ठिकाना वे फलों को देखकर लुब्ध हो गये और खाने लगे।

क्रातिक मास में आशा लगी हुई थी कि संजीवनी बूटी शीघ्र ही आ जायगी। राम ने इसके लिये रामेश्वर की पूजा की।। अगहन का महीना बड़ा गहन है। इस बात को सारा संसार जानता है इसी समय हनुमान जी अपने सिर पर पहाड़ लेकर लौट कर आ गये। पूस के महीने में पाला पड़ता है यह उतना ही कष्टदायक है जितना कुठार के द्वारा किया गया घाव। हनुमान ने उसी बूटी को पीसकर लक्ष्मण को पिलाया। उसे पीते ही लक्ष्मन जी होश में आ गये और अंगड़ाई लेकर उठे।।

माघ के महीने में बसंत पंचमी होती है और उस समय सब सखियाँ श्रृंगार करती है राम सीता के बिना उदास है और अपने दुर्बल शरीर को देख रहे हैं। फागुन के महीने में होली खेली जाती है और गुलाल खूब उड़ाया जाता है। राम ने रावण का वध कर सीता को उसके पंजे से बचाया। सीता को लेकर समुद्र पार किया और घर को लौट आये।

जाति सम्बन्धी गीत (बिरहा)

प्रसंग - राम लछुमनवा की सीता के द्वारा सेवा

राम लछुमनवा बनवा के चलले, सीता चलती संग लोर।

राम लछुमनवा को लगली पिअसिया, सीता देली अमरित घोर।

रामचन्द्र और लक्ष्मण जी वन को चले। सीता भी उनके साथ हो गई। जब राम और लक्ष्मन को प्यास लगी, तब सीता ने अमृत खोल कर दिया। अर्थात् अपने अमृत तुल्य मीठे वचनों के साथ उन्हें जल पीने को दिया।

व्रत सम्बन्धी गीत - पिडिया

पिडिया का व्रत भोजपुरी प्रदेश की अपनी विशेषता है। सम्भवतः दूसरे राज्यों में इन तरह का व्रत नहीं पाया जाता।

प्रसंग - राम के घर में गाय की चोरी होने से सीता का रोना। ननद के द्वारा सीता को समझाना।

पाँच ही आम के कोइलिया हो, के मोरा बाग लगाई।
केई जे रचेला किआरी हो, केई ढेकुली चलाई।।
रामचन्द्र ढेकुली चलावे हो, सीमा रचेली किआरी।
राम के घरवा में चोरवा घुसले हो, धेनु लेगइले चोराइ।।
रोवेली सीता मोर भउजिया हो, काजारा झरि जाई।।
टाका ही टूकि के काजर हो, ननदी हटिये विकाई
लाख रूपइया के गइया हो, ननदी कहवाँ से आई।।

कोई स्त्री कहती हैं कि मेरे बगीचे में पाँच अधपके आम है। ऐसे मेरे बाग को कौन लगाऐगा अर्थात् कौन सीचेंगा और कौन टेकुली चलाऐगा।। वह स्वतः कहती है रामचन्द्र टेकुली चलाते हैं और सीताजी उन वृक्षों में पानी देने के लिए क्यारी बना रही हैं। राम के घर में चोर घुस गये और दूध देने वाली गाय को चुरा ले गये।।

इस पर सीता जी रोने लगी और उनके रोने से आँखों में लगा हुआ काजल गिरने लगा। तब सीता की ननद ने कहा कि ऐ भावज ! चुप रहो रोओ मत, क्योंकि तुम्हारी आँख का काजल गिर रहा है। यहाँ पर सीता तथा राम का अर्थ किसी साधारण स्त्री तथा पुरूष से समझना चाहिए।

(Footnotes)

1. डा0 ठाकुर जयदेव सिंह - भारतीय संगीत का इतिहास - पृ0 159
2. कृष्ण देव उपाध्याय- भोजपुरी लोकगीत प0 7-8 2011 (हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग)
3. कृष्ण देव उपाध्याय- भोजपुरी लोकगीत प0 9 एवं 20 2011 (हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग)

लोक संस्कृति में राम

Jannhavi Basu & Dr. Kaveri Tripathi *

भारतीय संस्कृति के वाहक- राम

प्रस्तावना :- "राम" यह शब्द हिंदुओं की एकता और अखंडता का प्रतीक है तथा सनातन धर्म की पहचान है। हिंदु धर्म में भगवान विष्णु जी के दशावतार का उल्लेख है, जिनमें से सातवें अवतार हैं "राम"। इनके आदर्श लक्ष्मण रेखा की उस मर्यादा के समान हैं जो लांघी तो अनर्थ और सीमा की मर्यादा में रहे तो खुशहाल और सुरक्षित जीवन। वर्तमान समय में भी मर्यादा पुरूषोत्तम श्रीराम के आदर्शों का जनमानस पर गहरा प्रभाव है। राम का जीवनकाल एवं पराक्रम **"महर्षि वाल्मिकी"** द्वारा रचित संस्कृत **"महाकाव्य रामायण"** के रूप में लिखा गया है। बाद में **"तुलसीदास जी"** ने भी भक्ति काव्य **"श्रीरामचरितमानस"** की रचनाकर राम को आदर्श पुरूष बताया।

"सीस जटा उर बाहु बिसाल विलोचन लाल तिरछी सो भौंहें।
तू न सरासन बान धरे, तुलसी बन मारन में सुठि सोहें।
सादर बारहिं बार सुभाग चितै तुम त्यों हमरो मान मोहै
पूछति प्राण वधू सिय सों कहौ सांवरे से सखि रावरे को है?

राम का जन्म -

भगवान राम का जन्म **"अयोध्या"** नगरी में शुक्ल पक्ष की नवमी तिथि को पुनर्वसु नक्षत्र और कर्क लगन में कौशल्यादेवी ने दिव्य लक्षणों से युक्त सर्वलोकवन्दित श्री राम को जन्म दिया। अर्थात, जिस दिन भगवान राम का जन्म हुआ उस दिन अयोध्या के ऊपर तारों की सारी स्थिति का साफ-साफ वर्णित है। रामायण में वणित नक्षत्र की इस स्थिति को **"नासा"** द्वारा प्रयोग किये जाने वाले सॉफ्टवेयर प्लैनेटेरियम गोल्ड में उस समय के सितारों की स्थिति से मिलान और तुलना करें तो जानते हैं कि क्या निष्कर्ष मिलता है।

सूर्य मेष राशि (उच्च स्थान) में
शुक्र मीन राशि (उच्च स्थान) में
मंगल मकर राशि (उच्च स्थान) में
शनि तुला राशि (उच्च स्थान) में
बृहस्पति कर्क राशि (उच्च स्थान) में
लगन कर्क के रूप में।

पुनर्वसु के पास चन्द्रमा मिथुन से कर्क राशि की ओर बढ़ता हुआ।

शोध संस्था **"आई सर्वे"** के अनुसार **"वाल्मीकि रामायण"** में चर्चित श्री राम के जन्म के समय ग्रह-नक्षत्रों की स्थिति का सॉफ्टवेयर से मिलान करने पर जो दिन मिला वो दिन है 10 जनवरी 5114 ईसा पूर्व। उस दिन दोपहर 12:00 बजे आकाश पर सितारों की स्थिति और सॉफ्टवेयर दोनों एक जैसे हैं।

महत्वपूर्ण घटनाक्रम -

- गुरू वशिष्ठ से शिक्षा-दीक्षा लेना।
- विश्वामित्र के साथ वन में ऋषियों के यज्ञ की रक्षा करना और राक्षसों का वध।
- राम स्वयंवर, शिव जी का धनुष तोड़ना।

- वनवास।
- केवट से मिलन।
- लक्ष्मण द्वारा सूर्पणखा (वज्रमणि) की नाक काटना।
- खर और दूषण का वध।
- लक्ष्मण द्वारा लक्ष्मण रेखा खींचना, स्वर्ण हिरण मारिच का वध।
- सीता हरण, जटायु से मिलन।
- कबन्ध का वध, शबरी से मिलन, हनुमानजी से मिलन, सुग्रीव से मिलन, दुंदुभि और बालि का वध, संपाति द्वारा सीता का पता बताना, अशोक वाटिका में हनुमान जी द्वारा माता सीता जी को राम जी की अंगूठी देना।
- हनुमान जी द्वारा लंका दहन, सेतु का निर्माण, लंका में रावण जी से युद्ध, लक्ष्मण जी का मूर्छित होना। हनुमान जी द्वारा संजीविनी बूटी लाना।
- महाबली रावण का वध, पुष्पक विमान से अयोध्या आना।

श्री राम का परिवार व महत्वपूर्ण लोग -

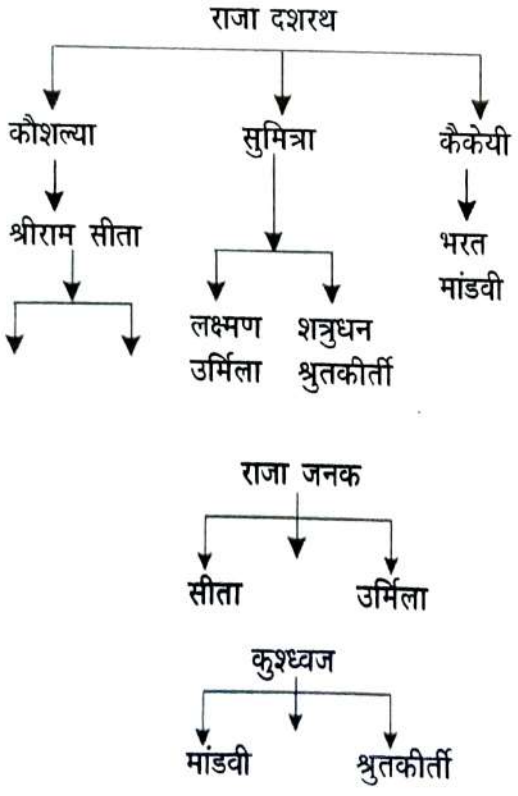

- वशिष्ठ और ब्रह्माजी ने श्रीराम को विष्णु अवतार घोषित किया।
- महान **"ऋषि वाल्मिकि ने उन पर रामायण लिखी"**।
- राम ने सीता को रावण के कैद से मुक्त कराने के लिये **संपाति, जटायु, हनुमान, सुग्रीव, विभिषण, मैन्द, द्विविद, जाम्बवंत, नल, नील, तार, अंगद, धूम्र, सुषेण, केसरी, गज, पनस, विनत, रम्भ, शरभ, महाबली कंपन (गवाक्ष), दधिमुख, गवय** और **गन्धमादन** आदि की सहायता ली।
- राम के काल में राजा जनक थे, जो उनके श्वसुर थे। जिनके गुरू थे **"ऋषि अष्टावक्र"**। जनक-अष्टावक्र संवाद को **"महागीता"** के नाम से जाना जाता है।

नीति-कुशल व न्यायप्रिय नरेश -

भगवान राम विषम परिस्थितियों में भी नीति सम्मत रहे। उन्होंने वेदों और मर्यादा का पालन करते हुए सुखी राज्य की स्थापना की। स्वयं की भावना व सुखों से समझौता कर न्याय और सत्य का साथ दिया। राज्य त्यागने, बाली का वध करने, रावण का संहार करने या सीता को वन भेजने की बात ही क्यों न हो।

सहनशील व धैर्यवान -

सहनशीलता व धैर्य भगवान राम का एक और गुण है।

राम का संयमी होना माता कैकेयी की उस शर्त का अनुपालन था जिसमें उन्होंने राजा दशरथ से मांग की थी -

तापस बेष बिसेषि उदासी।
चौदह बरिस रामु बनवासी।।

- सीता हरण के बाद संयम से काम लेना।
- समुद्र पर सेतु बनाने के लिए तपस्या करना,
- सीता को त्यागने के बाद राजा होते हुए भी सन्यासी की भांति जीवन बिताना उनकी सहनशीलता की पराकाष्ठा है।

संयमित -

अर्थात् समय-समय पर उठने वाली मानसिक उत्तेजनाओं जैसे- कामवासना, क्रोध, लोभ, अहंकार तथा मोह आदि पर नियंत्रण रखना। राम-सीता ने अपना संपूर्ण दाम्पत्य बहुत ही संयम और प्रेम से व्यतीत किया। वें कहीं भी मानसिक या शारीरिक रूप से अनियंत्रित नहीं हुए।

दयालु और बेहतर स्वामी -

भगवान राम ने दया कर सभी को अपनी छत्रछाया में लिया। उनकी सेना में पशु, मानव व दानव सभी थे और उन्होंने सभी को आगे बढ़ने का मौका दिया। सुग्रीव को राज्य, हनुमान जी, जाम्बवंत जी व नल-नील जी को भी उन्होंने समय-समय पर नेतृत्व करने का अधिकार दिया।

श्रीराम द्वारा समतामूलक समाज की स्थापना–

श्रीराम जी सच्चे अर्थों में समता मूलक समाज के जनक थे। जिन्होंने जाति धर्म की भावना से ऊपर उठकर समाज में सब को गले लगाया। अपने 104 वर्ष के वनवास काल में भगवान राम ने न जाने कितने कोल भील और दलित जाति की महिला शबरी के झूठे बेर खाएं शबरी के भगवान राम के प्रति प्रेम का प्रतिउत्तर ही था कि रघुकुल नरेश भगवान राम जी ने बड़े प्रेम से शबरी के झूठे बेर खाए। **"सच्चा रामभक्त वही है जो इन भावनाओं से ऊपर है"**।

श्रीराम जी का आदर्श व्यक्तित्व :-

परिदृश्य अतीत का हो या वर्तमान का, जनमानस ने रामजी के आदर्शों को खूब समझा-परखा है। रामजी का पूरा जीवन आदर्शों, संघर्षों से भरा पड़ा है। राम सिर्फ एक आदर्श पुत्र हीं नहीं, आदर्श पति और भाई भी थे। जो व्यक्ति संयमित, मर्यादित और संस्कारित जीवन जीता है, निःस्वार्थ भाव से उसी में मर्यादा पुरूषोत्तम राम के आदर्शों की झलक परिलक्षित हो सकती है। राम के आदर्श लक्ष्मण रेखा की उस मर्यादा के समान है जो लाँघी तो अनर्थ ही अनर्थ और सीमा की मर्यादा में रहे तो खुशहाल और सुरक्षित जीवन।

वर्तमान संदर्भों में भी मर्यादा पुरूषोत्तम श्रीराम के आदर्शों का जनमानस पर गहरा प्रभाव है। उनके महान चरित्र की उच्च वृत्तियाँ जनमानस को शांति और आनंद उपलब्ध कराती हैं। संपूर्ण भारतीय समाज के जरिए एक समान आदर्श के रूप में भगवान श्रीराम को उत्तर से लेकर दक्षिण तक संपूर्ण जनमानस ने स्वीकार किया है। उनका तेजस्वी एवं पराक्रमी स्वरूप भारत की एकता का प्रत्यक्ष चित्र उपस्थित करता है।

आदिकवि के अनुसारः

आदिकवि ने उनके संबंध में लिखा है कि वे गाम्भीर्य में उदधि के समान और धैर्य में हिमालय के समान हैं। राम के चरित्र में पग-पग पर मर्यादा, त्याग, प्रेम और लोकव्यवहार के दर्शन होते हैं। उनका पवित्र चरित्र लोकतंत्र का प्रहरी, उत्प्रेरक और निर्माता भी है। इसीलिए तो श्रीराम के आदर्शों का जनमानस पर इतना गहरा प्रभाव है और युगों-युगों तक रहेगा।

(Footnotes)

* Head; Department of Music & performing Arts. Nehru Gram Bharti University; Jamunipur Kotwa.

अवधी तथा भोजपुरी लोकगीतों में "राम"

डॉ0 जया श्रीवास्तव

सहायक आचार्य

नेहरू ग्राम भारती विश्वविद्यालय, (संगीत) जमुनीपुर, इलाहाबाद

भारत की सांस्कृतिक तथा सामाजिक एकता में भारत के लोकसंगीत का विशिष्ट स्थान है। **"हृदय से उत्पन्न होने वाले सीधे सच्चे भावों का स्पष्टीकरण तथा प्रकटीकरण लोकगीतों की अपनी विशेषता है। लोकगीतों की इस विशाल और व्यापक सौन्दर्य राशि के समक्ष संसार की संपूर्ण कृत्रिमता तुच्छ है।"**[1]

विश्व के सभी मनुष्यों की मूल भावनाओं का सामंजस्य, सापेक्षता ही लोकगीत का स्वरूप है। लोकगीतों का कोई ना कोई प्रधान विषय होता है। ऐसे लोकगीत जिनका प्रधान विषय प्रेम गीत या गाथा गीत हो उन्हें **"बैलेड"** कहा जाता है।

भारत की लोकधर्मी गायन तथा नृत्य परंपरा तथा गीतों के विस्तारण तथा सांस्कृतिक पृठभूमि को पुष्पित-पल्लवित करने में भगवान श्रीरामचन्द्र जी का विशेष योगदान है। राम के लोक रक्षक तथा लोकरंजन स्वरूप की झलक गीतों के माध्यम से संपूर्ण भारत में विद्यमान है। भक्ति भावना के प्रचार-प्रसार की दृष्टि से राम के अवतारी रूप को भारत के पूर्वी भाग में भोजपुरी तथा अवधी भाषाओं में बड़े ही विस्तार के साथ व्यक्त किया गया तथा भारत की जनता के द्वारा इस सुदीर्घ परंपरा का निर्वाह भी वैश्विक स्तर पर किया गया।

"धर्मिक मतानुसार त्रेतायुग में जब भगवान राम को चौदह वर्ष का वनवास दिया गया था तब अयोध्यावासियों ने राम के बाल्य और किशोर जीवन के विभिन्न प्रसंगों को सोहर, चैती तथा अभिन्यात्मक प्रस्तुति के माध्यम से व्यक्त कर अपने बिछोह काल की पीड़ा को व्यक्त किया था।"[2]

जनजीवन में रामकथा के प्रति व्याप्त श्रद्धा-भक्ति से अभिभूत और अनुप्रेरित होकर तुलसीदास जी ने संवत 1631 में रामचरित मानस की रचना की।

"तुलसी हिंदी के सबसे जनप्रिय कवियों में से थे जिनकी व्याप्ति ऐसी थी कि रामकथा को उसमें विस्तार मिला और लोक साहित्य में भी रागात्मक व्यक्त हुयी और इस प्रकार वह पोथियों से बाहर निकलकर विराट लोक संवेदन का अविभाज्य अंग बनी।"[3]

विनय पत्रिका का एक पद भगवान श्रीराम के प्रति तुलसी प्रेम को दर्शाता है -

"रघुपति विपति दवन
परम कृपालु प्रनत प्रतिपालक पतित पवन।"[4]

भोजपुरी तथा अवधी लोकगीतों में "सोहर" एक गीत शैली है। **"रामलला नहछू"** की रचना तुलसी ने इसी लोक प्रचलित सोहर छंद में कि है पुत्र जन्म के मांगलिक अवसर पर पास पड़ोस की, कुटुंब की स्त्रियाँ तथा गाने में प्रवीण वृद्धायें इकट्ठा होकर "सूतिकागृह" के द्वार पर बैठ कर **"सरिया"** तथा **"सोहर"** का गायन करती है। अवधी तथा भोजपुरी क्षेत्रों में सूतिका गृह को **"सउरि"** कहते हैं।

इन गीतों में माधुर्य, विनोद, रोचकता का पुट मिलता है। जिससे पुत्र जन्म के अवसर पर वेदना

से कराहने वाला आनंद से, विनोद की लहरों से गूँज उठता है।''

''सोहर'' अवधी क्षेत्र में पुत्र के जन्म के अलावा मुंडन, जनेऊ तथा वर पक्ष के भी द्वारा गाया जाता है। पुत्र कामना से व्याकुल कौशल्या, गंगा माई से विनती करती हैं, उन्हें पूर्ण विश्वास है कि गंगा माई कि कृपा से मैं संतति का मुख देखूँगी।

हंसि के जै बोलेली गंगा जी,
सुनु ए कौसिला रानी हो
ऐ कोकिला कवन संकट तोहरा,
परते मुकुती बनावेली हो''
सोनवा ए गंगा जी ढेर बाटै,
रसवा के पूछैला हो
मोरा रे सनततिया के साथ सनतति,
हम चाहिले हो''[5]

रामचंद्र जी को झूला झुलने से संबंधित एक गीत को भोजपुरी क्षेत्र में ऐसे प्रस्तुत किया गया है-

''श्री रामचंद्र झूले अजब पालना
उनके बाबा ले आये अजब पालना
आजी रानी झुलावै, झूलै पालना''[6]

इसी प्रकार रामनवमी जो चैत्रशुक्ल नवमी को मनायी जाती है। भगवान राम का अवतार इसी तिथि को हुआ था। चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से नवमी तक राम मंदिर में मानस का नवम पाठ किया जाता है। इसी दिन गाये जाने वाले गीतों को **''चैता''** कहा जाता है।

1. चैतंहि तिथि नौमी नौबति बाजइ
बाजै राजा दशरथ दुअरवा कौसिला रानी मंदिर''

2. घर-घर बाजत बधैइया हो रामा, अवध नगरिया
दर्शन करन चली दशरथ घर, अवध के लोग लोगइया
हो रामा अवध नगरिया

चैता जो कि दो प्रकार का होता है 1. झलकुटिया 2. साधारण झलकुटिया

चैता जो सामूहिक रूप से झाल-कूट बजा कर गाया जाता है जबकि साधारण चैता केवल एक आदमी गाता है।

चैता गाने का ढंग जिसमें प्रत्येक पंक्ति में ''आहो रामा'' या ''रामा'' शब्द का प्रयोग किया जाता है।

''रामा नदियन के तीरवा चनन गाछि बिरवा हो रामा
रामा मोर पिछुवरवा कोंहार भइया हितवा हो रामा।''

अवधी गीतों में एक गीत शैली **''रेखत''** भी होती है जो होली के अवसर पर गायी जाती है इसे गाने वाला अनने हाथ में ''मोर छल'' लिये रहता है और गीत के साथ बराबर लय दिये रहता है।

''चक्र सुदर्शन राम का रखवाली पर ठाढ
किरपा होइ रघुनाथ की, सौं पढ़ौं दसौं अवतार''[7]

इस प्रकार भारतीय लोकगीतों में राम के साथ जनता की भावनाओं की आत्मीयता संपूर्ण रूप से परिलक्षित होती है। राम समूचे हिन्दी प्रवेश की धर्मप्राण और सर्वहारा जनता की आत्मा तथा विश्वास का आधार है। लोक जीवन की उत्सवधर्मी प्रवृत्ति में रामजन्म से लेकर राम के वनवास तथा उनके लौट के आने पर समूची जनता के द्वारा दीपपर्व का आयोजन कर विभिन्न मनोहारी प्रस्तुतियों को लोकगीत के माध्यम से प्रस्तुत करना अविस्मरणीय तथा भारतियों की सांस्कृतिक कला का परिचायक है। भगवान राम यत्र-सर्वत्र लोक मर्यादा को घेरे लोकानुरंजन का सर्वाधिक प्रिय माध्यम थे रहेंगें।

सम्बन्धित पत्र पत्रिकायें

1. हलायुध फोशः
2. भारत में लोकनाट्य - शिव कुमार मधुर - पेज नं0-13
3. भक्ति काव्य का समाज दर्शन - प्रेमशंकर - पेज नं0- 167
4. विनय पत्रिका - पद संख्या - 212
5. भोजपुरी ग्राम गीत - डॉ0 कृणदेव उपाध्याय
6. अवधी लोकगीतों की पृठभूमि - दुर्गाशंकर पाण्डेय पेज नं0 71
7. हिन्दी साहित्य का वृहद इतिहास - पेज नं0-201

लोक संस्कृति में राम

श्री जितेन्द्र पाण्डेय

मा. गा. हि. वि. वि., इलाहाबाद

किसी क्षेत्र विशेष में निवास करने वाले लोगों के पारस्परिक धर्म त्योहार, पर्व, रीति, रिवाज, मान्यताओं, कला आदि को लोक संस्कृति का नाम दिया जाता है। लोक संस्कृति किसी क्षेत्र विशेष को अन्य क्षेत्रों से स्वतन्त्र पहचान प्रदान करती है।

जिस प्रकार वेदों और शास्त्रों ने मनुष्य को उसे कल्याण के लिए नाना प्रकार के मंत्र प्रदान किये उसी प्रकार राम ने मानव मात्र के लिए एक आचार संहिता प्रदान की।

जीवन को विभिन्न परिस्थितियों में मनुष्य को किस प्रकार आचरण करना चाहिए, रामायण इसके लिए आदर्श ग्रंथ है। राम के जीवन को आधार बनाकर अनेक राम काव्य लिखे गए। हिन्दी में भी तुलसीदास ने "रामचरितमानस" जैसे अद्वितीय महाकाव्य की रचना की।

राम एक ऐसी शख्सियत जिनके बारे में लिखना बहुत मुश्किल है क्योंकि जो पूर्ण ब्रम्ह हों उनके बारे में कैसे लिखा जा सकता है। दशरथ और कौशल्या के पुत्र के रूप में उन्होंने धरती पर अवतार लिया। वे मर्यादा पुरूषोत्तम हैं। बाल्मीकि और तुलसीदार दोनों ने ही उनकी जीवन गाथा का अत्यंत पवित्र भाव से अंकन किया है।

रामचरित मानस में जीवन के विविध प्रसंगों के मध्य रामचन्द्र जी का जो रूप उभरकर आया है, वह प्रातः स्मरणीय है। परिवार, समाज और राष्ट्र सभी स्तरों पर राम का चरित्र आदर्श की सीमा है।

वनवास के समय ऋषियों के आश्रम में जाकर उन्हें सम्मान दिया। राक्षसों का विनाश के साथ ही रावण का सर्वनाश करते हुए न केवल सीता को पुनः प्राप्त किया अपितु विभीषण का तिलक किया। अपनी शरण में आये विभीषण और सुग्रीव को अभयदान देकर शरणागत धर्म निभाया।

सुग्रीव के प्रति मित्रता का जो आदर्श तुलसीदास ने चित्रित किया है, वही आदर्श है—लोक मर्यादा की रक्षा के लिए निष्कलंक पत्नी का परित्याग करके प्रजा के सामने आदर्श राजा का रूप प्रस्तुत किया। आज भारतीय जीवन में यदि आदर्श की कुछ मर्यादा बची है, तो उसका कारण राम ही है। वैसे तो आज चारों ओर भ्रष्टाचार और पतनोन्मुखी भावनाएँ पनप रही हैं परन्तु जो लोग राम के चरित्र को अपनाते हैं, वे आज भी इन बुराइयों से बचे हुए हैं।

तिथि निर्धारित करने की वैज्ञानिक प्रक्रिया के अनुसार राम का जन्म 5016 ईसापूर्व हुआ था, जो करीब करीब 7,000 वर्ष से थोड़ा ज्यादा है। सात हजार पहले जब दुनिया के ज्यादातर हिस्सों में शासक बर्बर हुआ करते थे, राम ने एक राजा के रूप में मानवता, त्याग और न्याय की अद्भुत भावना दिखाई। उनका राज्याभिषेक बहुत कम उम्र में ही हो गया था परन्तु कुछ

सरल परिस्थितियों के कारण उन्होंने राजगद्दी छोड़ दी। ऐसी छोटी मोटी परिस्थिति को ज्यादातर लोग अनदेखा कर देते परन्तु राम उसे अनदेखा नहीं कर सकते थे क्योंकि उनके अंदर न्याय की भावना बहुत प्रबल थी इसलिए उन्होंने राजा का पद छोड़ दिया और अपनी पत्नी तथा एक भाई के साथ राज्य छोड़कर चले गए। वे उनका साथ नहीं छोड़ना चाहते थे और उनके पीछे पीछे चल दिए। तीनों जंगल में सत्ता, सुख सुविधाओं के बिना और गुमनामी में रहे, बहुत सी मुसीबतें झेलीं। राम ने अपनी प्रिय पत्नी को खोने की ह्रदयविदारक स्थिति का सामना किया जिसे कोई दूसरा पुरूष उठा कर ले गया था। उन्हें एक युद्ध लड़ना पड़ा और उनके जीवन में बहुत सी दूसरी दुर्भाग्यपूर्ण घटनाएं हुईं परन्तु इन घटनाओं के दौरान भी उन्होंने न्याय और निःस्वार्थ भावना दिखाई और किसी स्थिति में सबसे बदतर चीजों के लिए खुद तैयार रहे।

भारत में राम राज्य को एक न्यायपूर्ण राज्य व्यवस्था के पर्याय के रूप में जाना जाता है। यही इस देश की सुंदरता, संयम और अनोखी प्रकृति है। सारी अव्यवस्था, भ्रम और भ्रष्टाचार की स्थिति के बीच से अचानक कोई बढ़िया उदाहरण सामने आकर हर किसी को चकित कर देता है। भारत के तौर तरीके हमेशा से ऐसे ही रहे हैं। जब हर किसी को लगता है कि यह संस्कृति नष्ट हो गई, हर सीमा से परे भ्रष्ट हो गई, तो अचानक कोई बहुत बढ़िया उदाहरण आपके सामने आ खड़ा होगा, जो आपको सोचने पर मज़बूर कर देगा, "हां अभी एक उम्मीद है।" ऐसा अकूसर होता रहता है क्योंकि अव्यवस्था में हम सबसे बढ़िया काम करते हैं। जब बहुत जूयादा व्यवस्था होती है, तो हमें समझ नहीं आता कि कैसे काम करें। भारतीयों का व्यवस्था में बहुत दम घुटता है, उन्हें थोड़ी अव्यवस्था चाहिए होती है। मैं जानता हूँ कि पश्चिमी लोगों के लिए यह कुछ जूयादा अव्यवस्था है, परन्तु यह बस थोड़ी सी ही है, ठीक हैघ् क्या थोड़ा है और क्या जूयादा, इसका मानदंड हर देश के लिए अलग अलग होता है। भारतीय मानदंडों से यह बस ज़रा सी अव्यवस्था है और उसके बिना वे सहज महसूस नहीं करते, उन्हें इसकी ज़रूरत होती है। उन्हें यहां एक दूसरे से थोड़ा टकराने की ज़रूरत पड़ती है, अन्यथा उन्हें एक दूसरे की कमी महसूस होती है।

भारत में राम राजूय को सबसे न्यायपूर्ण व्यवस्था माना जाता है। राम और सीता की कहानी तो भारत में सबने सुनी है, जिसमें राम सीता को लंका पर आक्रमण करके रावण से बचाते हैं। पूरी रामायण यही तो है लेकिन वानर सेना और हनुमान जी से मिलने से पहले यहाँ तक की अयोध्या से वनवास लेने से पहले श्रीराम अपने भाई लक्ष्मण के साथ जनता को न्याय देते थे। जानें भगवान राम राजूय से जुड़ी एक रोचक घटना के बारे में जो राम और रावण युद्ध से पहले रामचरित मानस से पहले की हैण्ण्ण

पुराणों में राम के बारे में एक बहुत ही सुंदर कहानी है। प्राचीन काल में इस देश के उत्तरी भाग में एक बहुत प्रसिद्ध मठ था, जिसे कालिंजर के नाम से जाना जाता था। कालिंजर मठ उस समय का एक प्रसिद्ध मठ था। यह रामायण काल से पहले की बात है। रामायण का मतलब है—5000 साल पहले। राम के आने से पहले भी कालिंजर मठ का खूब नाम था। राम को बहुत न्यायप्रिय और कल्याणकारी राजा माना जाता था। वह हर दिन दरबार में बैठकर लोगों की समस्याएं हल करने की कोशिश करते थे। एक दिन शाम को जब दिन ढल रहा था, उन्हें दरबार की कार्यवाही समेटनी थी। जब वह सभी लोगों की समस्याएं सुन चुके थे, तो उन्होंने अपने भाई लक्ष्मण जो उनके परम भक्त थे, से बाहर जाकर देखने को कहा कि कोई और तो इंतजार नहीं कर रहा। लक्ष्मण ने बाहर चारों ओर देखा और वापस आकर बोले, "कोई नहीं है। आज का हमारा काम अब खत्म हो गया है।" राम बोले

जाकर देखो, कोई हो सकता है। यह थोड़ी अज़ीब बात थी, लक्ष्मण अभी अभी बाहर से देखकर आ चुके थे, परन्तु वह फिर से जाकर देखने के लिए कह रहे हैं इसलिए लक्ष्मण फिर से गए और चारों ओर देखा, वहां कोई नहीं था।

वह अंदर आने ही वाले थे, तभी उनकी नज़र एक कुत्ते पर पड़ी, जो बहुत उदास चेहरा लिए बैठा था और उसके सिर पर एक चोट थी। तब उन्होंने कुत्ते को देखा और उससे पूछा–"क्या तुम किसी चीज़ का इंतजार कर रहे होघ्" कुत्ता बोलने लगा, "हाँ, मैं राम से न्याय चाहता हूँ।" तो लक्ष्मण बोले–तुम अंदर आओ और वह उसे दरबार ले गए। कुत्ते ने आकर राम को प्रणाम किया और बोलने लगा। वह बोला, "हे राम! मैं न्याय चाहता हूँ। मेरे साथ बेवज़ह हिंसा की गई है। मैं चुपचाप बैठा हुआ था, सर्वथासिद्ध नाम का यह व्यक्ति आया और बिना किसी वज़ह के मेरे सिर पर छड़ी से वार किया। मैं तो बस चुपचाप बैठा हुआ था। मैं न्याय चाहता हूँ।" राम ने तत्काल सर्वथासिद्ध को बुलावा भेजा, जो एक भिख़ारी था। उसे दरबार में लाया गया। राम ने पूछा–"तुम्हारी कहानी क्या हैघ् यह कुत्ता कहता है कि तुमने बिना वज़ह उसे मारा।" सर्वथासिद्ध बोला–हां, मैं इस कुत्ते का अपराधी हूँ। मैं भूख़ से बौखला रहा था, मैं गुस्से में था, निराश था। यह कुत्ता मेरे रास्ते में बैठा हुआ था, इसलिए मैंने बेवज़ह निराशा और गुस्से में इस कुत्ते के सिर पर मार दिया। आप मुझे जो भी सजा देना चाहें, दे सकते हैं।

फिर राम ने यह बात अपने मंत्रियों और दरबारियों के सामने रखी और बोले, "आप लोग इस भिखारी के लिए क्या सजा चाहते हैंघ्" उन सबने इस बारे में सोचकर कहा, "एक मिनट रुकिए, यह एक पेचीदा मामला है। पहले तो इस मामले में एक इंसान और एक कुत्ता शामिल हैं, इसलिए हम सामान्य तौर पर जिन कानूनों को जानते हैं, वे इस पर लागू नहीं होंगे। इसलिए राजा होने के नाते यह आपका अधिकार है कि आप फैसला सुनाएं।" फिर राम ने कुत्ते से पूछा–तुम क्या कहते हो, क्या तुम्हारे पास कोई सुझाव हैघ् कुत्ता बोला–हां, मेरे पास इस व्यक्ति के लिए एक उपयुक्त सजा है। वह क्या, बताओघ् तो कुत्ता बोला–इसे कालिंजर मठ का मुख्य महंत बना दीजिए। राम ने कहा–तथास्तु और भिखारी को प्रसिद्ध कालिंजर मठ का मुख्य महंत बना दिया गया। राम ने उसे एक हाथी दिया, भिखारी इस राजा से बहुत प्रसन्न होते हुए हाथी पर चढ़कर खुशी खुशी मठ चला गया। दरबारियों ने कहा–यह कैसा फैसला हैघ् क्या यह कोई सजा हैघ् वह आदमी तो बहुत खुश है। फिर राम ने कुत्ते से पूछा, क्यों नहीं तुम ही इसका मतलब बतातेघ् कुत्ते ने कहा–पूर्वजन्म में मैं कालिंजर मठ का मुख्य महंत था और मैं वहां इसलिए गया था क्योंकि मैं अपने आध्यात्मिक कल्याण और उस मठ के लिए सच्चे दिल से समर्पित था, जिसकी बहुत से दूसरे लोगों के आध्यात्मिक कल्याण में महत्वपूर्ण भूमिका थी। मैं वहां खुद के और हर किसी के आध्यात्मिक कल्याण के संकल्प के साथ वहां गया और मैंने इसकी कोशिश भी की। मैंने अपनी पूरी कोशिश की। परन्तु जैसे जैसे दिन बीते, धीरे धीरे दूसरे छिटपुट विचारों ने मुझे प्रभावित करना शुरू कर दिया। मुख्य महंत के पद के साथ आने वाले नाम और ख्याति ने कहीं न कहीं मुझ पर असर डालना शुरू कर दिया। कई बार मैं नही, मेरा अहं काम करता था। कई बार मैं लोगों की सामान्य स्वीकृति का आनंद उठाने लगता था। लोगों ने मुझे एक धर्मगुरु की तरह देखना शुरू कर दिया। अपने अंदर मैं जानता था कि मैं धर्मगुरु नहीं हूं परन्तु मैंने किसी धर्मगुरु की तरह बर्ताव करना शुरू कर दिया और उन सुविधाओं की मांग करना शुरू कर दिया, जो आमतौर पर किसी धर्मगुरु को मिलनी चाहिए। मैंने अपने संपूर्ण रूपातंरण की कोशिश नहीं की परन्तु उसका दिखावा करना शुरू कर दिया और लोगों ने भी मेरा

समर्थन किया। ऐसी चीजें होती रहीं और धीरे धीरे अपने आध्यात्मिक कल्याण के लिए मेरी प्रतिबद्धता घटने लगी और मेरे आसपास के लोग भी कम होने लगे। कई बार मैंने खुद को वापस लाने की कोशिश की परन्तु अपने आसपास जबर्दस्त स्वीकृति को देखते हुए मैं कहीं खुद को खो बैठा। इस भिखारी सर्वथासिद्ध में गुस्सा है, अहं है, वह कुंठित भी है, इसलिए मैं जानता हूं कि वह भी खुद को वैसा ही दंड देगा, जैसा मैंने दिया था। इसलिए यह उसके लिए सबसे अच्छी सजा है, उसे कालिंजर मठ का मुख्य महंत बनने दीजिए।

उपर्युक्त कहानी को समझने की ज़रूरत है। आज हम 21 वीं सदी में जी रहे हैं। हमें समय के साथ चलने की ज़रूरत है न कि पुरातन सोच के साथ जीवनयापन करने की परन्तु इसका मतलब ये कतई नहीं है कि हम अपने आदर्शों, रीति रिवाजों और मानवता की हत्या करके आगे बढ़े। आज हमें लोक संस्कृति में राम विषय पर परिचर्चा की ज़रूरत क्यों पड़ीघ् ये इस बात का प्रमाण है कि हम आदर्शों को भूलते जा रहे हैं, हम मानवता की भी निर्मम हत्या कर रहे हैं। हमें ज़रूरत है तो आत्मचिंतन और आत्ममनन की जिससे हम समाज में एक अलग पहचान के साथ ही साथ दूसरे लोगों का मार्ग प्रशस्त कर सकें। वक्त जिन्दगी बदलने के लिए सबको मिलता है परन्तु वक्त बदलने के लिए जिन्दगी दोबारा नहीं मिलती। अपनी परछाईं बनाने के लिए हमें खुद धूप में खड़ा होना पड़ेगा। ऐसा नहीं है कि राम के जैसे हम बन जाएंगे परन्तु इतना तो जरूर है कि एक अच्छा इंसान बन जाएं, वही जीवन की सार्थकता होगी क्योंकि कहा जाता है कि इंसान ख्वाहिशों से बँधा एक जिद्दी परिन्दा है, जो उम्मीदों से ही घायल है और उम्मीदों पर ही जिंदा है। राम के बारे में जितना लिखा जाए, उतना कम है। अपनी बात को प्रसिद्ध वाक्यांश के साथ विराम देता हूं

कौन कहता है कि बदलाव आ नहीं सकताए
बस शिद्दत और जुनून चाहिए कुछ कर गुज़रने के लिए।

श्रीराम के चरित्र में तन्त्री वाद्यों की भूमिका

डॉ. संगीता सिंह

एसोसिएट प्रोफेसर, संगीत एवं मंचकला संकाय
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

गायन वादन तथा नृत्य तीनों का समावेश ही संगीत है। गायन के बाद वादन का स्थान आता है। वादन की क्रिया को वाद्यों के माध्यम से किया जाता है। वाद्यों का चतुर्विद वर्गीकरण जो तत्त, सुषिर, अवनद्ध तथा घन नाम से किया गया है[1] इस वर्गीकरण में वितत के अंतर्गत गज (बो) से वादन होने वाले तन्त्रि वाद्यों को रखा गया है उदहरणार्थ - सारंगी, बेला आदि शेष भरतोक्त वर्ग ही है। 'वितत' का तात्पर्य खींचा हुआ या झुकाया हुआ (धनुष की तरह) भी होता है। [2] गज, जिसमें सारंगी आदि तन्त्री वाद्यों का वादन होता है धनुषाकार ही होता है अतएव यह प्रतीत होता है की गज के इसी गुण के कारण सारंगी इसराज आदि वाद्यों को वितत संज्ञक वर्ग में स्थान दिया गया। तत् को तंत्री वाद्य भी कहते हैं। नाट्यशास्त्र में भरत ने तत् को तंत्रीकृत कहा है। रामायण मैं भी तंत्र वाद्यों का प्रमुख स्थान रहा है जिसका उपयोग सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक अवसर ऊपर होता रहा है जैसे - लवकुश द्वारा रामायण में गायन के प्रसंग में वीणा के लिए तंत्री शब्द का प्रयोग किया गया है। [3]

महाकाव्य काल में वाद्यों का जीव जन्तुओं के साथ भी अन्योंन्याश्रय सम्बंध स्थापित था स वैदिक युग में तो शक्तिशाली देव ही वाद्य कला को अपनाए हुए थे किन्तु इस युग मे यह कला इतनी लोकप्रिय हुई कि साधारण जीव जंतु से लेकर पेड़ - पौधे तक से इसका घनिष्ट संबंध होता था स इसकी सुन्दर कल्पना वाल्मीकि ने आदिकाव्य में सशैन्य भरत द्वारा भारद्वाज मुनि के आश्रम में प्रवेश करते समय किया गया हैस वह वाद्य संगीत का चरमोत्कर्ष पर था।

महर्षि वाल्मीकि द्वारा रचित रामायण भारत का प्राचीन सांस्कृतिक महाकाव्य माना जाता है रामायण की रचना गेयकाव्य के रूप में हुई। श्री राम के पुत्र लव और कुश को इस महाकाव्य के गान की शिक्षा के साथ वीणा वादन की भी शिक्षा देकर महत्व को समझाया है

रामायण काल में संगीत सर्वत्र परिव्याप्त था। किष्किंधा कांड में श्रीराम जी वर्णन करते हुए लक्ष्मण जी से कहते हैं हे लक्ष्मण देखो भ्रमरों का गुंजार वीणा का मधुर स्वर कैसा है, लगता है वन में संगीत चल रहा है।[4]

रामायण में गंधर्व जन विशेषता गान तथा बीणा वादन किया करते थे और अप्सराओं का कार्य इनके साथ नृत्य करना था। रामायण में वर्णित एक पंक्ति में बालकाण्ड 'तैत्रिलयसमन्वितं' से यह पुष्टि होती है की तंत्री अर्थात वीणा के बिना रामायण गान आकर्षक व् सुमधुर नहीं बन पाता है।[5]

वैदिककालीन तंत्री वाद्यों में वीणा सर्वाधिक प्रमुख वाद्य था, जिसके अनेक भेद प्रचलित थे, उदाहरणार्थ—बाण, कर्करि, काण्डविणा, कात्यायनि, विपञ्चि, पिनाकी आदि। मनुष्य कृत वीणा की तुलना प्रकृतिदत्त मानव - शरीर से की गई।[6]

तन्त्री वाद्यों के अतिरिक्त नाडी तूणव, शंख आदि सुषिर वाद्य एवं दुन्दुभी, आडम्बर, पणव आदि अवनद्ध वाद्य तथा अघाटी घन प्राचलित थे पूर्ववैदिकाल में वेणु शब्द प्रमुख रूप से वंस (बाँस) के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। प्रभू श्री राम के समय में गीत मनोविनोद का साधन बन गया स जीवन की साधना ने नवीन मोड़ लिया स अब लोग अत्यधिक आराधना न होकर शृगार सम्बन्धी वस्तुओं का अधिकाधिक उपयोग करने लगे, जिसका मूल श्रोत गीत हुआ स इस कारण इस युग के गीतों में शृंगारिक भाव अधिकाधिक परिलच्चित होता है।

रामायण काल भारतीय संस्कृति का अत्यंत समृद्ध काल माना जाता है। इसमें महर्षि ने गायन के साथ वीणा की शिक्षा को महत्वपूर्ण स्थान दिया है इस काल की महानगरी श्री राम की अयोध्या वानर राज सुग्रीव की किष्किंधा और राक्षस राज रावण की लंका वीणा वादन से सदा निनादित होती रहती थी।

इसके अनेक उदाहरण मिलते रहते हैं-- जैसे महाराज दशरथ की मृत्यु के पश्चात राजकुमार भरत जब अपने मामा के यहां से अयोध्या वापस आते हैं तब उन्हें वीणा की मधुर झंकार सुनाई पड़ती है जिससे वे अयोध्या में अमंगल होने का अनुमान लगा लेते हैं।

महाकाव्य काल में सामगान की अविरल धारा तो प्रवाहित हो रही थी, यज्ञयान तक सीमित थी, किन्तु उसके वाद्यक्षेत्र में गान्धर्व का प्रचलन था। वह लौकिक संगीत के अंतर्गत आता था, जिसमे गायन तथा वादन दोनों का अंतर्भाव था।

इस काल में कला पक्ष के साथ-साथ शास्त्रा पक्ष का भी उत्कर्ष हुआ, जिसमें गान्धर्व के अंतर्गत स्वर, मूर्छना, पाठ्य, ताल, लय, जाति आदि विषयों पर विवेचना हुई। अब संगीत कला का उपयोग मनोरंजन तथा व्यवशाय दोनों रूपो में होने लगा। तत्कालीन संगीत का व्यवशाय करने वालो में गायक, सूत, मागध, बंदी तथा बरांगनाओ का महत्वपूर्ण स्थान समाज में था।

सुख- दुःख दोनों अवसरो पर संगीत का प्रयोग होता था। रावण की अन्त्येष्टि के समय विविध तुर्यो के निर्घोष के साथ स्तुतिगान किया गया था। इसी प्रकार किष्किंधा कांड में एक वर्णन आया है जिसमें लक्ष्मण सुग्रीव को अपने कर्तव्य की याद दिलाने जाते हैं तो उनको महल में मधुर संगीत सुनने को मिलता है

प्रविश्ननेव सततं शुस्राव मधुरस्वरम्।
तंत्रिगीत समाकीर्ण समताल पदाक्षरम्।। [7]

अर्थात्-- सुग्रीव के महलों में घुसते ही लक्ष्मण ने बीणा के साथ उसके मधुर स्वर में मिलते हुए गीत सुमे जिसके शब्द और ताल उन स्वरों से युक्त थे। इससे स्पष्ट है कि वीणा का उस समय कितना प्रचार था सम्पूर्ण जगत के संगीत - इतिहास में भारतवर्ष ही ऐसा राष्ट्र, जहाँ सहस्रशो वर्षो पूर्व संगीत-वाद्यों का विधिवत वर्गीकरण प्रस्तुत किया गया। यह असंदिग्ध रूप से कहा जा सकता है की वह भारतीय वाद्य-वर्गीकरण की छाप पाश्चत्य वाद्य -वर्गीकरण पर अभिन्न रूप से पड़ी है। पाश्चात्य संगीत में घन वाद्यों को अलग वर्ग के रूप में स्थान दिलाने का श्रेय भारतीय वाद्य-वर्गीकरण को ही है, जो सहर्षो वर्ष पूर्व भी इस देश में प्रचलित था। वैदिककालीन एवं उनके परवर्ती साहित्य के अवलोकन से यह स्पस्ट हो जाता है की यहाँ चारो वर्ग के वाद्य विपुल संख्या में उपलब्ध थे, जिनका प्रयोग सामाजिको द्वारा विभिन्न सुअवशरो पर किया जाता था। इस तथ्य की पुष्टि सुप्रसिद्ध विद्वान प्रो राधा कुमुद मुकर्जी ने भी की है। [8]

रामायण में विपञ्ची जैसे प्राचीन विणाओ एवम् शुद्ध सप्त जातियों का वर्णन है, इससे यह सिद्ध होता है कि चार षड्ज ग्रामिक एवम् तीन मध्यम जातियों से वाल्मीकि परिचित थे।

रामायण में विपंची वीणा का वर्णन इस प्रकार किया गया है----

विपंची परिगृहयान्या नियता नृत्यशालिनी।
नृद्रावशमनुप्राप्ता सहकांतेव भामिनि।। [9]

अर्थात--- एक नाचने वाली सुंदरी विपन जी को लिए हुए इस प्रकार निद्रा वस को प्राप्त है कि मानो कोई भाविनी अपने प्रिय के साथ सोई हो।

गायन और वादन के प्रायोगिक क्षेत्र में झींगा गमोको का महत्वपूर्ण स्थान है उनके विकास में वीणा का मार्गदर्शन अलंघनीय है वीणा के बिना संगीत की शास्त्रीय विचारधारा को आगे बढ़ाया ही नहीं जा सकता था यह कहना कदापि अतिशयोक्ति पूर्ण नहीं है। वैदिक साहित्य में विणा, वाण करकरी आदि कई तंत्रीवाद्यों का वर्णन प्राप्त होता है जिनका कालांतर में और अधिक विकास कर के आधुनिकतम रूद्रवीणा तंजौरी विणा सितार आदि वाद्यों का सृजन किया गया।

संगीत का व्यवसाय करने वाले लोगों में गायक, सूत,मागध, बंदी तथा वारांगनाओं का समावेश था। नगरों में इन लोक कलाकारों का महत्वपूर्ण स्थान था।अन्त में हम कह सकते हैं कि इस काल में गीत वाद्य नृत्य में वीणा का विशिष्ट स्थान एवम् महत्त्व था।बाल्मीकि मुनि नेतो अपने महाकाव्य रामायण में बांसों से आच्छादित पर्वत को ही वेणु वादक के रूप में कल्पना कर लिया था।[10] उन्होंने संघ वाद्य का उपयोग प्रहर समाप्ति के सूचक के रूप में किया।[11] उन्होंने दूरियों के घोष के साथ वेणु वादन का भी उल्लेख किया है [12]जिसमें यह तथ्य प्रकाशित होता है कि उस काल में विभिन्य वाद्यों के साथ वेणु का भी वादन होता था उन्होंने यह भी स्पष्ट किया है कि भगवान विष्णु द्वारा पाछाजन नामक राक्षस को मारने के कारण उनके शंख का नाम पांचजन्य शंख पड़ गया है शास्त्रीय सिद्धांतों की प्रमाणिकता को सिद्ध करने मैं तंत्री वाद्यों का बहुत महत्व रहा है।

तंत्र वाद्य की आवश्यकता होती है गायक द्वारा प्रयुक्त सही स्वर्ग स्थानों की अभिव्यक्ति तंत्रवाद्यों से अधिक उपर्युक्त संगत होती है इसमें भीड़ गमक सूक्ष्म स्वरों की अभिव्यक्ति तथा विशिष्ट रागों की आत्मा बसती है तंत्रवाद्यों में उचित संगत होती है

इससे यह सिद्ध होता है कि रामायण काल में वाद्य संगीत कितनी उन्नत दशा में थी रामायण काल में सभी वर्ग के लोगों को वीणा प्रिय थी एवं सामाजिक राजनैतिक व धार्मिक अवसरों पर उसको महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त था।वाद्य कला अधिक सूक्ष्म और अकृतिम आनंद प्रदान करने वाली है अतः तंत्र वाद्यों की प्रधानता सदा से रही है मधुर ध्वनि और गीतों की समस्त विशेषताओं को व्यक्त कर सपने की स्वाभाविक क्षमता इसमें विद्यमान है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1 .शारंगदेव, संगीत रत्नाकर महाराष्ट्र राज्य साहित्य संस्कृत मंडल सचिवालय बम्बइ. अध्याय-6 1975
2. वृहद् हिंदी कोष ज्ञान मंडल लि. वाराणसी संवत् 2020 पृ. 1255
3. सप्तारभयुक्त तंत्रिलय समन्वितम्।। रामायण बालकाण्ड सर्ग 4 श्लोक स. 4
4. वाल्मीकि रामायण गीताप्रेस गोरखपुर किष्किन्धा काण्ड सर्ग-28,श्लोक-36-37
5. परांजपे,श्रीधर इतिहास भारतीय संगीत का इतिहास, पृष्ठ 20
6. ऐतरेय आरण्यक 3ध्2ध्5
7. रामायण, किष्किन्धा काण्ड सर्ग-33, श्लोक-21
8. हिन्दू सिविलाइजेशन पार्ट1 राधा कुमुद मुख़जह्न भारतीय विद्या भवन, बम्बू 1963 पेज 71
9. रामायण, सुन्दरकाण्ड सर्ग-10,श्लोक-37और40
10. श्रीमद्वाल्मीकि रामायण सुन्दर कांड, सर्ग- 56, श्लोक-31
11. वही, अयोध्या कांड सर्ग- 81 श्लोक स.2
12. वही, किष्किन्धा कांड, सर्ग-30, श्लोक-50

लोकगीतों में राम

डॉ. कावेरी त्रिपाठी

असिस्टेंट प्रोफेसर, संगीत विभाग
नेहरू ग्राम भारती विश्वविद्यालय
कोटवा जमुनीपुर, इलाहाबाद

लोकगीत यानी सहज अनुभूत परंपरा से आम जनमानस के हृदय से प्रस्फुटित गेय उद्गार। ये उद्गार इतने सहज होते हैं कि जनमानस में सदियों तक रचे बसे रहते हैं। मनुष्य आदर्शों के अनुरूप चलता है। आदर्श वे होते हैं जो उनकी स्वयं की जीवनानुभूति के निकट हों। यहीं श्रीरामचंद्र लोकमानस की अवचेतना में अपनी अमिट छाप छोड़ जाते हैं, जो आम जन सा है परंतु समस्त संकटों से टकराने का साहस रखता है। जो मानवीय संबंधों का मान रखता है, स्वयं कष्ट झेलता है, दुर्दम्य संकट से मुकाबले के लिए दीन हीनों की सेना बनाता है। और मर्यादा, सच्चाई, इमानदारी, मानवीय संवेदना के साथ दृढ़ इच्छा शक्ति के आधार पर समस्त संकटों पर विजय पाता है। इसीलिए राम आम जनमानस का नायक है। स्पष्ट है कि आम जनमानस के हृदय में उठती संवेदनाएँ जब सहज उद्गार बन कर गेय रूप में निकलेंगी तो वह लोकगीत उस नायक के उद्दात चरित्र से परिपूर्ण होगा। यही स्थिति हम पूर्वांचल के लोकगीतों में देखते हैं। चाहे ऋतु, पर्व लोकगीत हों या संस्कार गीत, राम केंद्रीय भाव में आते हैं।

प्रस्तावना

लोक कथाओं में, लोक साहित्य में, लोक गीतों में, मंगल कार्यों, शादी व्याह के मौकों पर राम ही याद आते रहे। पता नहीं, कितने युग बीते पर अभी भी हम अपने के कोसते हुए राम से उलाहना देते हैं? राम बेइमान अकेले चली गइले। मुक्तिबोध पीठ के निदेशक प्रो. डॉ. श्यामसुंदर दुबे कहते हैं कि राम लोक की एक संवेदना है। वे लोक में इतने रमे हुए हैं कि वे लोक का दुख दर्द, जय पराजय सब अपने में समेटे हैं। राम का चरित्र पूरब से पश्चिम तक, उत्तर से दक्षिण तक सर्वत्र फैला हुआ है। जन्म से लेकर मृत्यु तक पूरे लोक में राम विद्यमान रहते हैं। वैदिक ऋचाओं की तरह लोक संगीत या लोकगीत अत्यंत प्राचीन एवं मानवीय संवेदनाओं के सहजतम उद्गार हैं। ये लेखनी द्वारा नहीं बल्कि लोक जिह्वा का सहारा लेकर जन मानस से निःसृत होकर आज तक जीवित रहे।[1]

लोकगीत

लोकगीत लोक के गीत हैं। जिन्हें कोई एक व्यक्ति नहीं बल्कि पूरा लोक समाज अपनाता है। सामान्यतः लोक में प्रचलित, लोक द्वारा रचित एवं लोक के लिए लिखे गए गीतों को लोकगीत कहा जा सकता है। लोकगीतों का रचनाकार अपने व्यक्तित्व को लोक समर्पित कर देता है। शास्त्रीय नियमों की विशेष परवाह न करके सामान्य लोकव्यवहार के उपयोग में लाने के लिए मानव अपने आनन्द की तरंग में जो छन्दोबद्ध वाणी सहज उद्भूत करता हैं, वही लोकगीत है।[2]

लोकमानस में राम

भारतीय संस्कृति के प्राणाधार भगवान राम न सिर्फ भारत में, बल्कि दक्षिण पूर्व एशिया के मुस्लिम देशों की संस्कृति में भी रचे बसे हैं। वहाँ रामकथा विभिन्न रूपों में प्रचलित है और लोक जीवन से इतनी गहराई तक जुड़ी हुई है कि वह उनकी संस्कृति का अभिन्न अंग बन गयी है। दक्षिण पूर्व एशिया में रामकथा विषय पर शोध कार्य कर रहे साहित्य के सर्वोच्च सम्मान ज्ञानपीठ पुरस्कार से अलंकृत संस्कृत के प्रकांड विद्वान प्रोफेसर डॉ. सत्यव्रत शास्त्री ने बताया कि म्यांमार, थाइलैंड, मलेशिया, कंबोडिया, लाओस आदि देशों में रामकथा विभिन्न नामों से प्रचलित है। थाइलैंड में इसे रामकियन अर्थात रामकीर्ति, कंबोडिया में रामकेर, म्यांमार में रामवत्थु, रामवस्तु और रामाथग्गियन, मलेशिया में हेकायत तथा लाओस में फ्रलक फ्राम यानी श्री लक्ष्मण श्रीराम कहा जाता है।[3]

भारत की लोक संस्कृति गहरे और गहरे राम से जुड़ी हुई है। अकेले राम से जुड़ीं हुईं इतनी लोक कथाएं, लोकगीत हैं कि वह कभी लिखने से खत्म न हो। मेले के गीतों, तीर्थयात्रा के गीतों, बारहमासों, कजरियों, होलियों, चौतियों में भी राम ही बसे हुए हैं। राम भारतीय लोकजीवन के पूरे व्रत हैं। और ऐसा होते हुए भी, लोकमन में राम निर्मोही भी हैं—'अरे निर्मोहिया के हम ना देखब' और 'राम बेईमान अकेले चली गइलें' का प्रस्फुटन लोक संस्कृति में रामचरित मानस की उपज है। राम के ऐश्वर्य को निरंतर लोकमानस स्वीकार करता है। पर उस ऐश्वर्य को निरंतर आत्मीयता की चुनौती भी देते रहता है कि—मेरा तो यही प्रण है कि होली खेलेंगे तो रघुवर के साथ। वे भले ही रहा करें पराक्रमी और अयोध्या के राजा—"प्रण यही मेरो रघुवर जी से खेलबी होरी, जाके सिर पर मुकुट बिराजै, सांवर गौर दुनों जोरी।"4 परतंत्रताकाल में देश से बाहर गये श्रमिक भी अपने साथ रामचरित मानस ले जाना नहीं भूले। मानस भारत से जुड़े रहने को 'तार' के समान है।

लोकगीतों में राम

ऋतु लोकगीत

ऋतु लोकगीतों में चौती में तो राम के जन्म का महीना होने के कारण टेक ही राम का लिया जाता है। कजरी और फाग भी राम. के विना अधूरे हैं।

कजरी

ऋतुगीतों में 'कजरी' का महत्वा सर्वोपरि है तथा इसकी लोकप्रियता इसी से है कि इसे ऋतुगीतों की 'रानी' भी कहा जाता है। वर्षा ऋतु के आने पर लोगों के मन में जिस नये उल्लामस व उमंग का संचार होता है, उस भाव की अभिव्यसक्ति करती है कजरी। ऋतुगीतों की श्रेणी में वर्षागीत के अन्र्गत सावन में गाया जाने वाला यह गीत प्रकार विशेष लोकप्रिय है।

राम सीता के जीवन के विविध पक्षों का वर्णन कजरी गीतों में मिलता है। झूला झूलने का वर्णन तो है ही साथ ही राम जनम, विवाह, वन गमन इत्यातदि रोचक प्रसंगों का भी उल्ले ख इनमें हैं। भगवान राम लोक जीवन में इतने व्याजप्तक है कि उनके जीवन के प्रत्येइक पक्ष की अभिव्यंक्तिव इनमें भरी है।[5]

एक गीत में राम सीताजी के झूला झूलने का उल्लेख देखिए—

"सिया संग झुले बगिया में राम ललना"

एक गीत में सीता के फुलवारी में नहीं आने पर राम की व्याकुलता का उल्ले ख है—

"सीता भूल गयी फुलवरिया
राम जी व्याकुल भईले ना..."

और बनवास मिलने के बाद माता कौशिल्या. के दुख का उल्ले ख भी है। वो सोनार से रामजी के लिए सोने का खड़ाऊं बनाने को कहती है क्योंमकि राम बन जाने वाले हैं

"सोनरा गढ़ि दे सोने के खड़ऊवा
राम मोरा बन में जईहें ना...
सोने के थारी में जेवना परोसो

जेवे राम लखन दुनो भईया
सीता चंवर डोलइहे ना...''

रामभक्तव हनुमान की महिमा का बखान भी इन गीतों में है

''हरि हरि राम भगत हनुमान
जगत में न्याहरा रे हरी...
ओही हनुमान से सीता खोजि लाये रामा
हरि हरि ओही हनुमान लंका जारे रे हरी
हरि हरि राम भगत हनुमान...''

और फिर बन से आने के बाद तक का वर्णन भी इन गीतों में हैं। राम सीता के मोहक रूप का वर्णन इस गीत में देखिये

''सखि हो आये राम ललनवा, झूले जनक पलनवा ना...
सिर पर सोभे मोर मुकुटवा, कान में कुंडल ना, कि सखि हो सीता के मन भावे, सुन्दूर राम ललनवा ना...''

सावन में जहाँ सभी स्त्रियां अपने नैहर जाती है ऐसे में भाई को वापस भेज देना, पति पत्नील के प्रेम का उत्कृयष्टर उदाहरण है। जहां प्रेम है वहीं दुःख भी है। पति के बिना सावन का महीना पत्नीप के लिए असह्य्य पीड़ा भी देता है। इस कजरी में पत्नीह का दुःख कैसे चित्रित है, देखिये

''चढ़त सवनवा अईले मोरा ना सजनवा रामा
हरि हरि दारून दुःख देला दुनो जोबनवा रे हरि...
सोरहो सिंगार करिके पहिरो सब गहनवा रामा
हरि हरि चितवत चितवत धुमिल भईल नयनवा रे हरि...

चौती

चौत माह का महत्व देखते हुए ही इस माह के लिए भारतीय लोक में एक विशेष संगीत रचना हुई है जिसे चौती कहते हैं। चौती में शृंगारिक रचनाओं को गाया जाता है। चौती के गीतों में संयोग एवं विप्रलंभ दोनों भावों की सुंदर योजना मिलती हैं। यह महीना श्री राम के जन्म का भी है। इसलिए चौती की हर पंक्ति के अंत में रामा कहने की प्रथा है।[6]

चौता यविशेष गीतद्ध के गायन और प्रफुल्लित वातावरण में राम का जन्मोत्सव होता है।

''जनम लिये रघुरैया हो रामा, चईत महिनवां'' या ''घरे घरे बाजेला बधइया हो रामा–अवध नगरिया''।[7]

चौत मास में अनुराग है, मिलन है। प्रकृति में मस्ती है, तो मानव मन भी मस्त होता है। चौत मास में विरह भी है। वसंत में शृंगार भाव का प्राबल्य होने के कारण चौत का महीना विरहिणियों के लिए बड़ा कठिन होता है। चौत ऐसा उत्पाती महीना है जो प्रिय वियोग की पीड़ा को और भी बढ़ा देता है–

चौत महिनवा पिया परदेस में,
जियरा में हूक उठे मोरे रामा, चौत महिनवा।
को बिन सूनी लागे, अंबुआ की डारी,
को बिन सूनों, जियरा हो रामा, चौत महिनवा।

कोई किशोरी वधू युवावस्था में प्रवेश कर जाती है, किंतु चौत में प्रियतम नहीं लौटता, यह उसे बड़ा क्लेश देता है

चइत मास जोवना फुलायल हो रामा, कि सैंयाँ नहिं आयल।

एक मुग्धा नायिका एक ही फूल के रंग में अपनी चुनरी और प्रिय की पगड़ी रंगाकर एकरूपता लाना चाहती है–

कुसुमी लोढ़न हम जाएब हो रामा राजा केर बगियाए
मोर चुनरिया सैंयाँ तोर पगड़िया एकहि रंग रँगायब हो रामा।

फाग

फागुन में होली के अवसर पर गाये जाने वाले फाग या होरी में भी राम अनुपस्थित नहीं होते। जनमानस होली खेलते समय अपने गीतों में राम को याद कर उल्लसित होता है।

होरी खेलें रघुबीरा अवध में होरी खेलें रघुबीराए
भई महलन में भीरा, अवध में होरी खेलें रघुबीरा।
राम के हाथ कनक पिचकारी, लछमन हाथ अबीरा, अबीरा, होरी खेलें रघुबीरा।
सिया की भीजे सतरंग चूनर, सखियन को भीजे सरीरा, सरीरा, होरी खेलें रघुबीरा।
होली खेलने के वक्त राम किस रंग का प्रयोग करते थे, कौन से परिधान पहनते थे, सीता जी ने कौन सा परिधान पहना, यह भी होरी के गीतों में याद आता है–
टेसू रंग राम खेलत होरी, टेसू रंग।
राम जी तो पहिनैं पियरो पीताम्बर, राम जी तो
ए जी सीता जी तो, ए जी सीता जी तो पहिनैं चीर चुनरी, टेसू रंग ॥ टेसू रंग राम
राम जी के हाथ चन्दन पिचकारी, राम जी के
ए जी सीता जी के, ए जी सीता जी के हाथ गुलाल झोरी, टेसू रंग ॥ टेसू रंग राम
जनमानस अपने गीतों में जब रंग बरसने की कल्पना करता है तो पूरा राम परिवार उसके जेहन में होता है
और महीनों में बरसे न बरसे, फागुनवा में रस रंग रंग बरसे द्य
राम जी पे बरसे, और सीता जी पे बरसे
संग संग!!!! ओ हो संग संग प्यारे हनुमत जी पे बरसे द्यद्य फागुनवा में

संस्कार लोकगीत

संस्कार गीतों में राम अत्यंत श्रद्धाभाव से सर्वत्र याद किये जाते हैं।

जन्म के 11वें दिन के बाद से वर्ण व्यवस्था के अनुरूप विभिन्न तिथियों को होने वाले नामकरण संस्कार पर पंडित को बुलाने का गीत देखिये

मोरे पिछुवरियाँ पंडित भइया बेगें चलि आवहु हो

ये पंडित राम जोगे आनिहैपतरवा हो त राम के संस्कार होवे हो।[8]

बाल काटना, नाखून काटना, नहाना किसी भी संस्कार अनुष्ठान में स्वच्छता के आयाम हैं जिनका पालन आवश्यक होता है। इस अवसर पर गाये जाने वाले लोकगीत को नहछू गीत कहते हैं

आहो रामा जोगे आनिहैमहावर राम के नहछू होइहें हो

नोह डूँगै, नउवा नोह टूँगैनहसूरै बचाई टूँगै

आहो राम के पतरी अंगूरिया, अंगूरिया जनी काटीय9

यज्ञोपवीत संस्कार में राम की उपस्थिति देखिये

आठ बरिस के रमइया उन्हें देतेउ जनेऊ ना

अतना सुनतइ बसिष्ठजी मलिआ बुलावइँ।

विवाह से संबद्ध अधिसंख्य गीतों में वर वधू का समीकरण राम और सीता से है। सीता शिव से वर माँगती हैं–

अन धन चाहे जो दीहा शिव बाबा, स्वामी दिहा सिरी राम

हर विवाह लोकमानस में धनुष यज्ञ हैय हर कन्या का पिता जनक, वर का पिता दशरथ, कन्या सीता और वर राम है।[10]

लोकगीतों में, चाहें वह ऋतु गीत हों, पर्व गीत हों, संस्कार गीत हों, पेशा गीत हों या जातीय गीत, राम हर ओर उपस्थित हैं। लोक में राम को समझना होगा। लोक में विवाह के समय लडके लडकी को राम सीता के रूप में ही देखा जाता है। मर्यादा, आचरण, सच्चाई, शासन सभी बिंदुओं पर राम आदर्श हैं। प्रख्यात साहित्यकार पं. विद्या निवास मिश्र का निबंध 'मेरे राम का मुकुट भीग रहा' अवलंबित है, भारतीय लोक संस्कृति पर आधारित लोक समझ पर, जहाँ हर परिस्थितियों घटनाओं का रस बुने जाने की परंपरा राम के ही दिग्दर्शन में रही है। पूरी भारतीय लोक संस्कृति ही राम से जुड़ीं घटनाओं परिघटनाओं से अपने को परिपुष्ट करती है।

"मोरे राम के भीजे मुकुटवा, लछिमन के पटुकवा
मोरी सीता के भीजै सेनुरवा त राम घर लौटहिं।"

संदर्भ सूची

1. दैनिक भास्कर, 7 दिसंबर, 2015
2. सम्मेलन पत्रिका लोकसंस्कृति अंक. प. 250
3. दक्षिण पूर्व एशिया के देशों में बसी रामकथा, 30 मार्च 2009, ीजजचरू//्रण्ईीपअलांजप ीपदकपण्वतह/दपइंदकी/दैतपजप/2009/तंउांजीींणीजउ
4. डॉ. मनोज कुमार तिवारी, 11 फरवरी, 2016, ीजजचरू/्रत्मचवतज4पदकपंण्बवउ/2016/02/11/राम से जुड़ने का मतलब अपने/
5. ज्योति सिन्हा, रिमझिम बरसेला सवनवा, रचनाकार, 2008
6. शांति जैन, चौत मास का विशेष गीत चौती, ीजजचरू//ूूूण्ईीपअलांजप ीपदकपण्वतह/दपइंदकी/2008/बींपजपणीजउ
7. मृदुला सिन्हा, मन मोहक चौत महीना, ीजजचरू//चंदबीरंदलंम्बवउ/तंबी/2011/4/17/ब्सम11णीजउ
8. भोजपुरी लोकगीतिका, नामकरण संस्कार गीत, पृष्ठ 44
9. भोजपुरी लोकगीतिका, नहछू संस्कार गीत, पृष्ठ 59
10. विद्यानिवास मिश्र, लोक और लोक के स्वर

लोकगीत, गाथा, नाट्यों में राम

कुमारी क्षमा मिश्रा

शोध छात्रा, गायन विभाग, संगीत एवं मंचकला संकाय
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

भारत के प्राचीन वैदिक दर्शन के अनुसार पंचतत्वों के साथ, जीवित व मृत पूरी सृष्टि की उत्पत्ति ओम् से हुई है, जिसे प्रणव कहा जाता है। प्राचीन भारतीय प्रबुद्ध ऋषियों, मनीषियों एवं दृष्टाओं ने भी सृष्टि की उत्पत्ति नाद ब्रह्म से मानी थी। दूसरे शब्दों में मूलभूत नाद ब्रह्म ऊँ वाचक है और इसी नाद ब्रह्म से संगीत की उत्पत्ति हुई है। ब्रह्माण्ड की प्रत्येक चराचर वस्तु में नाद व्याप्त है। अतएव इस नाद को 'नाद ब्रह्म' की संज्ञा दी गयी है।

भारत के संगीत के इतिहास के प्राचीन काल को एक निश्चित समय को महाकाव्य काल कहते है। इस काल में महाकाव्य लिखे गये इसलिए इसे यह नाम दिया गया। इसे वीरकाल भी कहते हैं क्योंकि इन दोनों महाकाव्यों में वीरों के युद्ध की कथा वर्णित है। यह समय एक विचार के अनुसार सन् 1900 ई0 पूर्व से लेकर 1400 ई0पू0 तक का है।

इन महाकाव्यों को रामायण और महाभारत कहते हैं। यह संस्कृत में रचे गये हैं। यह कविता में है तथा इनका आकार क्योंकि बड़ा है, इसलिए इन्हें महाकाव्य कहा जाता है। इन महाकाव्यों से उस समय के समाज में संगीत की स्थिति का ज्ञान हो सके यही समझने का प्रयास है।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, तथा संगीत उसका चिरसंगी है। संगीत से मनुष्य का घनिष्ठ संबंध होने के कारण संगीत कला समाज में अपना विशिष्ट स्थान रखता हैं। समाज के बिना कला का कोई अस्तित्व नहीं है। किसी भी समाज की कला उसके मनुष्यों की मानसिक प्रवृत्ति से पनपती है। समाज की मानसिकता उसकी भौतिक स्थिति पर आधारित होती है। समाज की भौतिक स्थिति से हमारा संदर्भ समाज के आर्थिक आन्तरिक संबंधों तथा सभी वर्गों के व्यक्तियों के आपसी रिश्तों से है। समाज के आर्थिक ढाँचे के प्रगतिशीलता के कारण ही कला भी निरन्तर विकसित व परिवर्तित होती रहती है।

संगीत का संबंध जितना मानव से है उतना ही समाज से है। कारण, व्यक्ति समाज की इकाई है; यदि मनुष्य संगीत का सच साधक बन जाये तो समाज स्वयं ही उन्नत होता जाता है। कलाकार अपनी कला के सृजन से समाज में सभ्यता तथा संस्कृति का विकास करता हुआ मानव के सामाजिक जीवन को सफल बनाता है। विशिष्ट भौगोलिक तथा सामाजिक परिस्थितियों में उत्पन्न होने के कारण एक देश का संगीत दूसरे देश के संगीत के लिए अजनबी बनकर रह जाता है, क्योंकि भिन्न-भिन्न समाज की अपनी मौलिक परम्पराएँ तथा संस्कार होते हैं। संगीत द्वारा ही समाज को ये संस्थाएं अभिव्यक्त होती हैं। संगीत समाज व्यवस्था के चरित्र से जुड़ी वह कला है जो समस्त समाज के आंतरिक स्वरूप को एक ही प्रकार से प्रकट करती है। समाज की साम्प्रदायिक एकता का स्वरूप संगीत में पूर्ण रूप से परिलक्षित होता है।

धर्म में बिना समाज का कोई अस्तित्व नहीं होता तथा धर्म ही संगीत का जन्मदाता माना जाता है। संगीत द्वारा आध्यात्मिक का विकास तथा समाज द्वारा सामाजिक प्राणी की बुद्धि का विकास होता है। संगीत की उन्नति ही समाज की उन्नति है। समाज के विकास के साथ-साथ संगीत का विकास भी होता रहता है, क्योंकि संगीत समाज का अभिन्न अंग ही नहीं अपितु उसके विकास का माध्यम भी है। अतः स्पष्ट है कि संगीत और समाज का अटूट संबंध है। भारतीय संस्कृति में प्राचीन समय से ही धर्म को एक ऊँचा तथा महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है। अतः मानव जीवन में भी धार्मिकता का प्रधान्य रहा है। यही कारण है कि संगीत का धर्म स घनिष्ठ संबंध है। संगीत की उत्पत्ति सरस्वती, नारद आदि देवी-देवताओं से भी मानी जाने के कारण प्रत्येक धार्मिक अनुष्ठान संगीत द्वारा ही सम्पन्न होते हैं। इसलिए भारत के प्रत्येक धार्मिक तथा सांस्कृतिक प्रयोजनों में प्रयोग किया जाने वाला संगीत शासीय संगीत से जुड़ा है।

लोककलाएं किसी भी संस्कृति के रूप को प्रकट करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। संगीत कला विभिन्न देशों की संस्कृति का आदान-प्रदान करने का महत्त्वपूर्ण माध्यम है। विद्वानों के अनुसार 'अयोध्या' भारतीय संस्कृति का प्राचीनतम केन्द्र माना जाता है। इससे हम सहज ही अनुमान लगा सकते हैं कि कला के रूप में संगीत को सामाजिक प्रतिष्ठा भी सर्वप्रथम इसी धरती पर मिली होगी। अयोध्या का विस्तृत विवरण देने वाला प्राचीनतम उपलब्ध ग्रंथ है। वाल्मीकि कृत 'रामायण'। जिसका शताब्दी काल 1900 से 1400 ई0 है। जो हम ऊपर बता चुके हैं। अयोध्या की धार्मिकता में संस्कृति की जो पहचान पनपी है, उसमें यह देखना विशेष प्रासंगिक है कि तमाम प्रकार के संगीत का गढ़ रहा यह नगर, किस तरह रामनाम संकीर्तन की परंपरा को एक अन्तः धारा की तरह अपने भीतर समेटे हुए पिछली कई शताब्दियों से जी रहा है। अयोध्या में रामोपासना का सबसे महत्त्वपूर्ण मनोहारी एवं श्रद्धास्पद मन्दिर कनक भवन है। इस मन्दिर का निर्माण श्रीमती वृषभानु कुँवरि जू देवी द्वारा सन् 1885 में हुआ था। अयोध्या के इस प्रमुख मधुरोपासना के केन्द्र में विगत एक शताब्दी से पर्वों, उत्सवों मेलों एवं अन्यान्य अवसरों पर संगीत समारोहों के आयोजन की एक निराली परम्परा रही है। एक स्तर पर यह कहा जा सकता है कि परम्परागत अर्थों में जन्म, झूला, होरी, कजरी, ब्याह, फूल बंगला, रथयाा, नहान, परिक्रम तथा मेले आदि के श्रुति मधुर गीतों का सबसे प्रामाणिक और लोकप्रिय स्थान अयोध्या में यही मन्दिर ठहरता है। प्रस्तुत खण्ड में अयोध्या को केन्द्र में रखते हुए कनक भवन की अष्टायाम सेवा के निमित्त, उस संगीत सेवा को रेखांकित करने की कोशिश की गयी है, जिससे हम जान सकें कि तमाम लोक गीतों, गाथाओं एवं नाट्यों में राम या राम से जुड़े हुए विषयों का वर्णन कैसे होता है। जिनमें से कुछ के उदाहरण इस प्रकार है-

रसिया-

रसिया ने लाज हरी मोरी।
मैं अपनी मग चली जात ती धाओ कह हो हो होरी
हौं सकुचाय चली मैं आतुर आन गही कर वजोरी
घूंघट खोल गुलाल लगायो रंग केशर चूनर बोरी
कंचन कुंवर छैल रघुनन्दन उर मणि माल झटक तोरी।

विभिन्न प्रकार की आरती में पद् गायन होता था जिनमें से कुछ पद गायन का उदाहरण इस प्रकार है–

युगल स्वरूप की झाँकी का पद-
कनक भवन की विहारिणी श्रीस्वामिनी जू
करुणा कृपालुता दयालुता की धाम हैं
भक्तन पे राखती सदैव ही दुलार ही अति
सखिनी पे राखती सनेह अभिराम है।
करती सदैव ठकुराई सब लोकन की
पापिन को पक्ष करिबे में सरनाम हैं
कवि 'जयरामदेव' जिनके स्वभाव ही पे
रीझि-रीझि मोहित है बिके प्रभुराम है।

अष्टायाम सेवा के अतिरिक्त प्रमुख पर्वों पर होने वाला गायन जैसे-युगल सवरूप की झांकी का पद, जानकी महिमा का पद, फूल बंगला का पद, हिण्डोला का पद, होली का पद, विवाह का पद, जानकी जी की मुँख दिखायी का पद, ठुमरी का पद इसके अलावा कंचन-भवन मन्दिर में झूलन, कजरी, रसिया एवं होरी गायन इसके अलावा राम-विवाह पर्व का संगीत जैसे तिलक चढ़ावन का पद, हल्दी कलश का पद, बारात आगमन का पद, चुमावन का पद, मण्डप में परिछावन का पद, भांवर का पद, सिन्दूरदान का पद, कोहबर का पद, जेवनार का पद, जुआ खेलावन का पद, कंगन खुलाई का पद, युगल जोडी श्रृंगार का पद आदि गाये तथा बजाये जाते थें जिनमें से एक दो के उदाहरण इस प्रकार हैं-

पद गायन-

युगल वर जागिये बलि जाऊँ
चंद मंद दुति दीपक छवि बिन, विकसित कमल लखाऊँ
रैनि गई अब जागो प्यारे, दर्शन करि सुख पाऊँ
उडुगण गये गाय निशि गुणगान, मैं अब प्रभु गुण गाऊँ
पंछी कलरव करत मनोहर, कोकिल तान सुनाऊँ
रामबल्लभाशरण प्रेमनिधि, प्रेम सुमन बरषाऊँ

बारात आगमन पद-

अवध नगरिया सजली बरियतिया हे सुहावन लागे
जनक नगरिया भइले शोर हे सुहावन लागे
सबदेवतन मिली चलले बरिअतिया हे सुहावन लागे
बजबा बाजेला घर घोर हे सुहावन लागे
बजवा के शब्द सुनी हुलसे मोरा छतिया हे सुहावन लागे
रोशनी से भईल बा इंजोर हे सुहावन जलागे
परिछन चलली सब सखिया सहेलिया हे सुहावन लागे
पहिरेली लहरा पटोर हे सुहावन लागे
कहथि रसिक जन दुलहा के सुरतिया हे सुहावन लागे
सुफल मनोरथ भईले हे सुहासन लागे।

सिन्दूर दान का पद-

राम सीय सिर संदुर देहीं, सोभा कहि न जाति विधि केहीं
अरुन पराग जलजु भरि नीकें, ससिहि भूष अहि लोभ अमी के
बहुरि बसिष्ठ दीन्हि अनुसासन, बरु दुलहिनि बैठे एक आसन
बैठे बरासन रामु जानकी मुदित मन दसरथु भए
तनु पुलक पुनि-पुनि देखि, अपनें सृकृत सुरतरु फल नए।
इसी प्रकार होरी, झूला और कजरी आदि गाया जाता था, जिसमें श्रीराम का वर्णन मिलता है-

होरी-

सखी री कैसे खेलौं लाल संग होरी, वो तो छैल करै बरजोरी
जबसे फागुन मास लगोरी मो हिय सोच बडोरी
बहुत दिनन से जोर-जोरी रंग मटकन घोर धरोरी
अब डफ ढोल बजन सखि लागे चहुँ दिशि हो रही होरी
लाल भरी मैं निकस सकोना छैल खड़ी मो पौरी
जो खेलूं पुर लोग हँसे सब दै-दै ताल हथौरी
नहिं जाऊं तो विरह ज्वाल में यह जिय जात जरोरी
कंचन कुंवर कहत चल खेलो लाज पै गाज परो री।

झूला-

सखि साबन घन घुमड़ रहे ही
रिमझिम-रिमझिम वारि वरस रहे सर सरितन जल भर उमहे री
वागन मोर कोकला कुहकत पपिहा पिउ-पिउ बोल कहे री
सुमन कुंज बिच घले हिंडोला प्रिय प्रीतम दोउ झूल रहे री
कचंन कुंवर झुलावै गावै छवि लखि लोचन साहु लहे री

इसके अलावा अयोध्या के समूचे वातावरण में राम भक्ति रची हुई है। रामनामी चादरें ओढ़े साधु या अनेकानेक राम मन्दिर में दर्शनार्थी गृहस्थ, पुण्यभूमि में जीवन बिताने की आकांक्षा से आयी हुई करताल बजाती वैष्णवियाँ अथवा मन्दिरों के विस्तृत प्रांगणों में भक्ति ग्रंथावलियों से भजन-बधावा गाते और नाचते कथक सभी राम-भक्ति में विह्वल दिखायी देते हैं। सचमुच राम की नगरी है और वहाँ के वातावरण में सभी के मन में यह भक्ति इस तरह समा जाती है कि लगता है कि अभी इन ऊँचे-ऊँचे विशाल मन्दिरों, उपवनों में या जिर संकरी गलियों के किसी मोड़ पर धनुर्धारी राम की श्यामल मूर्ति दिखलायी दे जायेगी। राम की भक्ति और सानिध्य की तीव्र भावना मानो राम को साकार बना लेती है और अयोध्या हमें 'राम-राज्य' के सुदूर अतीत का ठहरे हुए समय का एक टुकड़ा प्रतीत होती है।

संतपंच चौपाई मनोहर
जानि जो नरउर धरै
दारुण अवधि पंच जनित
विकास श्री रघुवर हरै

उपर्युक्त रामचरित मानस की चौपाइयों एवं अन्यान्य राम साहित्य को सांगीतिक पक्ष का राम नाम संकीर्तन, परंपरा का एक भक्ति स्वरूप है जो अयोध्या की एक विशिष्ट पहचान है। इस प्रकार इन उदाहरणों द्वारा यह पता चलता है कि लोकगीतों के राम का विशिष्ट स्थान है तथा आगे भी रहेगा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. सांगीतिक एवं धार्मिक परंपरा एक अवलोकन, डॉ0 भारती शर्मा, संजय प्रकाशन, दिल्ली भारत, प्रथम संस्करण 2006
2. भारतीय संगीत और आचार्य बृहस्पति, डॉ0 जतिन्द्र सिंह, अभिषेक पब्लिकेशन्स, एस0सी0 ओ0 57-58-59, सेक्टर 17-सी, चण्डीगढ़
3. शास्त्रिय संगीत का विकास-डॉ0 अस्मिता शर्मा, ईस्टन बुक लिंकर्स दिल्ली, प्रथम संस्करण
4. अयोध्या की संगीत परम्परा, यतीन्द्र मिश्र, भारतीय पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, प्रथम संस्करण 2011

ललित कलाओं में राम

डॉ0 सुषमा पाठक

अध्यक्ष संगीत विभाग,
जुहारी देवी गर्ल्स पी0जी0 कालेज, कानपुर

ललित कलाएं, कलाओं का एक विशेष विभाजन है, जिसके अन्तर्गत कुछ चुनी हुई कलाएं रखी गयी है जैसे- चित्रकला, मूर्तिकला, वास्तुकला, काव्य एवं संगीत ये मुख्यतः पाँच है। ललित कला को मनस्तत्व कहाँ गया है, जिसका अर्थ है, 'मानसिक सुख' अथवा 'मानसिक आनन्द'। ललित कलाएं सौन्दर्य का साक्षात् स्वरूप है। अर्थात् यह सौन्दर्य का मूर्त रूप प्रदान करती है। इसी कारण इनको 'फाइन आर्ट कहा जाता है। फाइन में तात्पर्य सुन्दर से है। अतः ललित कलाओं के अन्तर्गत वे कलाएं आती है जिनका एकमात्र प्रयोजन देखकर, सुनकर अथवा पढ़कर मानव हृदय को आनन्द प्राप्त कराना होता है। इन कलाओं का उद्देश्य कोई जीवनोपयोगी सामान बनाना नहीं है। ललित कलाएं उपयोगी कलाएं न होते हुए भी मानव जीवन को अन्य प्रकार से प्रभावित करती हैं। ये आनन्दात्मक होने के कारण ऐन्द्रिय सुख के साथ-साथ मानसिक, भावान्तमक और आध्यात्मिक सुख भी प्रदान करती है और मानवीय जीवन में मूल्यों की वृद्धि करती है। यद्यपि ललित कलाओं से कोई भौतिक सुख प्राप्त नहीं होता, इनसे हृदय और मस्तिष्क को अतीव आन्नद की प्राप्ति होती है। उदाहरण के लिये किसी ऐसे चित्र को देखकर जिसमें कलाकर ने सूर्यास्त अथवा सूर्योदय में रंगो का ऐसा चित्रण किया है जिसे देखकर हम आत्मविभोर हो उठते है, ऐसे चित्र देखकर मानसिक आनन्दानुभूति होती है। यद्यपि इस चित्र में वर्णित दृश्य से हमारी कोई भौतिक आवश्यकता पूरी नहीं होती है, तथापि इससे प्राप्त आनन्द अलौकिक होता है, जिसकी तुलना में कोई भी भौतिक उपलिब्ध तुच्छ प्रतीत होता है। इसी प्रकार कुशल संगीतज्ञ द्वारा प्रस्तुत स्वरलहरी अथवा किसी मूर्तिकार को छेनी से उभरी हुई मूर्ति या कवि की कविता में प्रदर्शित भावना से हमें अलौकि आनन्द की प्राप्ति होती है। अलौकिक आनन्द से प्राप्त सुख, आत्मा का विशेष अहार होता है। अंतः वह कलाएं जिनसे हमें ऐसे आनन्द की प्राप्ति होती है ललित कलाएं कहलाती है।

ललित कलाओं में सौन्दर्य की अभिव्यक्ति विभिन्न माध्यमों द्वारा होती है। ये ललित कलाएं समय-समय पर विभिन्न देशों की संस्कृतियों से प्रभावित होकर समृद्ध बनी है। जैसे वस्तुकला सर्वप्रथम मिस्त्र में, तत्पश्चात् ग्रीस बाद में गोथिक के गिरजाघरां में और आधुनिक युग में वास्तु शिल्प रूप में विकसित हुई है। इसी प्रकार मूर्तिकला एथेन्स में विशेष रूप से विकसित हुई और चित्रकला इटालियन सिनेमा में अपनी पराकाष्ठा पर पहुंची। चित्रकला की विविध शैलियों ने समय-समय पर कलाकारों को प्रभावित कर अनूठे चित्रों की कलाकृति को सम्भव बनाया।

संगीतकला किसी एक देश में ही विकसित नहीं हुई, किंतु संसार के समस्त देशों में सगीतकला विकसित हुई है। किसी भी देश की सभ्यता संगीत के प्रभाव से बच न सकी। ग्रीस, चीन, जापान,

मिस्त्र योरोप आदि सभी देशों की संस्कृति में संगीत का विशेष स्थान था। बीथेवन और मोजार्ट ने संगीतिक रचनाओं को अमर कर दिया। अतः उनकी रचनांए आज तक गायी-बजायी जाती हैं। संगीत को समस्त मानव धर्म की भावनाओं को दूसरों पर व्यक्त करने और पहुँचानें की क्षमता रखता है।

इसी प्रकार अन्य ललित कलाओं के सामान काव्य ने पूर्ण जगत् को अपने प्रभाव से जकड़ रखा था। काव्य को समस्त ललित कलाओं में सबसे उत्तम स्थान प्राप्त होता है। अतः काव्य की प्रबल धारा प्रत्येक समय पर विभिन्न देशों में निरंतर बहती गई। जिसके फलस्वरूप होमर, शेक्सपीयर मिल्टन, ड्राइडन, वड्र्सवर्थ, कबीर, तुलसी, जयदेव आदि की अमर रचनायें आज तक समस्त देशों के प्राणियों को प्रभावित कर रही है। काव्य में बौद्धिक तत्व अधिक है, जिस कारण उसका सौंदर्य व आनन्द बैद्धिक और आध्यात्मिक है। बौद्धिक तत्व अधिक होने के कारण कवि किसी एक देश से सम्बन्धित नही रहता, परन्तु उसकी काव्य (कृति) समस्त जगत् की धरोहर बन जाती है।

कला में माध्यम (Medium in Art)

जब कलाकार अपने भावों एवं विचारों को किसी कलाकृति द्वारा अन्य लोगो तक पहुँचाता है तो वह किसी साधन का सहारा लेता है। अपने भावों को कलाकृति में माध्यम द्वारा प्रस्तुत करता है। डमकपनउ शब्द लेटिन भाषा से लिया गया है, जिससे अभिप्राय ऐसे विशिष्ट साधन से जिनके द्वारा कलाकार अपनी कृति बनाता है। यह कृति कलाकर के भावो को प्रस्तुत करती है। माध्यम कलाकार का ऐसा धन है, जिसके द्वारा वह कलाकृति का निर्माण करता है। जैसे-स्थापत्य कला में ईंट, पत्थर आदिः चित्रकला में रंग, कैनवस, तूलिका आदिः साहित्य में शब्द और संगीत में ध्वनि आदि। कोई कलाकर समाज में अपना स्थान तभी बना पाता है, जब उसकी कलाकृतियाँ अन्य लोगो पर कोई गहरी छाप छोड़ती है। यद्यपि एक कलाकृति के निर्माण पर मे कलाकार की शिक्षा, साधना एवं प्रतिभा सभी का योगदान रहता है, किन्तु माध्यम के अभाव में कलाकृति को मूर्त रूप देना असंभव होता है। माध्यम द्वारा ही कलाकार के भाव कलाकृति में स्थान पाते है। कलाकार के मस्तिष्क में उभरें विचार तथा कल्पना माध्यम द्वारा ही मूर्त रूप प्राप्त कर पाते है। माध्यम के बिना कला अस्तित्व में नही आ सकती। किसी कला का परिचय जब तक नहीं हो सकता, जब तक उसे प्रस्तुत करने के लिए कोई माध्यम विद्यमान न हो। अतः कला के लिये माध्यम का होना अत्यावश्यक है। कला को समाज के अन्य सदस्यों के सम्मुख प्रस्तुत करने का एक ही साधन है-वह है माध्यम। माध्यम कला को रूप देता है। माध्यम द्वारा ही कला का अस्तित्व संभव होता हैं। बिना किसी उद्देश्य अर्थात विषयवस्तु के अभाव में कलाकृति की रचना हो सकती है, किन्तु माध्यम के अभावमें कलाकृति की रचना कर पाना संभव नही है। माध्यम कला की सामग्री के होने पर ही कलाकृति अस्तित्व में आती है। इस सामग्री का प्रयोग कलाकार अपनी सूझबूझ, प्रतिभा और कल्पना से करता है। तब वह कलाकृति भावों से ओतप्रोत ऐसे मुर्त बनती है, जिसे देखकर, सुनकर या पढ़कर अन्य लोगों को कलाकार के भावों का ज्ञान होता है। कलाकार की अन्तरात्मका का संदेश अन्य लोगों तक पहुँचानें वाली कलाकृति की रचना का सदेंश किसी माध्यम द्वारा होता है। माध्यम कलाकार की संपत्ति होती है। माध्यम का चुनाव कलाकार की रूचि, प्ररेणा, संस्कार और वातावरण पर निर्भर करता है। जिस माध्यम से कलाकार विशेषतः प्रभावित होता है, उसे वह अपनी कलाकृति की रचना करने के लिए चुन लेता है। जैसे- किसी संगीतकार का बेटा अगर संगीतकार बनता है तो उसके संस्कार, घर का वातावरण, माता-पिता द्वारा मिली प्ररेणा, सभी कुछ उसें संगीतकार बनाने में सहायक होते है। अर्थात् संगीतकला की उपासना को उसने अपने जीवन का ध्येय बनाया। किन्तु अगर किसी संगीताकर का बेटा संगीताकर न होकर चित्रकार बने तो इससे अभिप्राय यह है कि चित्रकला

को प्रस्तुत करने वाले माध्यमों ने उसे अधिक प्रभावित किया। इसलिये उसने भावों को व्यक्त करने के लिए चित्रकला को चुना। अतः कोई व्यक्ति किस कला का अनुयायी होगा- यह उस विशिष्ट कला के ऊपर आधारित रहता है। जो कला किसी को सर्वाधिक प्रभावित करती है, वह उसी को ही अपने जीवन का ध्येय बना लेता है। उस कला में भावों का प्रस्तुतीकरण माध्यम द्वारा होता है।

किसी भी कला को अस्तित्व देने के लिए माध्यम का होना आवश्यक है किसी भी कला का परिचय उस कला के माध्यम द्वारा होता है। कोई भी कला तब तक जानी नहीं जा सकती, जब तक कि उसे प्रस्तुत करने के लिए किसी माध्यम का प्रयोग न किया जाए केवल इतन ही नहीं माध्यम द्वारा कला एवं कलाकार दोनो को नाम की प्राप्ति होती है। कला और कलाकार माध्यम के द्वारा ही एक विशेष नाम से जाने जाते हैं। जैसे-किसी कलाकार ने शब्दों की कोई रचना की तो उसकी रचना 'कविता' कहलाई और उसकी कृति ' साहित्य कला' के अन्तर्गत आयी। किसी अन्य कलाकार ने रंग, तूलिका, कैनवस से कोई रचना की तो उसे चित्र की संज्ञा दी गयी और उसकी रचना चित्रकला के अन्तर्गत आयी। किसी अन्य विशेष प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति ने मिट्टी, गारा से कोई आकृति बनाई तो यह आकृति 'मूर्ति' कहलाई और वह 'मूर्तिकला' के अन्तर्गत समाई। उपरोक्त सभी कलाकारों को भी विशिष्ट नाम प्राप्ति हुई। जैसे शब्दों से रचना करने वाला कवि अथवा लेखक, रंगो आदि से रचना कराने वाला चित्रकार मूर्ति बनाने वालो को मूर्तिकार, ध्वनि के माध्यम से रचना करने वाले को संगीतकार कहा जाएगा। अतः माध्यम द्वारा कलाकार का परिचय होता है, कला को अस्तित्व विशिष्टता और नाम संज्ञा प्राप्त होती है।

ललित कलाओं का तात्विक अंतर सम्बन्ध

यद्यपि स्थूल रूप से ललित कलाओं में विभिन्ना दिखाई देता है परन्तु एक धरातल ऐसा भी है जिस पर पहुँचकर सभी ललित कलायें तात्विक दृष्टि से अतः सम्बद्ध और समान सिद्ध होती है। भारतीय चित्रकला के अन्तर्गत ''रागमाला'' के चित्रों के द्वारा राग-रागनियों, दृश्य विषय, रस, काल, भाव आदि का ऐसा चित्र प्राप्त होता है जिससे विभिन्न कलाओं के प्रति मन में रसानुभूति होती है।

1. काव्य कला द्वारा श्री राम नाम की रसानुभति—जब भी कोई काव्य सुनते है अथवा पढ़ते है अर्थात् जिस विषय पर काव्य सुनते है अथवा पढ़ते है अर्थात जिस विषय पर काव्य लिखा गया है होता है तो उसे पढ़कर हम उस विषय की रसानुभूति करते है जैसे-तुलसीदास की द्वारा रचित-कवितावली, दोहावली, विनय, पत्रिका और रामचरितमानस जब हम राम नाम के दोहे सुनते है या पढ़ते है तो मानों सारा दृश्य आँखो सामने घुमने लगता है और इन्ही भावों से आत्मा भावविभोर हो उठती है। यही काव्य कला की विशेषता है कि पढ़ते और सुनने मात्र से वह ब्रम्हासहोदर के दर्शन करा देती है।

2. चित्रकला द्वारा श्री राम दर्शन की रसानुभूति—चित्रकला एक दृश्य कला है और यह आँखो द्वारा ग्रहण की जाकर प्रभाव उत्पन्न करती है। इसके दृश्य मात्र से हमारे चेतन मन में जो अनुभूति होती है वह शब्दों के माध्यम से व्यक्त नही की जा सकती। चित्र कला के माध्यम से भगवान श्री रामचन्द्र हमारे चारो तरफ विद्यमान है घर हो या कार्यालय, मन्दिर हो या कोई पूजा स्थल हर जगह पर हम सभी को भगवना राम के दर्शन प्राप्त होते है। भगवान राम जी का एक प्रसिद्ध चित्र है जिसमें उनके राज्यलिपेक के बाद समस्त देवताओं को चित्र में दर्शाया गया है उस चित्र का हम सभी राम दरबार के नाम से जानते है, इस चित्र से ऐसा प्रतीत होता है जैसे समस्त देवता श्री राम और जानकी सहित इस धरा पर उपस्थित हो।

3. मूर्तिकला द्वारा श्री रामचन्द्र जी की रसानुभूति—मूर्तिकला भी एक दृश्यकला है। मूर्तिकला द्वारा ईश्वर का दर्शन आँखो द्वारा होकर

आत्मा को शांति प्रदान करता है। भारत वर्ष सनातन धर्म वाला देश है यहाँ श्रीराम को मर्यादा पुरूषोत्तम राम के नाम जाना जाता है, भगवान राम के मंदिर भारत वर्ष के बाहर भी स्थापित है। मूर्तिकला के माध्यम से हम भगवान राम के दर्शन हर मदिंर में प्राप्त करते है और मूर्तिकला के माध्यम से ही हम अपने अराध्य श्रीरामचन्द्र की अराधना एवं स्तुति करने का प्रयास करते है।

4. संगीत कला द्वारा श्री रामचन्द्र जी के नाम की रसानुभूति—जो रसानुभूति हम संगीत द्वारा व्यक्त करते है वह किसी और कला के द्वारा व्यक्त नही की जा सकती। संगीत एक ऐसी कला है जो समस्त ललित कलाओं में अपना महत्वूपर्ण स्थान रखती है। हृदय भावों को अपनी कला के माध्यम से साकार रूप देने की सर्वोधिक क्षमता संगीत में ही है। हम कह सकते है कि अभिव्यक्ति के माध्यम (नाद) की सूक्ष्मता के आधार पर भावों की सर्वाधिक अभिव्यक्ति करने के कारण सर्वश्रेष्ठ स्थान दिया गया है। यह एक ऐसी कला है जिसमें स्वर, लय एवं ताल के माध्यम से विविध भावों एवं रसो की अभिव्यक्ति की जाती है। संगीत के माध्यम से अनेक श्रृषि-मुनियों ने मोक्ष प्राप्त किया है-तुलसीदास, सूरदास, रहीम, मीराबाई, इत्यादि।

तुलसीदास की जी ''रामायण'' संगीतमय है। दोहा, छंद, सोरठा, आदि सब गे पद के रूप में प्रयोग किये जाते है। भारत वर्ष में अगिनत राम मन्दिर है और इन मन्दिरों में आठोयाम प्रार्थना संगीत के माध्यम से की जाती है।

''हरे राम हरे राम, राम राम हरे हरे।
हरे कृष्णा हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण हरे हरे''।

ये मंत्र महामंत्र के नाम से जाना जाता है, और प्रत्येक मंदिर, मठ, यज्ञ, स्थल आदि स्थानों में ये मंत्र स्वर, लय, ताल बद्धरूप में गाया जाता है।

इस प्रकार हम देखते है कि ललित कलाओं में राम इस प्रकार समाहित है जैसे शरीर में प्राण चित्रकला, मूर्तिकला काव्यकाल तथा संगीत कला इन सब के द्वारा हमें श्री राम की अनुभूति होती है और यही कलाएँ माध्यम है भगवान श्री राम को मनुष्यों से जोड़ने की।

ग्रन्थ- सूची

1. भारतीय शास्त्रीय संगीत एवं सौन्दर्य शास्त्र-डॉ0 अनुपम महाजन
2. ललित कलाओं में रस बोध के विविध आभास-डॉ0 सुषमा पाठक
3. संगीत स्वरित-डॉ0 रमाकान्त द्विवेदी
4. भक्ति संगीत अंक- लक्ष्मीनारायण गर्ग

साहित्य में राम

डॉ0 प्रीति श्रीवास्तव

हिन्दी विभाग
प्रताप बहादुर स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
प्रतापगढ़ सिटी, प्रतापगढ़

भागवत धर्म का उदय ईसा से चार-पाँच शती पूर्व हो गया था। वैदिक विष्णु और भागवत धर्म में स्वीकृत विष्णु ईसा से पाँच हजार वर्ष पूर्व के हैं। विष्णु पूजा को अंग्रेज विद्वान **वार्थ** भी बहुत प्राचीन मानता है। [1]"कहा जाता है कि पाँचवी से चौथी शताब्दी ईसा पूर्व जिस काल को ऋग्वैदिक काल कहा जाता है, तभी महर्षि बाल्मीकि ने **'रामायण'** की रचना की।" [2]"रामायण आदि कवि बाल्मीकि द्वारा लिखा गया संस्कृत का अनुपम महाकाव्य है। इसके 2400 श्लोक है। यह हिन्दू स्मृति का वह अंग है जिसके माध्यम से रघुवंश के राजा राम की गाथा कही गयी है। इसे आदि काव्य भी कहा जाता है। रामायण के सात अध्याय है जो काण्ड के नाम से जाने जाते है।" [3]"डा राम कुमार वर्मा के अनुसार- बाल्मीकि रामायण में 'राम का विष्णु से कोई सम्बन्ध नहीं है, वे अवतार न होकर केवल मनुष्य महात्मा और धीरोदात्त नायक है।"[4] "समय के बहाव के अनुसार कवियों की वैयक्तिक रुचि और समकालीन सामाजिक साँस्कृतिक आदर्शों के अनुसार भी रामकथा नये-नये सांचो में ढलती रही। इस बहाव में राम महापुरुष बन गये। हिन्दुओं ने उन्हे विष्णु के दशावतार में प्रतिष्ठित किया। वे साहित्यिक कृतियों में नायक तो बने ही, कालान्तरों में भक्ति सम्प्रदायों के उदय होने पर उनके अधिष्ठाता भी बनें।" सगुण और निगुर्ण दोनों-पंथों के भक्त कवियों ने उनकी महिमा का बखान किया है।

बाल्मीकि रामायण की कथा महाभारत में भी विविध स्थलों-आरण्यक पर्व, दोण-पर्व एवं शांति पर्व में है। संस्कृत के कुछ अन्य ग्रन्थों में भी राम विषयक आख्यान उपलब्ध होते हैं। जैसे- **अगस्त्य संहिता, राघवीय संहिता, राम रहस्योपनिषद, आध्यात्म रामायण, आनन्द रामायण, अद्भुत रामायण, भुशुण्डि रामायण, विष्णु पुराण, वायु पुराण और भागवत पुराण।** आगे चलकर कालीदास कृत **'रघुवंश'**, कुमारपाल कृत **'जानकीहरण'**, भवभूति कृत **'उत्तर राम चरित'**, जयदेव कृत **'प्रसन्न राघव'**, क्षेमेन्द्र कृत **'रामायणमंजरी'** आदि राम कथा पर आधारित ग्रन्थ है।

[5]"पाणिनी की अष्टध्यायी, कौटिल्य के अर्थशास्त्र के अतिरिक्त बौद्ध ग्रन्थों में भी राम कथा दी गयी है। इससे सिद्ध होता है कि पुराण काल (400 ई0 से 1500 ई0) में राम चरित की प्रतिष्ठा बढ़ती गयी।" बौद्ध जातक कथाओं में राम कथा 'दशरथ जातक' और 'अनार्मक जातक' में मिलती है। रामधारी सिंह दिनकर जी लिखते हैं कि- [6]"इतना सत्य है कि बुद्ध और महावीर के समय जनता में राम के प्रति अत्यन्त आदर का भाव था। जिसका

प्रमाण यह है कि जातकों के अनुसार बुद्ध अपने पूर्व जन्म में एक बार राम होकर भी जन्में थे। जैन ग्रन्थों में तिरसठ महापुरुषों में राम और लक्ष्मण की गिनती की जाती है।''

जैन कवि स्वयंभू द्वारा रचित प्राकृत भाषा में **'पउम चरिउ'** राम कथा का प्रसिद्ध ग्रन्थ है। इसके अतिरिक्त भुवनतुंग द्वारा रचित **'सिया चरियम'**, **'राम चरियम'**, गणुभद्र द्वारा रचित **'उत्तर पुराण'** और पुष्यदन्त द्वारा रचित **'महापुराण'** आदि राम कथा के उल्लेखनीय जैन ग्रन्थ है। दक्षिण भारत के अलवार भक्तों ने भी राम भक्ति के विकास में महत्वपूर्ण योगदान किया है। बारह अलवार भक्तों में से चार- **कुलशेखर, परकाल विष्णुचित्त** एवं **शठकोप** रामोपासक थे।

हिन्दी साहित्य में सर्वप्रथम चन्द्रवरदाई के पृथ्वीराज रासों के मंगलाचरण में विष्णु के दशावतारों के अन्तर्गत अड़तालिस पदों में राम कथा का संक्षेप में वर्णन हुआ है। [7]''उत्तर भारत में राम भक्ति का प्रवर्तन आचार्य रामानुज की परम्परा में राघवानन्द द्वारा हुआ और रामानन्द राघवानन्द के शिष्य थे। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने राम काव्य परम्परा का प्रथम कवि रामानन्द को स्वीकार किया है। रामानन्द ने धनुष वाण धारी राम के लोक रक्षक रूप की उपासना प्रारम्भ कर हिन्दू समाज की पराजित मनोवृत्ति का शमन किया और बलात् मुसलमान बनाये गये हिन्दुओं को **'राम तारक मन्त्र'** देकर हिन्दू धर्म में पुनः लौटने का मार्ग खोल दिया।''

'आरति कीजै हनुमान लला की' यह पद रामानन्द जी ने ही हनुमान जी की स्तुति में लिखा हैं। उनकी अन्य रचना **'रामाष्टक'** है और **'राम रक्षा स्त्रेत'** है।'

राम भक्ति साहित्य में दूसरे सशक्त कवि है विष्णुदास जिन्होने **'रामायण कथा'** नामक ग्रन्थ बाल्मीकि रामायण के आधार पर लिखा है। तुलसीदास से पूर्व ईश्वर दास ने **'भरत मिलाप'** और **'अंगद पैज'** नामक दो राम कथा काव्यों की रचना की।

कृष्ण भक्ति शाखा के कुछ कवियों ने भी राम कथा का अंकन किया है। जिसमें सूरदास द्वारा विरचित **'सूरसागर'** के **प्रथम** एवं **नवम्** स्कन्धों में राम कथा से सम्बन्धित पद है। नवम् स्कन्ध में 158 पदों में सम्पूर्ण राम कथा वर्णित है। ये पद्य सात काण्डों में संयोजित है। इनमें राम के लोक रक्षक रूप का चित्रण है। इस राम कथा में कुछ मौलिक उद्भावनायें भी हैं। विशेषतः लक्ष्मण शक्ति के प्रसंग में हनुमान द्वारा अयोध्या में आकर सारा वृतान्त बताना, अयोध्या वासियों की चिन्ता, कौशल्या, सुमित्र के सन्देश आदि। नन्ददास के तीन-चार पद ही राम कथा से सम्बन्धित मिलते है। परशुराम देव ने **'रघुनाथ चरित'** एवं **'दशावतार चरित'** में राम की कथा का वर्णन किया है।

[8]''राम काव्य धारा के सर्वप्रथम महान कवि तुलसी है। उन्होने अपनी रचनाओं द्वारा राम भक्ति को जीवन और साहित्य दोनों का चिरस्थायी अंग ही बना दिया।'' इन्होने राम कथा पर अनेक ग्रन्थों की रचना की। इनमें सर्वप्रमुख है **'रामचरित मानस'** जो हिन्दी का सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य माना जाता है। इसके अतिरिक्त उन्होने **'विनय पत्रिका'**, **'कवितावली'**, **'गीतावली'**, **'दोहावली'**, **'जानकी मंगल'**, **'पार्वती मंगल'**, **'वैराग्य संदीपनी'**, **'वरवै रामायण'**, **'कृष्ण गीतावली'**, **'रामलाल नहछु'**, **'रामाज्ञा प्रश्न'** कुल बारह ग्रन्थों की रचना की। रामानन्द की तरह तुलसी ने भी दास्य भावना का प्रचार किया। यथा-

सेवक सेव्य भाव बिनु, भव न तरिय उरगारि।

[9]''राम भक्ति काव्य के प्रवाह में एक नया मोड़ लाने का श्रेय कवि 'अग्रदास' को है। उन्होने स्वयं को सीता की सखी मानकर राम की उपासना की। इससे **'सखी-सम्प्रदाय'** की स्थापना हुई और राम भक्ति में रसिक भाव का प्रवेश हुआ। अग्रदास के दो ग्रन्थ है- **'रामाष्टयाम'** तथा **'ध्यानमंजरी'**।'' कृष्ण भक्ति शाखा में **'सखी-सम्प्रदाय'** की स्थापना का श्रेय स्वामी **'हरिदास'** को दिया जाता है। नाभादास कृत **'अष्टयाम'** रसिक भावना से युक्त रामकाव्य है।

भक्ति काल के अन्य राम भक्त कवियों में प्राणनन्द चौहान ने **'रामायण-महानाटक'** की रचना

की जो वस्तुतः नाटक न होकर संवादात्मक प्रबन्धकाव्य ही है। माधवदास ने **'राम रासो'** और **'अध्यात्म रामायण'** नामक काव्य गन्थों का प्रणयन किया जबकि हृदयराम ने 'हनुमन्नाटक' नामक काव्य ग्रन्थ की रचना की। नरहरिवारहट ने **'पौरुषेय रामायण'** की रचना बाल्मीकि रामायण के आधार पर की। लालदास ने **'अवध-विलास'** नामक ग्रन्थ लिखा जिसमें राम के जन्म से लेकर उनके वन गमन तक की कथा है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने आचार्य केशवदास को समय-विभाग की दृष्टि से भक्ति काल में स्थान दिया है। तथापि प्रवृत्ति की दृष्टि से वे रीतिकाल के अन्तर्गत आते है। [10]**'राम चन्द्रिका'** केशवदास द्वारा रामकथा पर लिखा गया उत्कृष्ट महाकाव्य है। कठिन काव्य के प्रेत कहे जाने वाले केशवदास कहीं-कहीं बड़ी सरसता का परिचय देते हैं-

सिन्धु तर्‌यो उनको बनरा
तुम पै धुन रेख गयी न तरी।
बानर बाधत सो न बन्धो उन
वारिधि बाँध के बाट कही।
अजहूँ रघुनाथ प्रताप की बात
तुम्हे दशकंठ न जानि परी।
तेलनि तूलनि पूँछ जरी न
जरी-जरी लंक जराय जरी।

इसी श्रेणी में सेनापति द्वारा रचित **'कवित्त रत्नाकर'** में रामायण के मधुर प्रसंगो का वर्णन है।

आधुनिक काल में कविवर मैथिलीशरण गुप्त ने **'साकेत'** जैसी प्रौढ़ रचना के द्वारा इस परम्परा को विकसित किया। [11]"द्विवेदी युग में राम काव्य ने नूतन और आधुनिक मोड़ लिया। 'गुप्त जी' ने और 'हरिऔध' ने राम के वृत्त को अपने युग के परिप्रेक्ष्य में नया और बौद्धिक आयाम दिया। इसमें परम्परागत उपेक्षित पात्रें को भी न्याय मिला।" साकेत के नवम् सर्ग में 'उर्मिला का विरह वर्णन' विशद रूप में किया गया है। यह उनकी मौलिक उद्‌भावना है। आठवें सर्ग में 'कैकयी का पश्चाताप' दिखाकर भी गुप्त जी ने अपनी मौलिक प्रतिभा का परिचय दिया है। बाल्मीकि के राम की मानवीयता गुप्त जी के विश्वबन्धुत्व से मिलकर एक नवीन दिशा की ओर उन्मुख हुई। वे लिखतें हैं-

भव में नव वैभव व्याप्त कराने आया।
सन्देश यहा मैं नहीं स्वर्ग का लाया।
इस भूतल पर ही स्वर्ग बसाने आया।

हरिऔध जी ने रामकथा पर आधारित काव्य **'वैदेही बनवास'** लिखा जिसमें राम को नरत्व प्रदान कर रामचरित की घटनाओं को एक नई दृष्टि से देखने का प्रयास किया। डा0 बलदेव प्रसाद मिश्र ने **'साकेत संत'** नामक काव्य में भरत को काव्य का केन्द्र बनाया व रामकथा का गुम्फन किया। [12]"गुरुदेव रवीन्द्र नाथ टैगोर ने बंग्ला में **'काव्येतर उपेक्षिता'** नामक लेख लिखा था। पं0 महावीर प्रसाद द्विवेदी ने छद्‌म नाम से इसे हिन्दी में प्रकाशित किया।"

छायावाद में निराला जी ने पत्नी प्रेम को आधार बनाकर **'तुलसीदास'** और **'राम की शक्ति पूजा'** जैसी कवितायें लिखी। जो अत्यन्त ओज पूर्ण और प्रभावशाली हैं। जैसे-

करना होगा यह तिमिर पार,
देखना सत्य का मिहिर द्वारा।

[13]"भारतीय संस्कृति के समष्टिगत रूप का दर्शन हमें जिन विशिष्ट स्थलों पर होता हैं। उनमें प्रमुख हैं मर्यादा पुरुषोत्तम राम का चरित्र। यह चरित्र इतना लोकप्रिय रहा हैं कि भारत ही नही, पड़ोसी देशों की जन भाषाओं में भी एक विशाल साहित्य की रचना हुई।" भिन्न-भिन्न प्रकार से गिनने पर रामायण तीन सौ से लेकर एक हजार तक की संख्या में मिलता है। आधुनिक भारतीय भाषाओं में हिन्दी से अलग रामकथा पर लिखे गये प्रमुख काव्य ग्रन्थ है- **'कृतिवासी रामायण' बंग्ला में, 'कम्ब रामायण' तमिल में, 'रंग रामायण' तेलगू में, 'भावार्थ रामायण', मंगल रामायण, संकेत रामायण,**

सुन्दर रामायण मराठी में, पद रामायण, गीति रामायण, कथा रामायण, कीर्तनिया रामायण असमियां में और गुजराती रामायण गुजराती में मिलते हैं।

विदेशों में भी पर्याप्त रामकथा के साहित्य मिलते है।[14] "जिनमें- **तिब्बत की तिब्बती रामायण, पूर्वी तुर्किस्तान की खोतानी रामायण, इण्डोनेशिया की ककबिन रामायण, जावा का सेवत राम, सैरीराम, राम केलिंग, पातानी राम कथा, इन्डोचायना की रामकेर्ति (रामकीर्ति), खैमर रामायण, वर्मा की यूतोंकी रामयागन, थाईलैण्ड की रामकियेन** आदि ग्रन्थ रामचरित का बखूबी बखान करते है। इसके अलावा विद्वानों का ऐसा मानना है कि ग्रीस के कवि **होमर** का प्राचीन काव्य **'इलियड'** रोम के कवि **नोनस** की कृति **डायोनीशिया** तथा रामायण की कथा में अद्भुत समानता है। नेपाली में **भानुभक्त कृत 'रामायण', 'सुन्दरानन्द रामायण'** और **'आर्दश राघव'** हैं। जिसे नेपाली भाषा में सिदिदास महाजु ने लिखा।

सन्दर्भ

1. hindi.news18.com
2. रामायण- hi.m.wikipedia.org
3. हिन्दी साहित्य का आलोचानात्मक इतिहास- डा0 राम कुमार वर्मा, पृ0 सं0- 333
4. युग के माध्यम से भारतीय साहित्य- ccrtindia.gov.in
5. साहित्यकुंज प्रो0 डा0 किशोर गिरड़कर- www.sahityakunj.net
6. संस्कृति के चार अध्याय- रामधारी सिंह दिनकर
7. भक्तिकाल- hi.m.wikipedia.org
8. प्रतियोगिता साहित्य- डा0 अशोक तिवारी
9. रामभक्ति काव्य उद्गम् और विकास- प्रो0 डा0 किशोर गिरड़कर, www.sahityakunj.net
10. प्रतियोगिता साहित्य- डा0 अशोक तिवारी
11. द्विवेदी युगीन काव्य- sol.du.in
12. मैथिलीशरण गुप्त, साकेत, पृ0 सं0- 138
13. रामभक्ति काव्य उद्गम् और विकास- प्रो0 डा0 किशोर गिरड़कर, www.sahityakunj.net
14. विभिनन भाषाओं में रामायण- hi.m.wikipedia.org
15. हिन्दी साहित्य का इतिहास- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल- श्रृंखला पब्लिशिंग हाउस।

श्री राम का भक्ति दर्शन प्रस्तोत्री

डॉ0 ममता सान्याल

एसोसिएट प्रोफेसर
संगीत गायन
आर्य महिला पी जी कालेज, वाराणसी

भारतीय परम्परा में भक्ति इतिहास एवं मार्ग दोनों अति प्राचीन है। आदिम अवस्था में मनुष्य प्रकृति की अनियन्त्रित सत्ता के प्रति नत विनत ही नही हुआ उसमें एक अलक्षित और अदृश्य शक्ति की कल्पना भी करने लगा। आरम्भ में यह भयभाव से उत्पन्न हुआ हो किन्तु कालान्तर में यह अदृश्य शक्ति श्रद्धा और विश्वास की वस्तु प्रतीत होने लगी। लोग अपने जीवन की वांछित सिद्धियों को प्राप्त करने के लिए प्राकृतिक शक्तियों को प्रसन्न करने के लिए प्रार्थनाएँ करने लगे। आगमों के व्यापक प्रभाव से भक्ति मार्ग को पोषण और प्रोत्साहन मिला। पुराण काल में भक्ति मार्ग की बहुत प्रोत्साहन मिला। तुलसीदास हिन्दी के सबसे जनप्रिय कवियों में जिनकी व्याप्ति ऐसी थी कि रामकथा को उनमें एक नया विस्तार मिला और वह लोक साहित्य में भी रागत्मकता से स्वीकारी गयी। चित्र, संगीत, मूर्ति, नाट्य आदि में रामकथा व्यक्त हुई और इस प्रकार वह प्राथियों से बाहर निकलकर विराट लोकसंवेदना का अविभाज्य अंश बनी, लगभग तदाकार हो गई। तुलसीदास जी ने क्लासिकी भाषा संस्कृत के वर्चस्व को तोड़ते हुए उन्होने लोकभाषा में रचना की और इस प्रकार वृहत्तर जनसमुदाय को सम्बोधित करने का प्रयत्न किया। वे पांडिव्य एवं शास्त्र की सीमाओं को समझते हुए जनभाषा का ही चुनाव किये।

वाल्मीकि रामायण का आरम्भ ही महाकवि की इस जिज्ञासा से है कि इस समय संसार में गुणवान, वीर्यवान, धर्मस, कृतश, सत्यवादी, दृढ़वादी, सदाचारी, दृढ़वादी, सदाचारी, सर्वकल्याणकारी, विद्वान, प्रियदर्शन, आत्यवान, जितक्रोध, कान्तिमान कौन है? नारद मुनि विस्तारपूर्वक राम के गुणों का बरतान करते है।

आचार्य शुक्ल ने लिखा है कि भागवान का प्रतीक तुलसीदास जी ने लोक के सम्मुख रखा है, भक्ति का जो प्रकृत आलम्बन उन्होने प्रस्तुत किया है, उसमें सौन्दर्य, शक्ति और शील तीनों विभूतियों की पराकाष्ठा है। तुलसीदास जी की पूर्ण भावुकता इसमें है कि वह प्रत्येक मानव स्थिति में अपने को डालकर उसके अनुरूप भाव का अनुभव करे। इस शक्ति की परीक्षा का रामचरित मानस से बढ़कर विस्तृत क्षेत्र मिलना अत्यन्त कठिन है।

जीवन स्थिति के इतने भेद एक साथ उपलब्ध होना अत्यन्त कठिन है। (वही, पृ0 84)। विस्तार तथा गहराई के संयोजन के उत्कृष्ट उदाहरण रूप में रामचरित मानस को प्रस्तुत किया जाता है। तुलसी सामान्यजन को संबोधित करते चलते हैं, निकट संवाद स्थापित करते है और बौद्धिक वर्ग को ललकारते हैं, यह कि रामचरित ने **सुनत अघाहीं, रस बिसेस जाना तिन्ह नाहीं**।

रामकथा की लम्बी परम्परा का संकेत करते हुए तुलसीदास रामचरितमानस के बाल काण्ड के

आरंभिक अंश मे कहते है, **रामकथा के निति जग नाहीं, असि प्रतीत तिन्ह के मन माही/नाना भाँति राम अवतारा, रामायन सत कोटि अपारा**।

विनयपत्रिका राम की सेवा में प्रस्तुत है : श्री रामचन्द्र कृपालु भज मन, हरण भव भय दारूणं नवकंज लोचन कंजमुख, करकंज पदकंजारूणं। तुलसीदास कथावाचक नहीं हैं, वे सजग-सचेत कवि है और राम कथा के माध्यम में, अपने समय-मध्यकाल से टकराते हुए, कथा को नए आशय से सम्पन्न करना चाहते हैं।

विनय भाव से तुलसीदास जी ने कहा कि मुझ में कोई गुण नहीं, पर मुझे राम का आश्रय है : **मनिति मोर सब गुन रहित, विस्व विदित गुन एक**। पर यह कवि की भक्ति-भावना मात्र नही है, यहाँ राम के विराट व्यक्तित्व को रेखांकित किया गया है, जिसे केन्द्र में रखकर काव्य को सार्थकता दी जा सकती है। काव्य में राम का चरित्रांकन उसकी मूल सम्पत्ति है, सही प्रस्थानः एहि महँ रघुपति नाम उदारा, अति पावन पुरान श्रुति सारा। इसे उन्होने गुणों से समन्वित किया, परम कलयाणकारी रूप में **मंगल भवन अमंगल हारी, उमा सहित जेहि जपत पुरारी**। शंकर पार्वती का राम-उपासक रूप में चित्रित कर तुलसीदास मध्यकाल के शैव-वैष्णव वैचारिक द्वंद्व का भी समाधान प्राप्त करना चाहते है और यह प्रयत्न पूरे रामचरित मानस में अनस्यूत है। शंकर कथा कहते हैं, पार्वती सुनती हैं और राम सेतुबन्ध रामेश्वरम में शिवलिंग की स्थापना करते हैं, **लिंग थापि विधिवत् करि पूजा, सिव समान प्रिय मोहि न दूजा** (लंकाकांड का आरंभ)। राम-शिव में अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है।

गोस्वामी तुलसी जी का भक्ति निरूपण समन्वय पर आधारित है। इसलिए उनका भक्ति दर्शन व्यापक और समावेशक है। उन्होंने कुछ नये मानक भी स्थापित किये। भक्ति को परिभाषित करते हुए उन्होने कहा -

साते वेगि द्रवौं मैं भाई सो मम भगति भगत सुखदाई। उक्त अर्धालि में भक्ति की संक्षिप्ततम् परिभाषा दी गयी है किन्तु अपनी अर्थ व्याप्ति में वह बहुत अर्थगर्भ है। गोस्वमी जी का मत है कि जो भाव, विचार या किया आराध्य को शीघ्र द्रवित कर दे वही भक्ति है। किन्तु ध्यातव्य है यह परिभाषा स्वयं भगवान द्वारा स्थापित करायी गयी हैं इससे उसकी प्रामाणिकता सिद्ध होती है। दूसरी मार्मिक विषय यह है कि भक्ति भगवान और भक्त के बीच एक रागात्मक सम्बन्ध अथवा बन्धुत्व स्थापित करती है इसलिए उसमें मात्र भगवान का त्वरित द्रवीभूत हो जाना ही पर्याप्त नहीं है, भगत सुखदायी होना भी आवश्यक है। अर्थात भक्ति वही है जिससे आराध्य तत्काल द्रवीभूत होकर अनुकूल हो और शरणागत भक्त प्रति प्रतितिपूर्वक आहलाद का अनुभव करे। इससे यह लक्षित होगा कि इस छोटी सी परिभाषा में प्रेम प्रपत्ति और शरणगति के साथ ही ईश्वर कृपा, भक्ति की श्रेष्ठता, आराध्य की सर्वशक्तिमत्ता तथा भक्ति में प्राप्त होने वाली आध्यत्मिक आनन्द का समावेश हो गया है।

दोहावली में भक्ति को परिभाषित करते हुए गोस्वामी जी लिखते है -

प्रीति राम सो नीति पथ चलिय रागरिस जीति।
तुलसी संतन के भत्ते इहै भगति को रीति।।

उक्त दोहे में राम की प्रीति के साथ नीति पथ के अनुसरण और रागरिस में विरत होने की बात कही गयी है। वस्तुतः राग द्वेष से आविष्ट चित्त में राम की प्रीति का उदय ही हो नहीं सकता। राग द्वेष से उपराम होने के पश्चात् ही आराध्य के प्रति शुद्ध प्रपत्ति और अनुरक्ति का भाव उत्पन्न होता है। नीतिपथ का अनुसरण आचरण मूलक शुचिता द्वारा विषयासक्ति से विमुख करता है। अभिप्राय यह कि नीति पथ के अनुसरण और रागरिस पर विजय प्राप्त करने से भक्त करने से भक्त के हृदय में राम की प्रेम-स्वरूपा भक्ति को भूमिका का आरम्भ होता है। यम नियम नियन्त्रित नीति पथ अनुगामी, विराज विशुद्ध चित्त वाला भक्त हृदय, निष्काम भाव से भगवान की पावन प्रीति में तद्वत हो जाता है। यही परानुरक्ति अथवा परम प्रेमा भक्ति है।

प्रमाभक्ति और गुणत्मिका भक्ति के उभय रूपों में तुलसीदास जी प्रेमभक्ति के पोषक हैं। राम के प्रति प्रीति-प्रतीति ही रामाकार होने का साधन है। प्रीति ही माया मुक्त करके भगवान की भक्ति में अनन्यभाव से अनुस्क्त करती करती है। अखण्ड विश्वास और अनन्यता प्रेम की ठोस भूमि है। उस भूमि पर पहुँचा हुआ भक्त माया-मोह के प्रवाह में प्रतित नहीं होता। ऐसे अखण्ड श्रद्धा-संयुक्त भक्त के हृदय में उद्भूत प्रीति असाध्य को भी साध्य बना देती है। पाहन से परमेश्वर निकल आते है। गोस्वामी जी कहते हैं **प्रीति बदौं प्रहलाद को जिन पाहनते परमेसुर काढ़े।**

इतना ही नहीं इस प्रीति प्रतीति की प्रगाढता के कारण ही शैली प्रतिमाओं को ईश्वर का स्वरूप मानकर उनकी पूजा की जाने लगी।

प्रीति प्रतीति बढ़ी तुलसी तबसे सब पाहन पूजन लागे।

गोस्वामी जी मानते है कि बिना प्रीति प्रतीति के न तो रामपद में अनुराग ही सम्भव है और न भक्ति ही। ऐसी स्थिति में राम के द्रवीभूत होने का प्रश्न नहीं उठता। राम के कृपा के बिना भवसागर पार करने का उपाय नहीं। उनका दृढ़ विश्वास है-

प्रीति प्रतीति राम पद पंकज
सकष सुमंगल खानी।

सर्व मंगलप्रदा प्रीति के पावन रस का आस्वाद अनुभव कर लेने पर सभी प्रकार के स्वाद स्वयमेव फीके पड़ जाते हैं। गोस्वामी जी कहते हैं-

जो मोहिं राम लागत मीठे
तो नवरस षटरस अनरस है जाते सब सीठे।।

स्पष्ट है कि प्रीति परिपाक से निष्पन्न भक्ति रसामृत का स्वाद गोस्वामी जी के अनुसार अन्यतम है। काव्य अथवा कलाक्षेत्र के नौ रस तथा जिह्वा द्वारा आस्वाद छः रस भक्ति रस के सम्मुख निःसारा हो जाते है। राम के प्रति इस प्रियत्व की लोकोत्तरता के कारण हो गोस्वामी जी घोषित करते हैं-

जाके प्रिय न राम बैदहि।
तजिए ताहि कोटि बैरी सम यद्यपि परम सर्नही।।

गोस्वामी तुलसीदास जी की कवितावली, गीतावली, मानस, विनयपत्रिका जैसे कृतियाँ में राम की प्रीति प्रतीति के पोषक असंख्य उदाहरण प्राप्त होते है। आरांशतः यही परिलक्षित होता है कि प्रीति-प्रतीति गोस्वामी तुलसीदास जी के भक्ति दर्शन का केन्द्रीय तत्व है।

'रामरंग' संगीत-रामायण में वर्णित श्री राम-केवट संवाद

कुमारी मंजू देवी

शोध छात्र, वाद्य-विभाग,
संगीत एवं मंचकला संकाय,
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

भारतवर्ष का लोकप्रिय धार्मिक ग्रन्थ 'श्री रामचरितमानस' गोस्वामी तुदसीदास की अनुपम कृति है। यह किसी न किसी रूप में हर घर में गायी-बजायी जाती है। श्री रामचन्द्र जी ईश्वर के अवतार थे जिन्हें सब कुछ ज्ञात था, किन्तु उन्होंने इस धरा पर जन्म लेकर, जन-मानस को एक संदेश देते हुये जीवन के हर पक्ष को प्रकाशित किया है। जैसे कि समाज में मनुष्य को धर्म-रीति, नीति, प्रेम, सौहार्द्र, भक्ति आदि कर्त्तव्य का पालन किस प्रकार करना चाहिये। श्रीमद्गोस्वामी तुलसीदास जी ने बड़े ही सुन्दर शब्दों में भगवान श्री राम के सभी दिव्य लीलाओं का अनुभव करके 'रामचरितमानस' में वर्णित किया है। इसका पाठ करने एवं सुनने के पश्चात जीवन में क्या उचित या अनुचित है अथवा क्या करना चाहिये या क्या नहीं करना चाहिये इसका सहजता से ज्ञान होता है। रामचरितमानस एक ऐसा ग्रन्थ है, जो जीवन जीने की कला सिखाता है। वह पाठ रूप में हो या सांगीतिक स्वरों में हो हमारे हृदय के भावों को परिष्कृत करता है। 'रामचरित मानस' के पाठ को धार्मिक रूप से गाने-बजाने की एक समृद्ध परम्परा रही है।

वाग्गेयकार संगीत ऋषि पं. रामाश्रय झा रामरंग जी की कृति "रामरंग संगीत रामायण" की कुछ संगीत बद्ध रचनाओं के माध्यम से भगवान श्री रामचन्द-केवट प्रसंग को प्रस्तुत किया जा रहा है। वन-गमन के समय भगवान राम, लक्ष्मण और सीता जी को सुरसरि नदी को पार करके उस पार जाना था। श्री रामचन्द्र जी अलौकिक दिव्य शक्ति सम्पन्न थे, किन्तु यही उनकी नर लीला थी। ईश्वर का अवतार होते हुये भी किसी को ज्ञात नहीं होने देना चाहते हैं, और उस पार जाने के लिये केवट का निहोरा करते हैं।

संगीत के उपासक पं. रामाश्रय झा रामरंग जी ने रामचरित मानस को आधार मानकर उनके अधिकांश प्रसंगों को संगीत बद्ध किया है। जिसमें रामचरित मानस की भाँति बड़े ही सुन्दर साहित्य का प्रयोग किया गया है। रचनाओं में साहित्यिक सौन्दर्य की विशेष छटा दर्शनीय है।

रामरंग संगीत रामायण के अयोध्याकाण्ड के केवट प्रसंग को यहाँ उदाहरण सहित बताया गया है। श्री रामचरितमानस के प्रसंग को संगीत बद्ध कर रामरंग जी ने बहुत बृहद कार्य किया है। सम्पूर्ण रचनायें अलग-अलग रागों एवं तालों में निबद्ध हैं। भगवान श्री रामचन्द्र जी सारथी सुमन्त्र को अयोध्या वापस लौटाकर गंगा जी के तट पर पहुँचते हैं, और केवट से नाव मांगते हैं, किन्तु वह नाव लेकर नहीं आता है। उदाहरण स्वरूप भगवान श्री रामचन्द्र एवं केवट संवाद की

एक रचना को रामरंग संगीत रामायण में राग-चारुकेसी एवं ताल विलम्बित रूपक में निबद्ध किया गया है।

स्थायी- हे रघुबर राजा नइया न चढ़ाऊं तोहे पग धोये बिना।

अन्तरा- पाहन नारि भई राउर पग धूरि लगी, 'रामरंग' तरनी बने धरनी मुनि पग धोये बिना।।

केवट कहता है कि हे प्रभु! बिना पग धाये हुये, मैं आपको अपनी नाव में नहीं चढ़ाउंगा। मैंने सुना है कि आपकी पग धूरि लगने मात्र से पत्थर की शिला एक सुन्दर नारी हो जाती है, तो मेरी नाव तो काठ की है यह पत्थर से कठोर तो नहीं, यदि यह भी किसी मुनि की स्त्री बन गयी तो मेरा क्या होगा। आप के चरण कमलों की धूरि के लिये लोग कहते हैं कि मनुष्य बना देने वाली कोई जड़ी है।

वहीं दूसरी रचना में रचनाकार ने प्रसंग की अगली पंक्ति में कहते हैं कि केवट की ऐसी अटपटी वाणी सुनकर करुणा के धाम रामचन्द्र जी ने सीता जी और लक्ष्मण की ओर निहारकर मुस्कुराते हैं, और केवट को आज्ञा देते हैं, भाई तुम वहीं करो जिससे तुम्हारी नाव न जाय। केवट अत्यधिक प्रसन्न होकर कठौते में गंगाजल लाकर भगवान के चरण कमलों को धोकर परिवार सहित पान करता है और कहता है कि हे प्रभु मेरे तो कुल का उद्धार हो गया, मेरी दरिद्रता दूर हो गयी। हे प्रभु आज मेरा जीवन धन्य हो गया मैं आपके चरणों को छूकर धन्य हो गया। अनेक प्रकार से प्रसंशा करते हुये कहता है कि हे प्रभु! अगर मैं आपके पग नहीं पखारता तो मेरे परिवार का पालन-पोषण भी रुक जाता और मुझे दूसरा कोई धन्धा नहीं आता और मेरी तो रोजी-रोटी मारी जाती, मेरी कमाने -खाने की राह रुक जाती।

माँ गंगा श्री रामचन्द्र जी और केवट के ऐसे वचन सुनकर मन हीं मन कह रही है, (वे समझ गयी कि भगवान नर लीला कर रहे हैं) साक्षात् भगवान होकर किस प्रकार केवट का निहोरा कर रहे हैं। केवट जब अत्यन्त आनन्द और प्रेम में हर्षित होकर भगवान् के चरण कमल धोने लगता है तो देवता गण केवट के इस जन्म को धन्य-धन्य भाग्य कहते हुये पुष्प वर्षा करते हैं।

स्थायी-उतरे प्रभु पार सुरसरि धार के, मणि मुदरी सिय दीन्ही उतार के।

अन्तरा- कहि-कहि हारे लखन सीय रघुराई 'रामरंग' केवट बोलेउ वचन सम्हार।।

निषादराज, श्री रामचन्द्र, लक्ष्मण, और सीता जी नाव से उतर कर गंगा जी के रेत पर खड़े हो जाते हैं। केवट ने दण्डवत प्रणाम किया। तभी भगवान राम को संकोच हुआ कि केवट की उतराई नही दिया। पति के हृदय को जानने वाली सीता जी ने आनन्द भरे मन से अपनी रत्न जड़ित अंगूठी अपनी अंगुली से उतार कर देती हैं। प्रभु श्री राम जी बोले केवट नाव की उतराई लेलो। तो केवट व्याकुल होकर चरण पकड़ लिये। उसने कहा हे नाथ! आज मैंने क्या नहीं पाया (अर्थात् सब कुछ पा लिया)। आधी उम्र बीत गई मजदूरी करते हुये। आज विधाता ने बहुत अच्छी भरपूर मजदूरी दी है। हे कृपा के सागर आपकी कृपा से मुझे अब कुछ नहीं चाहिये। लौटते समय आप मुझे जो कुछ भी देंगे वह प्रसाद मैं सिर चढ़ाकर लूंगा। इस रचना के माध्यम से केवट कहता है हे नाथ-

स्थायी-हमरी तुम्हरी राजन जाति पाति केवट की बिनती मारिये मोरी।

अन्तरा-हम तुम नाथ एक विरादरी के उतराई देय जात न बिगाड़िये।।

इस रचनां का भावार्थ है, हे नाथ आपकी और मेरी जाति एक है, हम इस गंगा घाट के केवट हैं और आप भवसागर के केवट हैं इसप्रकार

हम दोनो ही केवट हैं आप मेरी विनती मानिये उतराई देकर आप हमारी जाति न बिगाड़िये।

स्थायी- उतराई न लेहो तोरी, प्रभु तोहे पार उतारे की।

अन्तरा-भवधार के हो खेवईया, कीजो पार मोरी नइया, उतराई पार उतारे की।।

हे प्रभु! आपको पर उतारने की उतराई तो मैं नही लूंगा। हम दोनों केवट विरादरी के हैं। हे नाथ आप हर प्राणी के जीवन के कष्टों का निवारण करते हैं। भवसागर पार उतारते हैं। कहाँ मैं इस नाव के सहारे लोगों को नदी पार कराकर उनकी सेवा करता हूँ, अगर आपको उतराई देना हीं है तो मेरी जीवन की नइया इस संसार सागर के मझधार से पार कीजिये। श्री राम चन्द्र जी सीता जी और लक्ष्मण जी के विशेष आग्रह के बाद भी केवट उतराई नहीं लेता है। केवट की ऐसी भक्ति पर प्रसन्न होकर भगवान करुणा के धाम श्री रामचन्द्र जी ने केवट को निर्मल भक्ति का वरदान देकर विदा किया।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1. रामरंग संगीत रामायण, प्रथम भाग, पं. रामाश्रय झा 'रामरंग', सम्पादक-डॉ. रामशंकर, ल्युमिनस बुक्स, वाराणसी, प्रथम संस्करण-2015।
2. श्री रामचरितमानस, गोस्वामी तुलसीदास, टीकाकार- हनुमान प्रसाद पोद्दार, गीतप्रेस गोरखपुर, संवत् 2064।

नारी के प्रति राम का दर्शन

डॉ अम्बिका कश्यप कु0 तनुश्री कश्यप

असिस्टैंट प्रोफेसर फैकल्टी आफॅ म्यूजिक एंड
गुरू नानक गर्ल्ज कालेज फाइन आर्टस,
यमुना नगर, नई दिल्ली

नारी समाज का एक अभिन्न अंग है। विधाता ने उसे सर्जन शक्ति प्रदान की है। अतः इस सृष्टि के सर्जन के लिए उसकी अनिवार्यता उतनी है जितनी पुरूष की। संस्कृत के सभी कवियों ने किसी न किसी रूप में नारी-पात्रों का चित्रण किया है। भारत में प्राचीनकाल से ही भारतीय समाज में नारी को आदरणीय स्थान प्राप्त था। ऋग्वैदिक काल में दुहिता, पत्नी तथा माता के रूप में नारी को बहुत सम्मान प्राप्त था। पत्नी तथा माता के रूप में वह न केवल परिवार की सेविका थी अपितु पूर्ण परिवार की सम्राज्ञी भी मानी जाती थी। मनु ने तो यहाँ तक कहा कि

''यत्र नार्यस्तु पूज्यंते रमन्ते तत्र देवता''
यत्रैतास्तु न पूज्यंते सर्वास्त्रफलाः क्रियाः।।

अथति जहाँ नारी का पूजन होता है वही देवता का रमण होता है जहाँ नारियों का तिरस्कार होता है, वहाँ समस्त देव क्रियायें विफल हो जाती है। नारी का स्वरूप बिना समझे और उससे संबधित तत्कालीन समस्याओं का विचार किये बिना मानव उत्थान का कोई पथनिर्दिष्ट करना किसी भी मनीषी के लिए संभव नही था। जिस समाज की मूल शक्ति ही निर्बल पड़ गई हो उसका उत्थान किसी अन्य शक्ति द्वारा सम्भव नही हो सकता था। यदि कहें कि नारी के उत्थान में ही समाज का उत्थान और उसके उत्कर्ष में ही मानव-जीवन का उत्कर्ष सन्निहित है तो गलत नहीं होगा। नारी की पूजा का वास्तविक अर्थ क्या है और जीवन में उसका व्यवहार और निर्वाह किस रूप में होना चाहिए इसके लिए 'रामचरितमानस' में नारी के आधयामिक और लौकिक रूप की प्रतिष्ठा की गई है।

''जेहि महु आदि मध्य अवसाना।
प्रभु प्रतिपाद्य रामु भगवाना '' (मानस उत्तर)

राम के स्वरूप का प्रतिपादन 'मानस' का लक्ष्य घोषित किया गया था। राम के स्वरूप - प्रतिपादन के साथ उनकी अभिन्न शक्ति माया का स्वरूप प्रतिपादन उसमें अनिवार्य रूप से समविष्ट हुआ और इसी से हुआ नारी के आध्यत्मिक रूप का निरूपन। मानव जीवन में स्त्री का योग असंदिग्ध रूप से प्रधान है। उसके बिना न सृष्टि संभव है और न उसका संचालन ही। स्त्री संसाार की सबसे बडी विभूति हैं, सौन्दर्य का आधार है, शक्ति का केन्द्र है। प्रकृति और पुरूष के योग से निर्मित सृष्टि ब्रह्मा और माया कि अभिव्यक्ति है जिसके कण - कण में वे व्याप्त रहते है। 'रामचरित मानस' या 'रामायण' दोनो में ब्रह्म को मानव तन धारण कर, पृथ्वी पर अवतरित हो लोक - लीला में लीन होते दिखाया है। उसका लक्ष्य यही है कि इसे भली - भांति समझ लिया जाये कि किस प्रकार परम

तत्व भी संसार के लौकिक जीवन में व्याप्त होकर अपनी लीला किया करता है। उसका पृथ्वी पर अवतरण बिना माया अथवा नारीतत्व के संभव नही है।

राम स्वँय भगवान् है, पुरूषोतम है, शील-शक्ति और सौंदर्य का आधार है , भक्तों के लिए लीला करने वाले है। अयोध्या काण्ड में प्रथम सर्ग में राम की चारित्रिक विशेषतायें एक साथ दी गई है

स हि वीर्योपपनश्च रूपवान अनसूयकः
भूमावनुपमः सूनुर्गुणै देशयोपम :।। 9।
सतु नित्यं प्रशान्तात्मा मृदुपूर्वच भायते।
उच्चमानीजपि परूषं नोतरं प्रतिपद्यते।। 10।
कथं चिदुपकारेण कृतनैकेन तुष्यति।
नर्ष स्मात्यकाराणां शतमध्यात्मवतया।। 11।
शील वद्धैज्ञार्नि वृद्धर्वयो वृद्धैश्च सज्जनैं :।
कथायनस्तं वै नित्य मस्त्रयोग्यान्तरेहवपि।। 12।
बुद्धिमान मधुराम पूर्वभाषी प्रियंवद :।
वीर्यवान च वीर्येण महता स्वेन विस्मित :।।
न चानृतकथो विद्वान वृद्वानं प्रतिपूजकः
अनुरक्तः प्रंजाभिश्च प्रजाश्चप्यनुरंजयते।।
सानुकोशो जितक्रोधो ब्राहाणप्रतिपूजक :
दीनानेनुकम्पी धर्मज्ञो नित्यं प्रगहवा शुचि।।।।

अर्थात श्री राम चन्द्र बडे वीर थे, रूपवान थे। उनमें ईष्या की भावना नही थी। उनके गुण बेजोड़ थे। वे अपने पिता के सदश गुणवान थे। वे सदैव मृदुभाषा में बोलते थे। किसी की कड़वी बात सुनकर कठोर भाषा में उत्तर नही देते थे ,चुप रह जाते थे। वे किंचित उपकार करने वाले से सन्तुष्ट रहते थे और उनकी कोई कितनी ही हानि करे वे उसे याद नहीं रखते थे। बदला लेने के भावना उनमें नही थी। अस्त्र चलाने का अभ्यास करने से जो समय बच जाता था उस समय में वे सुशील, वयोवृद्व तथा ज्ञानी सज्जनों के साथ धर्मचर्चा करते थे। यद्यपि वे प्रियवादी, मधुभाषी और स्वयं वीर थे, फिर भी वीरता के घमण्ड से उद्वत नही होते थे। वे सत्य का आदर करते थे और बड़े-बुढ़ो की पूजा में रूचि लेते थे। प्रजा पर उनका विशेष अनुराग था और उसी रूप में प्रजा भी उनको चाहती थी। क्रोध को उन्होंने जीत लिया था। ब्राहाम्णों की वह पूजा करते थे। दीनो पर दया करना उनका स्वभाव था। इसी तरह कुलधर्म की भी वे रक्षा करते थे। नित्य मंगल कार्यो में वे रूचि लेते थे।

रामकथा राजवंशो की कथा है। मुख्यतः यहाँ तीन राजवंश है–

1. दशरथ का राजवंश
2. जनक का राजवंश
3. रावण का राजवंश

इसके अतिरिक्त बालि तथा निषाद के दो अन्य राजवंश भी है। दशरथ का राजवंश अधिकाशतः सदमूल्यों का पक्षधर है। अधिकांश पात्र आदर्शवादी है। इस परिवार के नारी चरित्रो में अभिजात्य की गरिमा है। भावप्रवणता, तेजस्विता, कर्तव्य चेतना आदि इनके गुण है। इस वंश में मुख्य नारी पात्र - कौशल्या, सुमित्रा, कैकयी, मन्थरा, सीता, उर्मिला, माण्डवी, श्रुतकीर्ति तथा गुरूपत्नी अरूंधती। राजा जनक आधयत्मिक जीवन के पक्षधर है। त्याग, कष्ट, सहिष्णुता तथा कर्तव्य परायणता के साथ भावना का सुंदर समन्वय इस वर्ग के पात्रों में है। रावण के राजवंश में दुर्दमनीय शक्ति तथा उच्श्रृखंल भोग का प्रधान्य है। अबाध तथा उच्श्रृंखल काम के साथ ही वहां जीवन मे संतुलन तथा सदमूल्यों के महत्व को स्वीकार करने वाले पात्र भी है। इस वंश के मुख्य नारी पात्र - मन्दोदरी, त्रिजटा, सुरसा, सुलोचना, शूर्पनखा, ताड़का, लंका सुरसा आदि है।

नारी पात्रो के प्रति राम का दर्शन, उनका दृष्टिकोण, उनकी निष्ठा, रामत्व को प्रकाशित करती है। राम गाथा राम ही की कथा नही एक व्यापक परिवेश की कथा है विभिन्न संस्कृतियों के संघर्ष की कथा है। इस जय यात्रा में राम के सम्पर्क में अनेक व्यक्ति तथा समुदाय आते रहे है। प्रत्येक सम्पर्क राम के पक्ष - विशेष को अलोकित करता है। भगवान राम के चरित्रिक गुणों मे प्रेम , सत्य, करूणा, दया, परोपकार, विश्वास, क्षमा, उदारता, बन्धु, भावना, मैत्री, सहिष्णुता, सदाचार, त्याग, आत्मसंयम आदि सभी उपस्थित है। सभी मूल्य

सार्वदेशिक तथा सार्वकालिक है। इनका मूल है लोकमंगल की भावना। राम रामायण के रूप में श्रेष्ठ चरित्र की स्थापना करते है। रामायण आर्दश का ,सामाजिक मर्यादा का प्रतिष्ठापक काव्य है। कृण काव्य की भांति एकान्तिक आनन्द साधना वहाँ महत्वपूर्ण नही है। वहाँ साध्य तो महतवपूर्ण है हि, उसे पाने की साधक की यात्रा और भी महत्वपूर्ण है। राम राज्य का महत्व तब और भी बढ़ जाता जब उसकी पृठभूमि में मानवी लोभ-मोह जन्य संघर्ष का लम्बा इतहास हो। राम काव्य इस दृष्टि से जिस आदर्श की स्थापना करता है, उसकी राह मानवी विकृतियों के मध्य से है।

रामायण में जहाँ एक और कौशल्या का सपत्नी के कारण सहमा हुआ पत्नीतव और उदार भातृत्व है, तो दूसरी और रूपगर्विता कैकयी का प्रभुत्वपूर्ण पत्नीत्व और पुत्र हेतू रोषोद्दीप्त मातृत्व है। सीता का समर्पित कोमल भाव है तो सुमित्रा का सिंहनी सा क्षत्रियत्व भी। एक और स्वार्थ प्रेरित कटुभाषिनी मन्थरा है, दूसरी और जातिय न्यूनताओं को जीतकर आत्मोन्नयन की चेष्टा में रत शबरी है। हर पात्र राम से किसी न किसी रूप मे जुड़ा है। कहीं राम आज्ञाकारी पुत्र है तो कहीं पत्नीव्रत पति, कहीं जात- पात को परे रख कर शबरी के झूठे बेर खाने वाले भगवान है तो वही वन में सीता तथा लक्ष्मण के र्निभीक रक्षक है। कहीं दुराचारियों पर बाण चला कर संतों, समाज की रक्षा करने वाले वीर पुरूष है तो कहीं एक बच्चे के कोमल ह्रदय वाले है और उन सभी से उपर. 'मर्यादा पुरूषोत्तम रामष है।

मिथिलाधिपति महाराज जनक की पुत्री तथा राम की भार्या सीता के शिव-धनुष को उठा लेने के कारण धनुर्भंग को उनके स्वंयवर की शर्त रखा गया। राम ने नारी के प्रति अपने दृष्टिकोण को कभी संकीर्ण नही होने दिया। सीता के स्वंयवर का हिस्सा बन पूरे समाज को नारी स्वयवर का संदेश दिया। माता-पिता के सान्धिय मे पली बड़ी पुत्री को अपने मार्गदर्शक पति को चुनने का पुरा सुअवसर दिया। उसमें स्थापित गुणों के आधार पर नारी को पूर्ण अधिकार था वह वरमाला स्वेच्छां से किसी के भी गलें मे डाले। पति के रूप में राम ने सीता को वह सभी अधिकार दिये, वचन दिये जिनके वह योग्य थी। सम्पूर्ण जीवन एक पत्नी का वचन केवल राम ने ही रामायण में दिया। वन गमन के समय सीता पर राम का कोई दबाव नही था। राम के मना करने पर भी सीता उनके साथ उनकी परछाई की तरह चली। मानो सीता राम की लय हो जिन्होंने राम को गति प्रदान की। प्रकृति और पुरूष के मेल का सुघड़ उदाहरण। शूर्पणखा भी राम को कई तरह से लुभाने का प्रयास करती है किन्तु राम मर्यादित पुरूष की परिभाषा को स्थापित करते हुये निराश करते है। -------- सीता राम के साथ वन वन भटकती रही। राम ने जनस्थानवासिनी, कामरूपिणी राक्षसी

शूर्पनखा को उसके अनुचित प्रस्ताव के दण्डस्वरूप विरूप किया।

रावण के सीता हरण पर शोकाकुल राम ने मानव रूप में पत्नि वियोग की छवि प्रस्तुत की है। राम नें अपने भक्तों के लिये नर तन धारण किया है। राम ने मानव रूप मे लीलायें की है। आज भी राम के चरित्र को लीला रूप में मान्यता प्राप्त है। राम भले ही भगवान हो किन्तु वे मनुष्य भी है और मनुष्य का दुख-सुख उन्हें भी अनुभव होता है। लंका से अयोध्या वापिस आकर सीता को पुनः त्यागना उनके राजधर्म को परिलक्षित करता है। एक पति के रूप में सीता के वन चले जाने पर वह सीता के ही भातिं धरती पर सो कर रूखा सूखा खाकर अपना जीवन अपने राजधर्म का निर्वाह करते रहे।

राम की त्यागमयी वृति व उनका शील निरूपश, कैकेयी के वनवास देने पर वह माता की आज्ञा का पालन करने के लिये उस आदेश को सहर्ष स्वीकार कर लेते है। मानस के राम का निजी सुख दुख तथा उनकी समस्यायें इतनी व्यापक है कि अन्य पात्र अपने व्यक्तित्व को उस सुख दुख से परे नही समझते। लक्ष्मश आहत होते है जब कैकेयी के आदेश को सुनते है। सुमित्रा राम से कहती है कि राघव! शांत रहोगे तुम? क्या अन्याय सहोगे तुम?

प्रश्न पूछकर वह शांत नही होती लक्ष्मण की तरफ देखकर कहती है नीरव क्यों है इस क्षण तू! वस्तुत : लक्ष्मण नीरव नही रहा किन्तु आज्ञाकारी पुत्र राम के सामने वह झुक गया था। राम सभी के आवेगी को पहचानते है। माता कौशल्या का आवेग, माता सुमित्रा की पीड़ा, लक्ष्मण की असहायता इन सभी को धैर्य से पीकर शान्त रहने का तथा विवेक से काम लेने का प्रयत्न करते है तथा माता की आज्ञा को सहर्ष स्वीकार का गमन की तैयारी करते है। पिता के वचन का आदर तथा माता की आज्ञा का पालन राम के गुणों का विशेष लक्षण है। वहीं अनसूया तथा अहल्या राम के शील ही नहीं अलौकिकतत्व को प्रदर्शित करने भी माधयम बनी।

राक्षस वर्ग के पात्रों में होने पर भी त्रिजटा उससे स्पष्टतः भिन्न है। अशोक वाटिका में सीता की निरीक्षिका राक्षसियों में सें त्रिजटा प्रमुख थी। त्रिजटा की आत्मीयता से जानकी जी के प्रति उसकी सहानुभूति द्रष्टवय होती है। द्वादस सर्ग में रावण की पराजय के पश्चात सीता के आग्रह से राम त्रिजटा को वर देते है। इस वर के अनुसार कार्तिक, वैशाख, माघ और चैत्र मास के प्रथम तीन दिवस सभी नरश्रेष्ठ त्रिजटा को प्रसन्न करने के लिए स्नान करेंगे। अपवित्र स्थान में विधिपूर्वक किऐ गयें श्राद्ध तथा हवन आदि भी क्रोध से कियें गयें तो त्रिजटा के होंगे। दक्षिणा से शून्य श्राद्ध भी त्रिजटा को ही मिलेंगे। त्रिजटा को दिया गया यह वर राम का नारी के प्रति सम्मान तथा राम के अलौकिक तत्व की महत्ता को दर्शाता है।

राम का व्यक्तित्व बलवान होने पर भी उनमें अर्न्तद्वन्दों दिखलाया गया है। राम के अर्न्तद्वन्दों के अर्न्तगत राम का वैयक्तिक जीवन आता है। राम के इस वैयक्तिक जीवन की समभागी पात्र सीता रही है। राम का अर्न्तद्वन्द इनके सम्मुख स्पष्ट होता देखा गया है। राम नर होते हुए भी नारायण लगते है। राम वास्तव मे इतने ऊँचे है कि उनकी ऊँचाई तक और कोई भी नही पहुँच सकता। सामजिक दृष्टि से राम ने अपने को अत्यधिाक संतुलित रखा है और सामाजिको को किसी भी प्रकार का कष्ट नही होने दिया है। कैकेयी हो या कौशल्या उन्होंने अपने धर्मज्ञ रूप को स्थिर रूप में बनाये रखा। देवता, किन्नर, अप्सरायें और सभी अलौकिक पात्र मानवों के आगे नतमस्तक होते हुए देखे गये है। कार्य क्षेत्र में उतरने में संघर्ष करना पड़ता है। संघर्ष का सामना करने या समस्याओं से जूझने में मानव की महता प्रमाणित होती है। विष्णु यदि स्वर्गीय पात्र है तो राम मानवीय पात्र है। धरती के लोग विष्णु की तुलना में राम को अधिक स्वीकार करते है कि विष्णु और राम में तत्वता :(अवतारवाद का सिद्धांत) कोई भेद नही है, किन्तु मानव के लिए विष्णु एक स्वर्गीय कल्पना मात्र है जबकि राम का जीवन उनके लिए यथार्थ है। स्वर्ग कितना ही महान् हो, धरती के बिना उसका कोई मूल्य नही। राम को देखकर हम धरती पर स्वर्ग उतरा हुआ अनुभव कर सकते।

1. रामकथा और तुलसी -- डा. भ.ह. राजुरकर पुस्तक संस्थान101/50 नेहरू नगर कानपुर
2. गोस्वामी तुलसी दास की दृष्टि में नारी ओर मानव जीवन में उसका महत्व-- डा. ज्ञानवती त्रिवेदी काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी
3. रामकथा के गौण नीर पात्र -- डा. आशाभारती प्रस्तुति एंव सार्थकता इतिहास शोध संस्थान महरौली
4. रामकाव्यों में नारी -- डा. विद्या, प्रकाशक संस्थान, 4715/21- दयानत्र मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली-110002

लोकगीत एवं लोक साहित्य में राम

श्रीमती बीणा पाण्डेय

लोक संगीत का प्रचार आदिकाल से ही संसार के हर क्षेत्र में रहा है। भारत में इस संगीत का प्रचार प्राचीन समय से ही पाया जाता है। वैदिक काल में विवाह, जन्म आदि के समय में गाए जाने वाला संगीत लोक संगीत ही था। यह लोक संगीत हर काल में रहा है तथा उन्नत होता गया है। लोकगीत उन्हें कहते है, जो विशेषतः घर गृहस्थी के मांगलिक अवसरो व विशेष त्योहारों या उत्सवों पर महिलाओं द्वारा नगरों तथा गॉवों में अपनी-अपनी प्रांतीय या ग्रामीण भाषाओं में गाए जाते है। पुरूष गायकों द्वारा गाए हुए लोकगीत भी होते है। लोकगीतो में हमें भारतीय प्राचीन संस्कृति मिलती है।

लोकगीत के संबंध में विभिन्न संगीत शास्त्रियों एवं साहित्यकारों के विचार इस प्रकार से है। पद्मश्री पंद्र ओमूकार नाथ ठाकुर ने लोकसंगीत के विषय में'संगीत' पत्रिका में उल्लेखित किया है- कि देशी संगीत के विकास की पृष्ठभूमि लोक संगीत है।

लोकगीत के संदर्भ में प्रख्यात गायक स्वद्र कुमार गन्धर्व ने कहा है कि लोक धुनों की स्वर रचना प्रसंगानुकूल होती है। इन स्वरों के प्रसंग के अनुरूप भाव व्यक्त होते है। साधारणतया लोकधुनें चार-पाँच स्वरों में सिमित है।

महात्मा गाँधी ने लोक -गीत के संबंध में अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किये है- ''लोक गीतों'' में धरती गाती है, पहाड़ गाते है, नदियाँ गाती है फसलें गाती है, उत्सव और मेले, ऋतुयें और परम्परायें गाती है।

लोक जीवन की जैसी सरलतम, नैसर्गिक अनुभूति मयी अभिव्यंजना का चित्रण लोकगीतों व लोक-कथाओं में मिलता है वैसा अन्यत्र सर्वथा दुर्लभ है। लोक-साहित्य में लोक मानव का हृदय बोलता है। प्रकृति स्वयं गाती-गुनगुनाती है। लोक-साहित्य में निहित सौदर्य का मूल्यंकन सर्वथा अनुभूति जन्य है।

लोक साहित्य का अभिप्राय उस साहित्य से है जिसकी रचना लोक करता है। लोक-सहित्य उतना है प्राचीन है जितना कि मानव इसलिए उसमें जन-जीवन को प्रत्येक अवस्था ,प्रत्येक वर्ग, प्रत्येक समय और प्रकृति सभी कुछ समाहित है।

डॉ0 सत्येद्र के अनुसारः-''लोक मनुष्य समाज का वह वर्ग है जो आभिजात्य संस्कार शास्त्रीय और पांडित्य की चेतना अथवा आंहकरा से शून्य है साधारण जनता से संबंधित साहित्य को लोक साहित्य कहना चाहिए। किसी देश अथवा क्षेत्र का लोकसाहित्य वहाँ की आदिकाल सेलेकर अब तक उन सभी प्रवृत्तियोंका प्रतीक होता है जो साधारण जन स्वभाव के अतर्गत आती है। इस साहित्य में जनजीवन की सभी प्राकर की भावनाऐं बिना किसी कृत्रिमता के समाई रहती है।

लोक साहित्य, लोक संस्कृति से जन्म लेता है और लोक संस्कृति में राम के जीवन के यथार्थ के

दर्शन होते है राम द्वारा आधारित मानव जन-जीवन की वास्तविकताएँ होती है और समाजिक वे सांस्कृतिक जीवन, उनके कार्य और परिश्रम के तरीके, उसके व्यवहार प्रवृत्ति, धर्म एवं आस्था आदि इन्ही लोक कथाओं से प्रतिबिंबित होते हैं

'राम' शब्द के बारे में हम सभी जानते है कि जिसका अस्तित्व सर्वत्र हो वही राम है- रमन्ते इति रामः। हमारी अवधारणा है कि सर्वशक्तिमान राम ही है- वही ईश्वर है। इस 'राम' शब्द का अनेक विद्वानों ने आनेक रूपों में वर्णन किया है। उसी सर्वशक्तिमान का अवतार 'राम' के रूप में लोक-कल्याण के लिए हुआ। इस राम का चरित्र इतना लोकग्राही हुआ कि जन-जन के हृदय में इनका पवित्र अविजित ईश्वरीय रूप स्थापित हो गया। येलोक मानस में धर्म स्वरूप स्थापित हो गये इनके स्मरण, भजन, चिन्तन, पूजन से लोग अपना उद्धार करने लगें।

ऋतु तो अखिल ब्रह्माण्ड का प्राण-तत्व है, और भारतीय आध्यात्मिक दर्शन के अनुसार यह प्राण-तत्व राम ही है। ऋतु का भी संबध राम कथा के प्रसंग में संम्पूर्ण रूप से समाहित है पर जिस श्रृंगार पक्ष की लोक रंजकता कृष्ण कथा मे है वे श्रृंगार पक्ष की रामकथा मे मर्यादा के भव्य आवरण मे जनमानस के समक्ष उपस्थित है। फिर भी लोकमानस के भव्य आवरण में जनमानस के समक्ष उपस्थित हैं फिर भी लोकमानस के मन में उठने वाले आतिशय, श्रृंगारिक भावों में 'राम' तो समाये रहते ही है चाहे बारहमासा हो, चैता हो, काजरी हो, झूला हो या होली ही या क्यों न हो गाए, जाने वाली पहली पंक्ति में ''अहो रामा'', ''रामा हो'', ''रामा'' शब्द से ही गायन प्रारंभ होता है। ''रामा'' कह देने से रामकथा का प्रसंग नहीं कहलाता हाँ राम का प्रसंग अवश्य आ जाता है

'बारहमासा' अंगमाहजनपद में गाए जाने वाले राम से संबंधित लोकगीतों का एक विशेष प्रकार है। बारहमासे में विशेषकर विरह एवं मिलन श्रृंगार के भाव रहता है इसके अतिरिक्त जिस माह में किसी ईश्वर रूप का अवतार हुआ हो, कोई रासरंग का पर्व पड़ता हो या उस माह में प्रकृति का जैसा स्वरूप होता है। उनका वर्ण ''बारहमासा'' में होता है। जिस माह में जो पर्व होता है उसकी चर्चा भी इस प्रकार के लोकगीतों में होती है।'बारहमासा' के लोकगीत मानव कंठ में ही बसे होते है। इसका अंतरण-संचरण भी कंठ से ही होता है इसलिए लोकमानस राम के आदर्श पर चलते है राम की कथाएँ सब के मन के हृदय को जोड़ देता है इन आदर्श से हमारे जीवन में मार्ग दर्शन मिलता है। अतः 'बारहमासा' लोकगीतों में राम कथा का समावेश से संबंधित कुछ लोकगीतों की पंक्तियाँ उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत है-

(क) चैत है ससी बरसे सुमन नभ
ऋषि मुनि वेव सुख पाय है
अवध नगरिया डारी-डारी फुलवा
लंका बगीचा कुम्हलाय है।

(ख) चैत है सखि शुभ राम नवमी
लाले लाले धुजा फहराय है
नौ दिन नौ रूप में पुजों भवानी
दसमी मैया के विदाय है।

(ग) चैत है संखी अवध नगरिया
डगरिन चलली अगराय है
दरदऽ से बियाकूल तीनहुँ रानियाँ
अन्न धन सोनमा लुटाय है।

लोकगीतों में कजरी विविध भावों के गीत प्रस्तुत किए है। वर्षा ऋतु के क्रम में कजरी खेलने वाले अर्थात् कजरी गाने की परम्परा तो है ही-झूलन उत्सव प्रारंभ होने के साथ ही 'हिडोला' या 'झूला' क्रीड़ा के इस प्रकर के गीत गाए जाते है। राम सीता के जीवन के विविध पक्षों का वर्णन कजरी गीतों में मिलता है।

कजरी के एक गीत में सीताजी के झूला झूलने का उल्लेख देखिए–

''झूला झूले मोरी प्यारी वार जनक दुलारी
सुही सुकुमारी रूप उजारी राज दुलारी ना
किझूला-झूले मोरी प्यारी-----

एवं

''सिया संग झूले बगिया में रामललना''

एक गीता में सीता के फुलवारी में नही आने पर

राम की व्याकुलता का उल्लेख है। -----
सीता भूल गई फूलवरिया
राम जीव्याकुल भईले ना-------।

कजरी के साथ-साथ चैती, होरी मे भी राम जी के गीतो का वर्णन है। परन्तु जहां तक राम कथा के प्रसंग का प्रश्न है। कजरी में ''रामा'', ''रामा'' के साथ गीत के प्रारंभ की पंक्तियों तो सुनी गयी है पर रामकथा के प्रसंग के गीतोंकी संख्या अत्यल्प ही हैं इसका मूल करण है राम के मर्यादा पुरूषोत्तम का अवतार है। राम से संबधित यह चैती गीत प्रस्तुत है

राम लिहले अवध जनमुवा हो रामा
चैत महिनवा
चैत महिनवा नौवी शुभ दिनवा
किनका के राम चन्द्र, किनका के लक्षमण
किनका के भरत, भवनवा हो रामा
चैत महिनवा
कौशल्या के राम चन्द्र
सुमित्रा के लक्ष्मण
कैकई के भरत भुवनवा हो रामा
चैत महिनवा।

लोकगीत में राम से संबधित एक और गीत का उदाहरण है जब श्री राम सीता के वियोग का समय आता है।

मति करऽ राम वियोग सिया हो मत करऽ
राम वियोग।
सुतल रहने कंचल भवन में सपना देखली अनमोल
सिया हो मति कर राम वियोग।
अमृत फूल के बाग उजरले राम लखन के दूत
सिया हो मति करऽ राम वियोग।
पूरी आयोध्या से दोउ बालक अइले, एक सांवर एक गोर।
सिया हो मति कर राम वियोग
बाग उजरले लंक जरवले, दिहले समुंदर वोर।
सिया हो मति करऽ राम वियोग।

इस प्राकृतिक रंग-रास के परिवेश में रघु वीर अर्थात् श्री राम किस प्रकार होली खेलते है उसका एक उदाहरण प्रस्तुत है-

होली खेले रघुवीरा अवध में होली खेले रघुवीरा।
भरत वसंत मनमोद बढावे, रगं बिरंग, रस बरसावे
लाल, हरा, नहि पीरा अवध में होरी खेले रघुवीरा।
किनका हाथ कनक पिचकारी किनका हाथ मंजीरा
किनका माथ गुलाल शोभछे कौने उडावै अबीरा
अवध मे होली खेले रघुवीरा।

वैसे तो जीवमात्र उपने जन्मजात संस्कार को छोड़ नहीं सकते है पर विशेष रूप से मनुष्य अपने जन्मजात संस्कार से अपनी आत्मा के साथ जुड़ा रहता है। संस्कारों की पाठशाला को ज्ञान हमें साहित्य से मिलता है। साहित्य में सभी प्राकार के संस्कार वार्णित है-

भारतीय साहित्य अध्यात्मिक साहित्यों में से जिन साहित्यों को मानव जीवन का आरंभिक काल से प्रभावित किया उनमें से राम के साहित्य का विशेष स्थान है। यह राम के साहित्य का ही प्रभाव है कि संस्कृत के उदभट विद्धान रहते हुए भी गोस्वामी तुलसीदास ने आपनी मातृभाषा अबधी में रामरिचतमानस जैसे महान ग्रंथ की रचना कर दी।

राम चूँकि सृष्टि के प्रारंभिक काल से ही लोकमानस में व्याप्त है इसलिए इनकी पुरातनता का प्रश्न ही नहीं है। परन्तु इसी दर्शन के आधार पर कई धर्मों का उदय हुआ है। इन धर्मों का उद्देश्य भी पुरी तरह से लोककल्याण ही है उदाहरणार्थ बौधधर्म, जैन धर्म, सिक्ख धर्म, साफा धर्म ये सभी

धर्म मूलतः हिन्दू धर्म के अन्तर्गत ही परिगणित होते है। चाहे धर्म जितनी भी हो जाऐ पर जितनी व्यापकता रामकथा की है। सभवत्ः उतनी व्यापकता सिकी अवतारी पुरूष के रूपमें अन्य कथाओं की नहीं हो पाई है। इस संबध में रेवरेंड फादर का मिल बुल्के, पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, संत जेबियर का राँची में अपने शोध प्रबंध, 'रामकथा' के 'निवेदन में लिखा हैं- भारत तथा निकटवत्ती देशों के साहित्य में राम की अद्वितीय व्यापकता एशिया के सांस्कृतिक इतिहास का एक अत्यंत महत्वपूर्ण तत्व है।''

यही कारण है कि बौध धर्म में 'दशरथ जातक', 'दशरथ काथानम्' जैन धर्म में 'जैन राम कथा', 'सिक्ख धर्म' के गरू ग्रंथ साहब की राम कथाएँ तो पाली, जैन पंजाबी, भाषाओं में ही द्रविड़ भाषाओं तथा तमिल, तेलगू, मल्यायंलम, कनारी, आदिवासी भाषाओं के आतिरिक्त सिंहली, काश्मीरी, बंगाली, उडिया, मराठी, गुजराती, हिन्देशिया की भाषाओं में भी रामकथा के साहित्य प्रयाप्त मात्र में उपलब्ध है।

उपयुक्त दृष्टान्तो के आधार पर हम कह सकते है कि चाहे लोकगीत हो या लोक सहित्य राम कण-कण में व्याप्त है।

संदर्भ सूची

1. संगीत स्वरित 'डॉ. रमाकान्त द्विवेदी, साहित्य रत्नालय 37/50, गिलिस बाजार कानपुर - 208001, पृ.- 238
2. 'लोक साहित्य विज्ञान', डॉ0 सत्येन्द्र पृष्ठ संख्या -3
3. 'विसुआ फगुआ', रचनाकार-सान्त्वना साह, मीनाक्षी प्रकाशन शंकरपुर दिल्ली 110092 पृद्र-27,39,49
4. 'रामकथा' डाद्र कामिल बुल्फे प्रकाशक-हिन्दी परिषद् विश्वविद्यालय प्रयाग

'वाल्मीकीय रामायण में वर्णित राम-सीता के चारित्रिक आदर्श की वर्तमान में प्रासंगिकता'

कु. निधि यादव

शोधच्छात्रा, संस्कृत विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

भारतीय वा मय में वेद ही सर्वप्राचीनतम ग्रन्थ माने जाते हैं। समाज के लिये आदर्श[1], भक्ति[2], मानव धर्म[3], राष्ट्रकल्याण[4] की भावनाओं का उद्गार (प्रकृति स्थल) वेदों को ही माना जाता है। इस प्रकार अन्य शिक्षाओं एवं सामाजिक आदर्श से महिमामण्डित होने पर भी वेदों की भाषा अत्यन्त प्राचीन तथा उनका अर्थ अत्यन्त दूरूह होने से एक सामान्य व्यक्ति को समझ में न आ सकने के कारण युग-धर्म के अनुसार वेदों में पठन-पाठन की परम्परा उठती चली जा रही है। वेदों का अध्ययन करने के लिये तो प्रचुर समय एवं सुतीक्ष्ण बुद्धि की आवश्यकता है और वर्तमान युग में इन दोनों की ही न्यूनता दृष्टिगोचर होती है। मनुष्य की आयु एवं बुद्धि दोनों का ह्रास होता चला जा रहा है। इन्हीं सब आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये शुद्ध एवं सरल भाषा स्वरूप इतिहास-पुराणादि जैसे ग्रन्थों का आविर्भाव होना वर्तमान युग के लिये स्वाभाविक ही था और हुआ भी। इतिहास ग्रन्थों में रामायण और महाभारत ये दोनों ही ग्रन्थ भारतीय वा मय के मुकुटमणि एवं आर्यसभ्यता के गौरव रूप हैं। दोनों में ही भक्ति, ज्ञान, वैराग्य, सदाचार, नीति एवं धर्म की शिक्षा कूट-कूट कर भरी हुई है। एक मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् श्रीराम की दिव्य लीलाओं से तथा दूसरा माला में सूत की भाँति लीला पुरुषोत्तम भगवान् श्रीकृष्ण की महिमा से ओत-प्रोत है। इनमें से इतिहास के साथ-साथ 'आदिकाव्य' कहलाने का गौरव तो वाल्मीकीय रामायण को ही प्राप्त है।

इस कान्तासम्मित उपदेश का अथाह सागर रूपी वाल्मीकीय रामायण रचना कौशल एवं काव्य-वस्तु की दृष्टि से भी जगत् के समस्त काव्यों में शीर्ष स्थानीय है। करूण रस रूपी प्राण को धारण किये हुए है।

वाल्मीकीय रामायण में मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम की मातृ-पितृ भक्ति का आदर्श विलक्षण ही प्रतीत होता है। स्वमाता और अन्य माताओ की बात ही क्या, कठोर व्यवहार से पूर्ण माता कैकेयी के द्वारा वन जाने की आज्ञा सुनकर भी, श्रीराम ने सम्मानपूर्वक अपने कल्याण की बात कही[5], उन्होंने लक्ष्मण से कहा-मेरे राज्याभिषेक के संवाद से अत्यन्त परिताप पायी हुयी माता कैकेयी के मन में, तुम्हारे कार्य से किसी भी प्रकार की शंका न उत्पन्न हो सके। उनके मन में उत्पन्न हुई शंका मेरे द्वारा एक क्षण भी असहनीय है[6], भरत से भक्तिभाव द्वारा माता की भाँति कैकेयी की सेवा का आदेश दिया[7], कैकेयी के दुःख के कारण का पता होने पर श्रीराम ने कहा मैं महाराजा पिता की आज्ञा से आग में कूदने, तीक्ष्ण विष का पान करने आदि कार्यों को निःसंकोच कर सकता हूँ।[8] उन्होंने पिता की आज्ञा से अविचारणीय एवं उनको देवता स्वरूप बताया।[9]

पत्नी सीता के प्रति राम का कितना प्रेम था, इसका दिग्दर्शन सीता हरण के पश्चात् उनके हृदय की स्थिति से होता है।[10] यहाँ भगवान् श्रीराम ने अपने 'ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्'[11]

के वचनों को मानों चरितार्थ ही कर दिया, सुग्रीव की मित्रता[12], लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न के साथ का व्यवहार[13], प्रजा के अनुरञ्जन के लिये सीता का परित्याग[14] आदि प्रस श्रीराम के एकपत्नीव्रत, सख्यप्रेम भ्रातृप्रेम और प्रजारञ्जकता को दर्शाते हैं।

अखिल विश्व में जगज्जननी सीता का चरित्र भी सर्वोत्कृष्ट ही है। जनकपुर में सीता का प्रेम बर्ताव, श्रीराम को राज्याभिषेक के समय यकायक वनवास की बात सुनकर सीता द्वारा वनगमन का निश्चय करना[15], कैकेयी के आज्ञा से वनवास योग्य वस्त्र का धारण कर लेना[16], राम के चित्रकूट यात्रा के समय कौशल्या आदि से प्रेमपूर्वक मिलना[17], लंका में रावण तथा राक्षसियों द्वारा भय और प्रलोभन दिखलाने पर भी अपने धर्म का परित्याग न करना[18], श्रीराम के द्वारा 'नास्ति में त्वय्यभिष ो यथेष्टं गम्यतामिति' ऐसा कहने पर और श्रीराम के द्वारा परित्याग का वचन सुनकर भी राम के प्रति अम ल वचन न बोलना[19] आदि प्रस सीता के सद्व्यवहार, असाधारण पतिव्रत्य, त्याग, शील, साहस, धैर्य, सहनशीलता का ही परिचायक है।

इसी प्रकार रामायण में वर्णित भरत का अनुपम भ्रातृप्रेम और त्याग[20], राजा दशरथ का अपूर्व वात्सल्य-प्रेम[21], कौसल्या का महान् सौजन्य[22], श्रवण की अनुकरणीय पितृभक्ति, हनुमान जी की अतुलनीय स्वामिभक्ति[23], विभीषण की असाधारण न्यायप्रियता, अयोध्या की प्रजा का श्रीराम के प्रति स्वाभाविक स्नेह[24] आदि आदर्श वर्तमान समाज के लिये अनुकरणीय ही हैं।

किन्तु उनमें से राम और सीता आदर्श इतना ऊँचा है कि उन्हें आज के यथार्थ की इन अन्धेरी घाटियों में नहीं उतारा जा सकता। उनका चरित्र वह प्रस्थान बिन्दु है, जहाँ से मानव ईश्वर की ओर ऊर्ध्वगमन करता है। राम और सीता इस इक्कीसवीं शती के पुरुष एवं स्त्रियों की बदलती हुई मानसिकता के अनन्तर, प्राचीन परम्परा की ज्योति जलाकर नैतिक, धार्मिक, पारिवारिक पारम्पारिकता को स्थिर बनाये हुए हैं। राम पुरुषों के तो सीता सामान्यतया सभी नारियों की आदर्श बनी हुई हैं। इसका प्रधान कारण यह भी है कि एक ओर राम का पुरुषत्व धर्म और दूसरी ओर सीता का पतिव्रत धर्म, ये दोनों ही समाज द्वारा बनाई गई सीमाओं का अतिक्रमण नहीं करते। यदि हम राम और सीता के उस सामाजिक जीवन को देखें तो यह प्रतीत होता है कि वाल्मीकीय रामायण में वर्णित आदर्श हिन्दू समाज के रूप में आज भी प्रतिष्ठित है और सामान्य जन-जीवन की भांति सुख-दुःख से प्रभावित भी होता है। राम और सीता का आदर्श वर्तमान संघर्षशील समाज में 'सीताराम' के रूप में जन-जन का कण्ठाहार बना हुआ है तथा इस आस्था और विश्वास के मेरुदण्ड को यथार्थ की धरती की ओर देखने के लिये वर्तमान समाज को इसका अनुकरण करना ही होगा।

संदर्भ सूची

[1] सं गच्छध्वं सं वदध्वम्। (ऋग्वेद-10/191/2)
[2] मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे। (यजु0-36/18)
[3] ऋतुस्य प्रथा प्रेत। (यजु0-7/45)
[4] सर्वमेव शमस्तु नः। (अथर्व0-9/19/14)
[5] वाल्मीकि रामायण (अयोध्याकाण्ड)
[6] वाल्मीकि रामायण (अयोध्याकाण्ड/22/6-8)
[7] वाल्मीकि रामायण (अयोध्याकाण्ड/112/19)।
[8] वाल्मीकि रामायण (अयोध्याकाण्ड/18/28-29)
[9] वाल्मीकि रामायण (अयोध्याकाण्ड 21/30)।
[10] वाल्मीकि रामायण (अयोध्याकाण्ड)
[11] वाल्मीकि रामायण (अयोध्याकाण्ड-1260)
[12] वाल्मीकि रामायण (किष्किन्धाकाण्ड)
[13] वाल्मीकि रामायण (अयोध्याकाण्ड)
[14] वाल्मीकि रामायण (उत्तराकाण्ड)
[15] वाल्मीकि रामायण (अयोध्याकाण्ड)
[16] वाल्मीकि रामायण (अयोध्याकाण्ड)
[17] वाल्मीकि रामायण (अयोध्याकाण्ड)
[18] वाल्मीकि रामायण (लंकाकाण्ड)
[19] वाल्मीकि रामायण (उत्तरकाण्ड)
[20] वाल्मीकि रामायण (अयोध्याकाण्ड)
[21] वाल्मीकि रामायण (अयोध्याकाण्ड)
[22] वाल्मीकि रामायण (अयोध्याकाण्ड)
[23] वाल्मीकि रामायण (किष्किन्धाकाण्ड)
[24] वाल्मीकि रामायण (उत्तरकाण्ड)

भवभूति कृत "उत्तररामचरितम्' में राम"

डॉ. निशा खन्ना

अतिथि प्रवक्ता

आर्य कन्या इण्टर कालेज, इलाहाबाद

संस्कृत के कवियों में भाव प्रवणता और गम्भीरता की दृष्टि से महाकवि कालिदास के पश्चात् भवभूति का नाम बड़े आदर के साथ लिया जाता है। कुछ दृष्टियों में तो भवभूति कालिदास से भी ऊँचे हैं। इन्होंने केवल 3 नाटक लिखे हैं, जिनमें नाट्यकला की अपेक्षा कविकर्म बहुत उदात्त रूप में प्रकट हुआ है।

बाल्मीकि के समान वे एक ओर क्रौञ्चची के विरहगान से द्रवीभूत हैं, और दूसरी ओर व्याध को शापभिमूत करने के लिए उनकी वाणी में ओज भी भरा है। हृदय की इस भावधारा का असर उनके नाटकों पर भी पड़ा है, जिनमें करुण और वीर रस की अभिव्यक्ति हुई है, किन्तु वे करुण रस के बड़े समर्थक हैं -

"एको रसः करुण एव निमित्तभेदाद्।
भिन्नः पृथक्पृथगिव श्रयेत विवर्तान्
आवर्तबुद्बुद्तरग्मयान्विकारा -
नम्भो यथा, सलिलमेव हि तत्समस्तम।।

उत्तररामचरितम् - 3/47

"उत्तररामचरितम्" नाटक भवभूति की अन्तिम और सर्वश्रेष्ठ कृति है। उनकी नाट्य प्रतिभा का सर्वोच्च प्रमाण है। लटा-विजय के पश्चात् राम के अयोध्या में राज्याभिषेक के अनन्तर प्रजा-वर्ग के इस संदेह पर कि सीता कई मास रावण के यहाँ रहीं तो फिर राम ने अपने यहाँ उन्हें कैसे रख लिया, सीता की पवित्रता और अग्निराद्धि की बात जानते हुए भी राम ने प्रजा के अनुरंजन के लिए अनुकूल बहाना ढूंढकर सीता को वन में निर्वासित कर दिया। इस नाटक की कथा यहीं से आरम्भ होती है और अश्वमेध यज्ञ के समय राम-सीता के पुनर्मिलन होने पर समाप्त होती है। इस नाटक में करुण रस की प्रधानता है। उसके हृदयस्पर्शी वर्णन में भवभूति, कालिदास से भी आगे बढ़ गये हैं,, अतः उनके लिये यह उक्ति अत्यन्त प्रसिद्ध एवं चरितार्थ सिद्ध होती है -

"उत्तरे रामचरिते भवभूतिर्विशिष्यते।"

"उत्तररामचरितम" का मूल कथानक बाल्मीकी रामायण के उत्तरकाण्ड पर आधारित है। इस नाटक में सात अट हैं, जिनमें राम के अद्भुत चरित्र को दर्शाया गया है।

भारतीय मनीषा राम-महिमा से दीप्त है और प्रायः भारतीय चित्त राम की महिमा से सिकत है। माँ की लोरी से लेकर शवयात्रा तक, महलों से कुटिया तक, विवाह प्रसंग से लेकर रणभूमि तक, भोजन से भजन तक, राम-नाम का अमृत और तेज व्याप्त है। लोकजीवन, लोक संस्कृति, लोक साहित्य, व लोक में "राम" का नाम समाहित है। समस्त भारतीय साहित्य और जीवन में रामकथा का महत्त्वपूर्ण स्थान है। रामकथा भारत में जन-जन का प्राण है।

भारतवर्ष की अधिकांश प्रादेशिक भाषाओं में बाल्मीकीय रामायण का आधार लेकर अनेक रामकाव्यों एवं नाटकों की रचना की गयी। अब रामकथा,

केवल भारत में ही नहीं अपितु विश्व की सम्पत्ति है। अब चीन, जापान, मंगोलिया, तिब्बत, तुर्किस्तान, मलयेशिया, इण्डोनेशिया आदि विभिन्न देशों तक रामकथा का प्रचार एवं प्रसार हुआ है तथा भारतीय धर्म और संस्कृति को जीवित रखने का प्रयास किया गया है।

भवभूति संस्कृत साहित्य की विभूति हैं। उनका ''उत्तररामचरितम्'' नाटक संस्कृत का अत्यन्त प्रसिद्ध नाटक है। यह ''विश्व साहित्य की वस्तु'' है। इसमें ''राम के आदर्श'' का मार्मिक निरूपण हुआ है। इस नाटक के सदृश मग्लकारी नाटक कठिनता से ही मिलता है। यह नाटक सभी अवस्थाओं में सुख-दुःख का अनुपम समन्वय है। इसमें सर्वत्र आनन्द और करुणा की धारा प्रवाहित होती रहती है। इस नाटक को देखने, पढ़ने अथवा सुनने से हृदय को अपार विश्राम प्राप्त होता है।

भवभूति चरित्र-चित्रण में अत्यन्त कुशल हैं। उनके पात्र सजीव, सक्रिय, उत्साहयुक्त, स्फूर्तियुक्त हुयें, उनमें संघर्ष करने की शक्ति है। उनके पात्रों में सभी मानवीय गुण विद्यमान है।

भवभूति के ''राम'' कर्त्तव्यनिष्ठ हैं, वे कर्त्तव्य निष्ठा के कारण ही सीता का परित्याग कर देते हैं किन्तु एक आदर्शपति के रूप में उन्हें सीता-वियोग से उतना ही दुःख है, जितना एक सामान्य व्यक्ति को होता है। वे बार-बार विलाप करते हैं और मूर्च्छित हो जाते हैं। उनका रोना मनुष्यमात्र को ही नहीं बल्कि पर्वतों और बज्र का भी हृदय द्रवित कर देता है।

''उत्तररामचरितम्'' के नायक ''राम'' हैं जिन्हें इस नाटक में राम या रामभद्र के नाम से सम्बोधित किया गया है। इस नाटक मे ''राम'' को एक सम्राट के रूप में चित्रित किया गया है। उन्हें कहीं भी भगवान नहीं कहा गया है। राम इक्ष्वाकु वंश के प्रतिष्ठित राजा तथा दशरथ के प्रियनन्दन हैं।

वे एक आदर्श राजा, आदर्श पति और आदर्श भ्राता हैं। उनका चरित्र लोकोत्तर है। उनके धीरोदात्त नायक के सभी गुण विद्यमान हैं। इस नाटक के राम विनम्र एवं सुशील, आदर्शप्रेमी, आदर्श पति, प्रजानुश्रजक राजा हैं तथा उनका व्यक्तित्व वीर, गम्भीर एवं प्रभावशाली है। अब इन्हीं का विस्तृत विवेचन किया जा रहा है -

नाटक के प्रत्येक अट में राम की उदात्तता प्रकट होती है। प्रथम अट में ही उनके चरित्र की अनेक विशेषतायें पाई जाती हैं। वृद्धजनों के प्रति उनके हृदय में अत्यन्त सम्मान है। पूर्व अभ्यास के कारण जब कुंकी उन्हें ''रामभद्र'' सम्बोधित करके पुनः महाराज कहता है तो राम उससे कहते हैं कि ''पिता के परिजनों का मेरे लिए ''रामभद्र'' इस शब्द से व्यवहार करना ही शोभा देता है अतः पूर्वाभ्यास के अनुसार ही बोलिये - **''आर्यु ननु रामभद्र इत्येव मां प्रत्युपचारः शोभते तातपरिजनस्य। तद् यथाभ्स्तमधीयताम्।''**

इसी प्रकार जटायु तथा अन्य लोगों के प्रति भी उनके हृदय में अपार श्रद्धा है। भगवती भगीरथी को देखकर राम उनके प्रति भी अपना सहज भक्तिभाव प्रकट करते हैं। वे महा उपकारी हनुमान् के उपहार को नहीं भुलाते हैं, जिससे राम की कृतज्ञता भी प्रकट होती है।

भवभूति के राम अत्यन्त विनम्र एवं साधु स्वभाव के हैं। उनकी विनम्रता तब पराकाष्ठा पर पहुँच जाती है, जब वे परशुराम के प्रति किये गये अपने शौर्य को बहाने से नहीं दिखाना चाहते हैं। ''अरे! अभी तो बहुत देखना है, इसलिए और कुछ दिखाओं।

इसी प्रकार जब लक्ष्मण मन्थरा के चित्र को दिखाते हैं तब वे माता कैकेयी के वृत्तन्त को टालने के लिए शीघ्र ही निषादपति के साथ समागम करने लगते हैं, तब लक्ष्मण कहते हैं-

''अयं! मध्यममाम्बाव्रतान्तोऽन्तरति आर्येण।'' अर्थात् अरे! आर्य राम ने मझली माता के वृत्तान्त को छिपा दिया है।

''उत्तररामचरितम्'' में राम का सबसे अच्छा गुण यह है किवह दूसरों की प्रशंसा करत है; परन्तु अपनी प्रशंसा उन्हें अधिक अच्छी नहीं लगती। इसी

कारण जब गुप्तचर यह कहता है कि "पुरवासी तथा नगरनिवासी आपकी मुक्तकण्ठ से प्रशंसा करते हैं तो राम कहते हैं कि यह तो केवल मेरी प्रशंसा हुई कुछ दोष तो बताओ जिससे उससे बचा जा सके -

"राम अर्थवाद एवैषः। दोषं तु में कथंचित्कथय येन प्रतिविधीयते।।"

भवभूति ने राम को प्राणिमात्र के प्रति अपार प्रेम रखने वाला बताया है। वे प्रजा को खुश रखना, राजा का सर्वोपरि कर्त्तव्य मानते हैं। प/वटी के वृक्ष एवं पशु-पक्षी भी उनके बन्धु हैं। गिरिमयूर और करिकलभ को राम पुत्र के समान मानते हैं तभी तो "गिरिमयूर" को "मोदस्व वत्स मोदस्व" तथा करिकलभ को "विजयाताभयुष्मान्" इस प्रकार कहकर आशर्वाद देते हैं।

नाटक के प्रथम अट में वे दो रूपों में प्रस्तुत होत हैं - एक ओर तो वे सीता के प्राणवल्लभ, अनन्यप्रेमी, आदर्शपति के रूप में आते हैं और दूसरी ओर जनानुरथ्जक आदर्श राजा के रूप में दृष्टिगोचर होत हैं। उनके ये दोनों ही रूप अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है -

"स्नेहं दयां च सौख्यं च यदि वा जानकीमपि।
आराधनाय लोकस्य मु/तो नास्ति मे व्यथा।।
(उत्तररामचरितम् - 1/13)

अर्थात् प्रजानुरथ्जन के लिए, स्नेह, दया, सुख तथा जानकी को भी छोड़ते हुये मुझे कोई पीड़ा नहीं है। इससे राम की प्रजा के प्रति कर्त्तव्य भावना पराकाष्ठा पर पहुँच जाती है परन्तु वे सीता पर अपने स्वामित्व को आरोपित करते हैं। किन्तु यह उनका दोष होकर भी गुणस्वरूप ही है, क्योंकि सीता उनकी शक्ति है, सहधर्मिणी है, धर्मपत्नी है। राम और सीता स्थूल दृष्टि से पृथक होते हुए भी सूक्ष्म दृष्टि से एक है।

अर्थात् प्रजानुरथ्जन के लिए कठिन से कठिन कार्य करने के लिए तैयार रहते हैं। शूद्र मुनि का वध वे प्रजा के हित के लिए ही करते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि भवभूति के राम प्रजा के अनुरंजन के लिए अकरणीय कार्य को भी सहजरूप में कर देते हैं - यथा - सीता जैसी आदर्श पत्नी का परित्याग तथा शूद्र मुनि का वध।

यद्यपि राम जनता की इच्छा में सीता का परित्याग करते हैं, किन्तु राम के ऊपर क्या वीतती है, यह "उत्तररामचरितम्" के पाठकों से छिपा नहीं हैं।

उनकी आन्तरिक असहनीय पीड़ा का अनुमान श्लोक के द्वारा लगाया जा सकता है -

"दलति हृदयं शोकोद्वेगाद्द्विधा तु न भिद्यते
वहति विकलः कायो मोहं न मु/ति चेतनाम्।
ज्वलयति तनूमन्तर्दाहः करोति न भस्मसात्
प्रहरति विधिर्मर्मच्छेदी न कृन्तति जीवितम्।।"
(उत्तररामचरितम्-3/31)

अर्थात् (मेरा) हृदय शोक की व्याकुलता से पाट रहा है परन्तु दो टुकड़ों में विभक्त नहीं होता। व्याकुल शरीर मूर्छित होत है,, परन्तु चेतना को नहीं छोड़ता। आन्तरिक सन्ताप शरीर को जला रहा है, परन्तु भस्म नहीं करता। मर्मस्थल को बींधने वाला भाग्य प्रहार करता है, परन्तु जीवन को सर्वथा नष्ट नहीं करता।

राम सीता के वियोग को भी किसी प्रकार से सहन कर असाधारण धैर्य का परिचय देते हैं। सीता को त्यागे 14 वर्ष व्यतीत हो चुके हैं, परन्तु राम अभी जीवित हैं, इससे अधिक धैर्य क्या होगा। पहले भी सीता वियोग हुआ था किन्तु वह सीमित था। इस समय का सीता वियोग निरवधि है, किन्तु वे इस महान दुःख को भी अपने हृदय में छिपाकर स्वयं व्यथित रहते हैं। उनका करुणरस पुटपाक प्रतीकाश है -

"अनिर्भिन्नो गभीरत्वादन्तर्गूढघनव्यथः।
पुटपाकप्रतीकाशो रामस्य करुणो रसः।"
(उत्तररामचरितम् -3/1)

इस श्लोक द्वारा राम की गम्भीरता पकट होती है। पंचवटी में वे अपने शोक के आवेग को रोक

नहीं पाते। तब वासन्ती उन्हें देखकर दुःखित होती है, तब राम कहने लगते हैं कि सखि वासन्ति! अब तो राम का दर्शन भी मित्रों को दुःख प्रदान करने के लिये है अतः अब मुझे जाने दो।

''उत्तररामचरितम्'' में राम को एक **''आदर्श पति''** के रूप में भी चित्रित किया गया है। राम सीता के प्रति अखण्ड विश्वास रखते हैं। वे अग्निशुद्धि की वार्त्ता सुनकर सीता को क्षमायाचना करते हैं। उनकी दृष्टि में सीता गगजल तथा अग्नि से भी पवित्र है। सीता के प्रति उनके मन में अगाध प्रेम है। सीता के स्पर्शमात्र से वे अनिर्वचनीय तथा असीम आनन्द की अनुभूति करते हैं। सीता उनके घर की लक्ष्मी है। सीता को पाकर राम अपने को धन्य एवं कृतकृत्य मानते हैं।

सीता का वियोग राम के लिए अत्यन्त असहनीय है। राक्षसराज रावण के द्वारा सीता के अपहृत कर लिए जाने पर राम इतने रोते हैं कि उनके दुःख से पत्थर भी रो पड़ते हैं। राम को सब कुछ सह्य है, यदि परम असह्य है तो वह है सीता का वियोग। आज भी सीता-वियोग की वह स्मृति राम को व्यथित कर देती है तथा उनके आँखों से आँसू भी छलक आते हैं।

भवभूति के चरित्र की सबसे बड़ी परीक्षा यहीं पर होती है कि वे जिस सीता के वियोग की स्मृति को भी सहन नहीं कर पाते हैं, उसी सीता को प्रजानुरञ्जन के लिए त्यागते हुये स्वयं भयटर परिणाम वाली वियोग अग्नि में प्रवेश करते हैं।

राम का कथन है-

'सतां केनापि कार्येण लोकस्याराधन व्रतम्।''
(उत्तररामचरितम्-1/41)

अर्थात् चाहे जो कुछ भी हो, जनता को प्रसन्न रखना सज्जनों का कर्त्तव्य है।

सीता के परित्याग में भी उनका पूर्ण आदर्श पाया जाता है। वे सीता के परित्याग से स्वयं को पापी मानते हैं। वे सीता के विषय में कहते हैं, इसने अपने जन्म से समस्त धरती को पवित्र कर दिया है। इसके शील की सराहना अरुन्धती, वशिष्ठ आदि ऋषि भी करते हैं। इसका सम्पूर्ण जीवन राममय है।

सीता के त्याग रूपी कार्य से राम अत्यन्त क्षुब्ध होते हैं और विचार करते हैं कितना नृशंस कार्य कर रहा हूँ। जिसका एकमात्र आश्रय मैं ही हूँ, उसे धोखा देकर निर्वासित कर रहा हूँ। अतः मैं अत्यन्त पापी हूँ।

वे भौतिक दृष्टि से तो सीता का परित्याग करते हैं परन्तु अपने आन्तरिक स्नेह से माँ वसुन्धरा से प्रार्थना करते हैं कि अब आगे वे ही सीता को देख-रेख करें।

इस प्रकार यह सिद्ध होता है कि भवभूति के राम एक ओर जहाँ आदर्श राजा हैं वही दूसरी ओर आदर्श पति भी हैं। वे यज्ञ में अपनी सहधर्मचारिणी के रूप में सुवर्णमयी सीता की प्रतिमा को ही विनियुक्त करते हैं, जिसको देखकर वासन्ती सहसा कह उठती है -

वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि।
लोकोत्तराणां चेतांसि को हि विज्ञातुमर्हति।।
(उत्तररामचरितम् - 2/7)

वस्तुतः राम की यही महत्ता है कि एक ओर तो वे लोककथन से प्रिया सीता का परित्याग कर देते हैं तथा दूसरी ओर समर्थ होते हुए भी अजन्यभाव से सीता के प्रति आदर्श प्रेम को प्रदर्शित करते हैं, अपितु अश्वमेध यज्ञ के समय सहधर्मचारिणी के रूप में पवित्र सीता की प्रतिकृति को ही पत्नी के रूप में रखते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि ''उत्तररामचरितम्'' में भवभूति के राम का व्यक्तित्व अत्यन्त प्रभावशाली है। उन्हें देखकर सहसा ही सभी प्रभावित हो उठते हैं। लव राम को देखकर म नही मन कहने लगता है कि ये महापुरुष पवित्र और सामर्थ्य से युक्त हैं। लव कहत हैं - कि इनके (राम के) दर्शन से ही वैर शान्त हो गया है। मेरा वह दर्द न जाने कहाँ चला

गया है? नम्रता मुझे झुका रही है, इनके देखने पर न जाने क्यों पराधीन सा हो गया हूँ -

"विरोधो विश्रान्तः प्रसरति रसो निर्वृतिघन
स्तदौद्वत्यं क्वापि व्रजाति विनयः प्रनयति माम्।
झटित्यस्मिन्दृटे किमिति परवानस्मि यदि वा
महार्धस्तीर्थानामिव दि महतां कोऽप्यतिशयः।।"

(उत्तररामचरितम्- 6/11)

जब राम को गुरूजनों के समक्ष उपस्थित होना अनिवार्य हो जाता है तो उनकी आत्मग्लानि चरम सीमा पर पहुँच जाती है। सीता के प्रति उन्हें अन्त तक प्रगाढ़ प्रेम रहता है।

भवभूति के राम के धीरोदात्त व्यक्तित्व में शील, गाम्भीर्य, सदाचार, मानवता, करुणा, कर्त्तव्यपरायणता तथा सच्चरित्रता आदि सभी गुण साकार हो उठते हैं।

"उत्तररामचरितम्" के जो राम हैं वो सभी सद्गुणों की प्रतिमूर्ति हैं और कर्त्तव्य पालन में वे अत्यन्त कठोर हैं। किन्तु कुछ स्थानों पर वह उतने ही मृदु भी हैं। लव और कुश को देखकर आनन्द विभोर हो जाते है और दोनों की वीरता की प्रशंसा करते हैं। जब राम दोनों को हृदय से लगाते हैं तो उनमें वात्सल्य रस का अपूर्व प्रवाह बहने लगता है। भवभूति के राम एक आदर्श महापुरुष हैं।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि राम का चरित्र अनुकरणीय तथा पूजनीय है। राम के चरित्र से यह भी शिक्षा मिलती है कि एक शत्रु से भी किस प्रकार व्यवहार करना चाहिए। सम्पूर्ण संसार में राम के चरित्र का प्रभाव अतुल्य है तथा युगों - युगों तक अक्षुण्ण बना रहेगा।

सहायक ग्रन्थ सूची

1. उत्तररामचरितम् - अनुवादक, डॉ. कपिलदेव द्विवेदी
2. उत्तररामचरितम् - अनुवादक, डॉ. तारिणीश झा
3. संस्कृत साहित्य का इतिहास - बलदेव उपाध्याय
4. संस्कृत साहित्य का इतिहास - वाचस्पति गैरोला
5. संस्कृत साहित्य का इतिहास - डॉ. नानूराम व्यास और पाण्डेय
6. संस्कृत साहित्य का इतिहास - डॉ. कपिलदेव द्विवेदी

'तुलसी साहित्य में प्रतिपादित आदर्ष राजधर्म'

डॉ0 निशा द्विवेदी

मानव जब तक अकेले रहा, तब तक शासन की कोई विशेष आवश्यकता नहीं थी। ज्यों ही कई लोगों का एक समूह अथवा कुटुम्ब बनने लगा, तभी से उन्हें नेता अथवा शासक की आवश्यकता पड़ी। संसार में प्रथम राज्य के निर्माण के सम्बन्ध में हमारे प्राचीन ग्रन्थों में एक दिलचस्प विवरण प्राप्त होता है। कहते है कि प्राचीन काल में लोग अपने मध्य एक अत्यन्त लोकप्रिय व्यक्ति के पास गये, जो कि बड़े ही धार्मिक तथा परोपकारी थे। लोगों ने उनसे अनुरोध किया कि वह उनके शासक बनना स्वीकार कर लें। ऐसा भी कहा जाता है कि भरत नाम के इन सत्पुरूष को बड़ी कठिनाई से शासक बनने के लिए तैयार किया जा सका और इस प्रकार वह मनुष्य समाज के प्रथम राजा बने। भरत न केवल अपनी जनता के प्रथम राजनीतिक तथा प्रशासकीय प्रधान बने, वरन् वह अपने लोगों के आध्यत्मिक तथा धार्मिक प्रधान के पद पर भी प्रतिष्ठित हुए। इस प्रकार भरत अपने जन-समाज के सर्वशक्ति-सम्पन्न व्यक्ति के रूप में भी सम्मानित हुए, क्योंकि लोगों को उनमें अगाध विश्वास था। लोगों को भरत की सत्य-निष्ठा में विश्वास इतना प्रबल था कि उन्हें ईश्वर का प्रतिनिधि भी मान लिया गया।

उपर्युक्त प्रकार के ही उल्लेख 'मनुस्मृति' और 'कौटलीय अर्थशास्त्र' में भी मिलते हैं। इनके अनुसार, थोड़े-से बलवानों ने बहुसंख्यक बलहीनों को पीड़ित करना प्रारम्भ कर दिया और इस प्रकार प्रजा वर्ग की रक्षा के लिए राजा तथा राज्य की रचना हुई। राजधर्म सम्बन्धी मनुस्मृति में कहा गया है- ''बलवानों के डर से प्रजाओं के इधर-उधर भागने पर प्राणियों की रक्षा के लिए भगवान ने राजा की सृष्टि की''।[1] 'कौटलीय अर्थशास्त्र' में आचार्य

'(प्रवक्ता हिन्दी) लखनलाल शरण सिंह महाविद्यालय विश्नोहरपुर, नवाबगंज, गोण्डा

चाणक्य का कथन है- ''पूर्वकाल में बलवान मनुष्य निर्बल मनुष्य को उसी प्रकार खा जाते थे, जैसे बड़ी मछली छोटी मछली को खा जाती है। अतएव, प्रजा ने मिलकर विवस्वान् के पुत्र राजर्षि मनु को अपना राजा बनाया। उन्होंने अन्न का छठा भाग, व्यापार से प्राप्त धन का दसवां भाग और कुछ सुवर्ण राजा के कर के रूप नियत किया''।[2] इन कथनों से स्पष्ट है कि राजा जनसमूह द्वारा निर्वाचित व्यक्ति होता था और वह व्यक्ति सर्वसमाहत, सत्यनिष्ठ तथा बुद्धिमान पुरूष ही होता था।

भारतीय राज्य-सत्ता के सात अंग माने गए है- राजा, मंत्री, राज्य, कोष, दुर्ग, सेना और मित्र। इन सातों अंगों का उपयोग प्रजा को धन-धान्य-सम्पन्न बनाने के लिए तथा उसमें सदाचार की वृद्धि के लिए होता था। प्रजा का अभ्युदय राज्य का प्रधान

उद्देश्य था। व्यक्तिगत और सामाजिक प्रयत्नों से केवल कुछ व्यक्तियों और समाजों की उन्नति हो सकती है, पर जीवन के सभी क्षेत्रों में सर्वांगीण उन्नति के लिए तथा प्रजा को सुख और शान्ति की व्यवस्था के लिए सुव्यवस्थित राज्य संस्था की सदा उपयोगिता रही है।3

राजा भी मनुष्य होता है और मानवीय गुणों से पूरित होता है। साधारण मनुष्य के समान ही उसके हृदय में अभिलाषाओं की तरंगें उठती हैं, परन्तु नियमों के बन्धन में जकड़ा राजा अपनी अदम्य वासनाओं को दबाकर आदर्श बन पाता है। तुलसी के 'मानस' में राजा के इसी स्वरूप को मान्यता मिली है। तुलसी ने आस्तिक श्रद्धालुजनों के विश्वास हेतु तथा राजनीतिज्ञों के सम्मान हेतु राजा राम का सृजन किया है।4 राजा, राज्य और प्रजा का बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध है, साम जस्य के अभाव में तीनों नाश हो जाते हैं। प्राचीनकाल के राजा सर्वगुण सम्पन्न होते थे; फलतः प्रजा सुखी और राज्य ऐश्वर्यपूर्ण था।5 राजा ईश्वर का प्रतिनिधि बनकर इस पृथ्वी पर अवतरित होता है और पिता सदृश अपनी सन्तान (प्रजा) का पालन-पोषण करता है।

राजस्व का मौलिक आदर्श देवताओं के राजा वरूण का शासन माना जाता था। वरूण का प्रधान कर्तव्य ऋत (सत्य) और धर्म की स्थापना और रक्षा करता था। वरूण स्वयं धृतव्रत है। यही मौलिक आदर्श भारतीय राजाओं के सामने सदा प्रस्तुत किया गया। राजा स्वयं धार्मिक एवं कर्तव्यपरायण होता था। ऐसी परिस्थिति में 'यथा राजा तथा प्रजा' के अनुसार प्रजा स्वाभावतः धार्मिक बन जाती थी। प्रजा के सुख और अभ्युदय के लिए सर्वाधिक प्रयत्न करने वाला राजा प्रजा का सेवक माना गया। राजकोश का उपयोग अपनी निजी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए करना उसके लिए महान् पाप गिना गया है। ऐसा करने वाला राजा नरक का द्वार अपने लिए खोल लेता है। ऐसी धारणा राजा के नियन्त्रण हेतु थी।

तुलसी-प्रतिपादित राजधर्म आज भी प्रासंगिक है। भरत के समक्ष राम ने राजधर्म का निचोड़ प्रस्तुत किया है। पुराणों, स्मृतियों तथा नीति-ग्रन्थों में वर्णित इस राजधर्म को तुलसी के सूत्र रूप में गूंथ दिया है। चित्रकूट की सभा में राम, भरत को गुरूजनों, माताओं तथा मंत्रियों की मंत्रणानुसार पृथ्वी, प्रजा तथा राजधानी का पालन-पोषण की राजधर्म बताते हुए उपदेश देते हैं--

"मुखिया मुखु सो चाहिए, खान पान कहुँ एक।
पालइ पोषइ सकल अँग तुलसी सहित बिबेक।।
राजधरम सरबसु एतनोई। जिमि मन माहँ मनोरथ गोई"।।6

'मुखिया' का अर्थ है- किसी समुदाय का व्यवस्थापक या प्रधान व्यक्ति। वर्तमान राजनीतिक संदर्भ में वह मुख्यमंत्री, प्रधानमंत्री आदि सभी सत्ताधारियों का द्योतक है। आज के स्वार्थी एवं अविवेकी शासकों को तुलसी ने स्पष्टतया चेताया है कि निजी हित को त्यागकर जनता की समस्याओं को सुलझाना और विवेकपूर्वक पालन-पोषण करना उनका परम कर्तव्य है। यह भावना केवल उच्चकोटि के सच्चरित्र राजाओं के लिए थी। दुष्ट राजा राक्षसों के प्रतीक माने गये हैं। धर्मशास्त्रों ने यथाशीघ्र उनको राजपद से हटा देने की सीख दी है।[7] राजा और राजनीतिक सोच का ऐसा सुन्दर संकेत भारतीय नीति ग्रन्थों में ही उपलब्ध है।

प्राचीन भारत के राजवंशों के राजाओं सम्बन्धी विवरणों में हम पाते हैं कि ये वस्तुतः राजर्षिजन होते थे। ये राजागण जिस विधान-नियम का परिपालन करते थे उसे प्राचीन ग्रन्थों में 'राजधर्म' कहा गया है। वैदिक ग्रन्थों में सूर्यवंशी और चन्द्रवंशी राजन्य वर्ग की महिमामयी चर्चायें हैं। इन ग्रन्थों पर ही आधारित बाद के ग्रन्थों में और महाकाव्यों में राजधर्म के बड़े ही उदात्त तथा आदर्श स्वरूप निरूपित किये गये हैं। महाभारत को पंचम वेद होने का गौरव का प्राप्त है और उसे नीतिशास्त्र, आचारशास्त्र

तथा अध्यात्मशास्त्र का अप्रतिम ग्रन्थ माना और स्वीकार किया जाता है।

स्मृति, पुराण और इतिहास आदि में राजधर्म का विस्तृत उल्लेख किया गया है।[8] उसी आदर्श के आधार पर तुलसी ने भी राजा के गुण-दोषों का निरूपण किया है।[9] जैसा कि विभिन्न महाकवियों ने अपने महाकाव्यों में स्थान-स्थान पर चर्चा किया है, रामराज्य जैसे आदर्श राज्य की अभीप्सा तथा अभिलाषा की पूर्ति के लिए शासक द्वारा इन सिद्धान्तों को अनुसार अपेक्षित है—(1) "राजा(शासक) में राजमद न हो। (2) वह मर्यादा का पालक हो। (3) मंत्रियों और विद्वानों के परामर्श से कार्य करने वाला हो। (4) जनता को सुख बनाने से बढ़कर अपना कोई धर्म न माने। (5) आत्म-विजय करे अर्थात् इन्द्रिय-जयी हो। (6) जनता को सदा-सर्वदा कर्तव्य-पथ में प्रेरित करता रहे। (7) विपत्ति में धीर और सम्पत्ति में शांत-संयमित रहे। (8) गर्हित कर्मों से दूर रहे और उत्तम तथा श्रेष्ठ कर्मों के आदर्श उपस्थित करता रहे। (9) पर-स्त्री को माता माने। (10) पर-धन पर लोभ न करें। (11) शूर से शूर होकर संग्राम करें। (12) अपनी भूल को स्वीकार करे तथा दूसरों के गुणों का भी कीर्तन करें। (13) प्रजावर्ग में कोई भेदभाव न करें। (14) विषमता, दरिद्रता, अशिक्षा, भेद, दण्ड आदि से सर्वथा मुक्त सत्यमूलक समाज की संस्थापना और उसके संवर्द्धन के लिए एकनिष्ठ भाव से स्वयं को समर्पित कर दें"।[10]

तुलसी प्राचीन परम्परागत राजतंत्र के समर्थक हैं। उनके राम साम्राज्य संस्थापक हैं। दशरथ और राम के शासन में प्रजातंत्र का स्थान नहीं है फिर भी वे प्रजातंत्र को गौरव देते हैं।[11] यह भी ध्यान देने योग्य है कि राजमद बड़ा कठिन होता है। राजा के नीतिधर्म के चार चरण हैं- साम, दाम, दण्ड और भेद। यद्यपि तुलसी ने राजा के द्वारा उपर्युक्त चतुर्विधराजनीति-पालन की श्रेयस्करता स्वीकार की है तथापि उनकी दृष्टि में वही राजा श्लाघ्य है, जिसे दण्डप्रयोग करने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती। दूसरी ओर कलियुग के राजा केवल दण्ड के बल पर ही शासन करते हैं। राजा का सबसे महत्वपूर्ण कर्तव्य है नीतिपूर्वक प्रजापालन। जिसके राज्य में धर्म के चारों चरणों का धर्मशास्त्रानुसार पालन किया जाय; जिसके शासन में बैर, अन्याय, अत्याचार आदि का उन्मूलन एवं प्रीति, न्याय, सदाचार, ज्ञान-विज्ञान आदि की प्रतिष्ठा हो तुलसी ने ऐसे राजा को महान बतलाया है।12 रामराज्य इन सभी विशेषताओं से सम्पन्न था। जो राजा धर्महीन, नीतिरहित और अन्यायी हो जाता है, जिसे योग्य मंत्रियों की मंत्रणा प्राप्त नहीं होती उसका नाश अवश्यम्भावी है।[13]

"मनुस्मृति" और "कौटलीय अर्थशास्त्र" में राजधर्म तथा राजनीति के सम्बन्ध में अनेक बातें वर्णित हैं। इनमें अहिंसा-सत्य आदि यमों और पवित्रता-तप-दान आदि नियमों के परिपालन के लिए भी बहुत बल दिया गया है। मनु तो भारतीय समाज के प्रथम नियामक के रूप में मान्य हैं, किन्तु चाणक्य ने भी अहिंसा, दया, धर्म, आत्मनिष्ठता, चरित्रनिष्ठता आदि के महत्व को कम नहीं बताया है।

राजा तथा साधारण जनता के बीच मध्यवर्तियों के विभिन्न वर्ग होते हैं और इन वर्गों के लोगों के तरह-तरह के स्वार्थ होते हैं। मनु और चाणक्य ने इन पर ही अंकुश रखने के लिए दण्ड-विधानों की व्यवस्था की है। यह समस्या आज पुनः पूर्ववत् जटिल बनी हुई है, किन्तु सामाजिक वातावरण में नैतिक भावना का प्रसार हुए बिना इस समस्या का समाधान और निराकरण सम्भव नहीं है। अतएव, इन दोनों ही मनीषियों ने व्यक्ति की चरित्र सुधारने को प्राथमिकता देते हुए ही राज्य के शासन के लिए निर्देश सुनिश्चित किये हैं। मनु का सिक्का भारतीय समाज में आज भी चलता है। मौर्य साम्राज्य के रूप

में इतिहास-युग के प्रथम भारतीय राष्ट्र के निर्माता होने के कारण आचार्य चाणक्य के प्रति आज भी भारत के प्रबुद्ध लोग नतमस्तक हैं। राज्य के शासन को सुदृढ़-सुव्यवस्थित बनाने के इनके सूत्र आज भी यथावत् सार्थक हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. मनुस्मृति- अध्याय-7 - श्लोक-3।
2. कौटलीय अर्थशास्त्र-प्रथम अधिकरण-अध्याय-13-प्रकरण-9।
3. भारतीय संस्कृति का उत्थान- डा.रामजी उपाध्याय, पृष्ठ-158।
4. रामचरितमानस-बालकाण्ड-92/1, 93/1-2, 5।
5. वही-बालकाण्ड-327।
6. वही-अयोध्याकाण्ड-314/7-8, 315-1।
7. भारतीय संस्कृति का उत्थान- डा.रामजी उपाध्याय, पृष्ठ-158।
8. महाभारत-शान्तिपर्व-राजधर्मानुशासनपर्व- सभापर्व-5, वाल्मीकि रामायण-बालकाण्ड-7, अयोध्याकाण्ड-100, अरण्यकाण्ड-33, लंकाकाण्ड-63।
9. रामचरितमानस-उत्तरकाण्ड-20/4-7, 31, दोहावली-182-86, गीतावली- 7/1, 24, विनयपत्रिका-44/6-8, 139/10-12, 165/4-5।
10. रामराज्यः मानवता का भावी राज्यादर्श- रामऋषि शुक्ल-पृष्ठ- 31।
11. रामचरितमानस-अयोध्याकाण्ड-5/2, उत्तरकाण्ड-24/1, 43/2-3।
12. दोहावली-182, रामचरितमानस- उत्तरकाण्ड-20-21/2, विनयपत्रिका- 44/8, गीतावली-24/1-2।
13. रामचरितमानस-अयोध्याकाण्ड 71/3, 126/2, 172/2, अरण्यकाण्ड-21/4, सुन्दरकाण्ड-37, 6/38(क), दोहावली-514।

लोकगीत (बज्जिकांचल में राम)

श्री श्रीनिवास सुधांशु

सहायक प्राध्यापक, बी. एड. विभाग (संगीत)
चन्द्रदेव नारायण महाविद्यालय साहेबगंज, मुजफ्फरपुर

भक्ति की मुख्य रूप से दो धारायें भारतीय वाङ्गमय में प्राचीन काल से ही चली आ रही है। ये दोनों धारायें विशेषकर राम और कृष्ण पर केंद्रित है। भक्ति काल के प्रारंभ से इन दोनों अवतारों पर व्यापक चर्चा, कविता एवं गीत-संगीत के माध्यम से अनेंक हिंदू व मुसलमान कवियों तथा संगीतज्ञों ने की है। राम एवं कृष्ण पर लोक से लेकर शास्त्र तक में सबसे अधिक साहित्य एवं गीत-संगीत दृष्टिगत हुए हैं।

जहाँ कृष्ण चौसठों कलाओं में निपुण हैं वहीं राम को मर्यादा पुरषोत्तम कहा गया है। राम के संबंध में कहीं भी किसी ने मर्यादा का ध्यान रखकर ही अपनी प्रस्तुति दी है।

सर्वप्रथम प्रस्तुत है हमारे क्षेत्रिय और प्रजातंत्र की जननी वैशाली की मातृभाषा बज्जिका में कुछ लोकगीत जिसमें राम के विभिन्न मर्यादित अवस्थाओं या व्यवहारों का भाव है। राम का जन्म चैत्र मास में हुआ माना जाता है। इसपर आधारित एक लोकगीत शैली चैता देखें :-

''घर घर बाजेला बधईया हो रामा, अवध नगरिया।''

हालांकि चैता श्रृंगार प्रधान लोकगान शैली है, लेकिन प्रस्तुत इस गीत में श्रृंगार नहीं दिखाते हुए भक्ति का आभास कराया गया है। इसी प्रकार होली गीत श्रृंगार प्रधान होते हुए भी राम के बारे में अपनी मर्यादा का सदैव पालन करता है।

''सिया झाड़ू लम्बी केश 2 राम लइहें सोने के कंगहिया।''

इस प्रकार लोकगीत के लगभग सभी प्रकारों के अवलोकन के पश्चात् हम कह सकते हैं राम पर आधारित सभी रचनायें मर्यादित है। जिसका प्रमाण बज्जिका लोकगीतों में पूर्ण रूपेण है।

"भागवत श्रीराम और नैतिक शिक्षा"

श्री ओमप्रकाश गौड

(छात्रा- एम0एड0) शिक्षा संकाय
जगद्गुरू राम भद्राचार्य विकलांग, विश्वविद्यालय चित्रकूट उ0प्र0

श्री राजकुमार सिंह

(छात्र- एम0एड0) शिक्षा संकाय
जगद्गुरू राम भद्राचार्य विकलांग, विश्वविद्यालय चित्रकूट उ0प्र0

भारतीय संस्कृति नैतिकता का परिचायक है, इस संस्कृति में नैतिकता का समावेश पहली प्राथमिकता है। भारतीय शिक्षा में आत्मोन्नति, आत्मनियंत्रण, सार्वभौमिकता, परोपकार जैसे नैतिक गुणों के विकास पर जोर दिया जाता है।

भारतीय जनमानस में भगवान श्रीराम की अद्भुत छवि है, वे लोकनायक के रूप में प्रसिद्ध है। भगवान श्रीराम ने अपने चरित्र के माध्यम से भारत ही नही विश्व में मर्यादा के स्थापक एवं सम्वर्धक है।

भारतीय आज भी भगवान श्रीराम की आराधना एवं वदना केवल इसलिए करते है, क्योकि भगवान श्रीराम अपने चरित के माध्यम से नैतिकता का पाठ पढ़ाते है। उन्होंने जाति, धर्म, सम्पदाय, देश की संकीर्ण मानसिकता का खण्डन करके प्रेम, सौहार्द की अमुल्य शिक्षा की भावना श्रीराम ने वनवास के दौरान हिंसक वनवासियों को भी एकता प्रेम से रहने की सामुहिक भावना का विकास किया। इसी प्रकार शवरी के झुठे वैर खा कर जाति ही न समाज की स्थापना की। उसी प्रकार विभीाण को शरण देकर सार्वभौमिकता का परिचय दिया।

भारतीय संगीत की पृष्ट भूमि में राम दर्शन का स्थान

श्री पंकज शर्मा

शोध छात्र, गायन विभाग
काशी हिन्दू विश्व विद्यालय, वाराणसी

संगीत, साहित्य एवं कला देश काल की तत्कालीन गतिविधियों का दर्पण होती हैं स रचनाकार अपनी रचनाओं क माध्यम से तत्कालीन सामाजिक परिदृश्य, परिवेश तथा व्यवहारिक गतिविधियां और इन समस्याओं का लेखा-जोखा काव्य साहित्य के माध्यम से लोग जगत में रखता है तथा सामाजिक एवं धार्मिक कुरीतियों से अवगत करवाकर समाज को इससे उबारने में सहायक होता हैस इनकी रचनाएँ आने वाली पीढ़ी के लिए एक नए युग निर्माण में मार्गदर्शक साबित होती है।

नई पीढ़ी में समाज के पारिवारिक एवं सामाजिक संस्कारों की नीवं रखने में 'मिल का पत्थर' रूपी एक उपाय है। शायद इसलिए भारतीय संस्कृति में बीते लंबे समय से घरों में मंदिरों में नित्य सांगीतिक भजन कीर्तन एवं समाज के जनसमूह में समय-समय पर ऐसे आयोजनों का संचालन होता रहता है जो लोक संस्कृति का अनूठा उदाहरण है।

भारतीय संस्कृति एवं लोक परिवेश की संपन्नता सदैव भी विश्व पटल पर आकर्षण का केंद्व रही है। क्योंकि इसका मुख्य कारण यहां की संस्कृति में समानता, समरसता, नैतिकता, एवं मानवीय गुण धर्मों के समृद्ध एवं सफल व्यवहारिक पक्ष में सदैव और आदि काल से ही संपूर्ण जगत को मार्गदर्शन एवं नई दिशा दी है।

भारतीय संगीत आदि काल से ही अध्यात्मवाद का धोतक रहा है, तथा इसमें भक्ति परक साहित्य संगीत के आध्यात्मिक दृष्टिकोण के परस्पर संबंध का प्रमुख उदाहरण हैं। आदि काल से ही भारतीय संगीत मनीषियों ने भक्ति सूचक पदों को अपने संगीत की स्वरलिपि में निबंध कर जनमानस के सामने प्रस्तुत किया है, विभिन्न रागों में भगवान के भजन निर्गुण एवं उनकी लीलाओं का वर्णन से संबंधित पदों को सहज धुन में निबंध कर जनमानस को संस्कृत और संस्कृति और साहित्य से जोड़े रखा है।

भक्ति काल में अलग-अलग भक्त कवियों द्वारा अनेक रचनाएं की गई जिसमें से दो सबसे बड़े महाकाव्य, महाभारत एवं रामचरितमानस, जिनके रचनाओं द्वारा भक्ति एवं नीतिपरक ज्ञान मार्ग रुपी भी अपने साहित्य के माध्यम से रखा।

संगीत का मानव जीवन से बहुत गहरा संबंध है क्योंकि, संगीत मानव की आत्मा का स्वतंत्र प्रकाश है। संगीत मानव हृदय की गहनतम अनुभूतियों और भावनाओं को रंजीत करने का प्राचीन काल से उत्कृष्ट माध्यम रहा है स मानव एक आध्यात्मिक प्राणी है, आदिम काल से उसके अंतकरण में प्राकृतिक छवियों स्थितियों वस्तुओं और जीवन में घटित विभिन्न घटनाओं को देखकर विभिन्न भाव उत्पन्न होते रहते हैं स आदिमानव के पास, अपनी भावनाओं, प्रेरणा और अनुभूतियों को व्यक्त करने की आधुनिक शब्दावली नहीं थी, उस संगीत की उत्पत्ति मानव के इन अनुभूतियों भावनाओं को व्यक्त करने के सहायक हुई।

---------- 'लोक में राम'----------

'घट घट व्यापक राम, बोल रे.....

मत कर बैर झूट मत हांके, मत पर धन हर मत मद चाखे 'इस अस्तित्ववान लोक परिधि में राम से अछूती कोई जगह नहीं और न ही कोई ऐसा प्राणी और वस्तु हो जो राम और उनके व्यक्तित्व से परे हों स यहाँ कण कण में , घट घट में वनस्पति में , समस्त प्राणी में राम ही राम हैं। इस जगत के निर्माण से निर्वाण तक सब राम के भरोसे हैं

'मै तो रमता जोगी राम ,

मेरा क्या दुनिया से काम'

भारतीय संगीत और उसमे राम का परस्पर अनूठा सम्बन्ध है क्योंकि संगीत के ईष्ट देव , आदि देव - महादेव भगवान् भोले नाथ जिनके आराध्य देव भगवान् राम है तथा भगवान् राम क पूजनीय भगवान् भोलेनाथ हैं , शायद यही कारण भगवान् राम क चरित्र को गाते समय गाने वालों को और सुनने वालों को जो सुखद अनुभव होता होगा उसकी केवल कल्पना ही की जा सकतीं है।

भगवान राम के चरित्र का काव्य रुप में वर्णन सर्वप्रथम आदिकवि महर्षि वाल्मीकि ने किया था स इसके उपरांत अनेक भक्त कवियों ने वाल्मीकि रामायण के आधार पर ही अपनी अपनी बुद्धि व विवेक के अनुसार अनेक रामायण कृतियों की रचना की जैसे अध्यात्म रामायण, प्रतिभास बंगला, रामायण रामायण, मैथिली रामायण, कंब रामायण, साकेत रामायण, आदि इन्हीं के अनेक रामायण ग्रंथों का अविर्भाव हुआ परंतु इन रामायण ग्रंथों में से महर्षि वाल्मीकि और गोस्वामी तुलसीदास कृत रामायण मुख्य हैं।

विशेष रुप से रामचरितमानस का भारतीय जनमानस पर जो प्रभाव है वह अकथनीय है स्वर्गीय विद्वान संत स्वामी करपात्री जी महाराज का कहना था कि आज इस विषम परिस्थिति में भारतीय संस्कृति की रक्षा करने में रामचरितमानस का अभूतपूर्व योगदान है।

भारतीय संगीत में रामचरित प्रसंग का अहम स्थान है, क्योंकि रामचरित लोग जगत के लिए एक अनूठा आदर्श है। राम के गुण, गुण चिरंतन, सदैव अनुसरणीय हैं स तथा इनके जीवन शैली, कर्तव्यनिष्ठता, धर्मनिष्ठता, प्रेम - वात्सल्य का परपरिमुलक है तथा इनकी भक्ति समस्त मानव एवं मनुजता को अग्रसित कर इन्हें सुशोभित एवं विभूषित करने का एक मात्र मार्ग है, या यूं कहें तो अतिशयोक्ति ना होगी कि राम के जीवन चरित्र ने भारतीय संस्कृति, समाजिक व्यवहार का मार्गदर्शन किया तथा इसका अनुसरण करने वालों को नाम , यश, रिद्धि-सिद्धि, सब कुछ स्वतः ही मिलने लगता है। तुलसी दास जी ने रामचरित मानस में तो यहाँ तक कहा है कि 'कलियुग में केवल नाम अधारा'।

पंडित भीमसेन जोशी द्वारा गाए गए बहुत ही प्रचलित भजन में देखने को मिलता है कि राम के गुणों का गान मानता के लिए कितना महत्व रखता है —

राम का गुणगान करिए.....

राम प्रभु की भद्वता का, सभ्यता का ध्यान धरिए

राम के गुण, गुण चिरंतन, राम गुण सुमिरन रतन धन

मनुजता को कर विभूषित, मनुज को धनवान करिए

राम का गुणगान करिए.....

भगवान राम की एक-एक कथा वंदनीय है, फिर तो सभी प्रसंगों का वर्णन कर पाना मुश्किल है उनके कुछ प्रसंगों का वर्णन पर प्रकाश डालते हुए देखा जा सकता है पंडित रामाश्रय झा 'रामरंग' जी ने अपने ग्रन्थ संगीत रामायण में रामचरितमानस के सभी प्रसंगों व 7 कांड में को शास्त्रीय निबद्धिकरण तथा नवीनीकरण कर भारतीय संगीत और संस्कृति के अस्तित्व को नई दिशा दी है। इनके ग्रंथ से कुछ रचनाएं जिनमे कितने सुन्दर तरीके से मानस के प्रसंगों को शास्त्रीय संगीत में निरुपित किया है।

श्रीराम-जन्म प्रसंग

राग-भीमपलासी-झपताल

स्थाई : विनती करत सकल सुर विमान चढ़े देवन के देव हरि, प्रगटे अवधपुरी।

अन्तरा : असुर संघारन दीन दुःख टारन। ''रामरंग'' नर रूप धरे त्रिभुवन पति।।

कौषल्या द्वारा भगवान की स्तुति

राग-श्री-झपताल (मध्य लय)

स्थाई : श्रीपति जगपति, देवन हरि, अखिल भुवनपति चारि भुजधारी।

अन्तरा : आदि अनादि, अनन्त अन्त गति, ''रामरंग'' दीन पति चक्र करधारी।।

राजा दषरथ के दरबार में मुनि विष्वामित्र का आगमन और श्रीराम-लक्ष्मण को

मांग ले जाने का प्रसंग

राग-जौनपुरी-त्रिताल (मध्यलय)

स्थाई : राजन आयो तेरे द्वार, दीजै राम लखन मन हर्शित, नहि कछु कीजै आन बिचार।

अन्तरा : देह गेह दइहौं मुनि सरबस ना दइहौं दोउ प्राण अधार, दियो कुँवर रिशि राज बुझाये, सुत कर मोह न सके सम्हार।।

राग-बहार-त्रिताल (मध्यलय)

स्थाई : मुनि संग चले दोउ सुकुमार, आवत हते ताडुका नारी, कीन्हे मुनि मख की रखबारि।

अन्तरा : समर हते प्रभु खल सुबाहु को, अनुज निषाचर झारि,

सिन्धु पार डारे मारीच को भावी वात बिचारि।।

अहिल्या उद्धार प्रसंग

राग-मुल्तानी-एकताल (मध्यलय)

स्थाई : पग धूरि लागत ही, पाहन भई पुनि मुनि की नारि आनन्द भरी।

अन्तरा : प्रभु पद कमल, मेरो मन मधुप, ''रामरंग'' रस चाखै नित माधुरी।।

गंगा स्नान एवं मिथिला के लिये प्रस्थान

राग-तिलक कामोद-झपताल

स्थाई : सुर सरि सलिल कियो मज्जन मुनि, सबहि समेत भयो आनन्द।

अन्तरा :मुनिन समेत चले मिथिला कहं, लिये संग दोऊ दषरथ नन्द।।

मिथिला की वन्दना (मैथिली भाशा में)

राग-तिरभुक्ति-झपताल

स्थाई : गंग बागमती कोषी के जहं, एहेन भूमि कय नमन करूँ बार-बार।

अन्तरा : जनक याग्यवल्क जहँ सन्त विद्वान, ''रामरंग'' जय मिथिला नमन तोहे बार-बार।।

श्रीराम-लक्ष्मण के साथ मुनि विष्वामित्र का जनकपुर आगमन

राग-केदार-झपताल

स्थाई : नगर विदेह को देखे रघुनाथ, लखन समेत मन अति ही लुभायो है।

अन्तरा : जहं तहं बाटिका विविध रंग फूले फूल, गूँजत कूजत भृंग बिहग सुहायो है।।

मुनि विष्वामित्र से राजा जनक का मिलने आना

राग-गौड़ सारंग-झपताल

स्थाई : कौषिक को सुनि नगर आगमन, मिथिला पति आये मुनि संग मिलन।

अन्तरा : देखि अनूप रूप दोउ मूरत, भये विदेह विदेह की सूरत।।

रामचरितमानस स्वयं अपने आप में एक व्यापक विषय है, यह किसी व्यक्ति विशेष अथवा इससे संबंधित घटनाओं की कथा प्रसंग मात्र नहीं वरन रीति, नीति, एवं भक्ति, के गुणों से परिपूर्ण है। भगवान राम का चरित्र केवल उनके अनुरागियों को ही नहीं वरन वरन, भगवान से विमुख और अधम से अधम एवं महा दुराचारियों का भी मंगल करने वाला है स कहा गया है—

पाई न केहि गति पतित पावन राम भजि सुनु सठ मना

गणिका अजाम अली विवाद गीत बजा दी खलता रे घना

रामचरितमानस का भारतीय जनमानस पर जो प्रभाव है वह अकथनीय है। स्वर्गीय विद्वान संत स्वामी करपात्री जी महाराज का कहना था कि, आज इस विषम परिस्थिति में भारतीय संस्कृति की रक्षा करने में रामचरितमानस का अभूतपूर्व योगदान है।

'अनन्य राम भक्त रेवरेण्ड फ़ादर कामिल बुल्के'- प्रस्तुतकर्त्री

श्री निरूपम शर्मा

प्रवक्ता हिन्दी विभाग
बरेली कॉलेज, बरेली।

शक्ति, शील तथा सौन्दर्य के आगार श्री राम हिन्दू धर्म चेतना के मूलाधार है। ''राम पूर्वतापिन्युपनिषद में बताया गया है-

''सच्चिदानन्दमय महाविष्णु श्री हरि जब रघुकुल में दशरथ जी के यहाँ अवतीर्ण हुए, उस समय उनका नाम 'राम' हुआ। इस नाम की व्युत्पत्ति इस प्रकार है- 'जो महीतल पर स्थित होकर भक्त जनों का सम्पूर्ण मनोरथ पूर्ण करते हैं और राजा के रूप में सुशोभित होते हैं, वे राम हैं- ऐसा विद्वानों ने लोक में 'राम' शब्द का अर्थ व्यक्त किया है-

'चिन्मयेऽस्मिन महाविष्णौ जाते दशरथे हरौ।
रघोः कुलेऽखिलं राति राजते यो महीस्थितः।।
स राम इति लोकेषु विद्वद्भिः प्रकटीकृतः।'

वह परब्रह्म राम रूप से अवतरित होकर मर्यादा पुरूषोत्तमावतार द्वारा सनातन धर्म का स्वरूप जीवों के सामने कल्याणार्थ प्रतिष्ठापित करता है, दुष्टनिग्रह सज्जनानुग्रह द्वारा स्वरूपोपलब्धि का सुपथ राजमार्ग स्वयं आचरित करके प्रस्तुत करता है।

परमात्मा महाविष्णु जब आनन्द कंद-रूप में विराजने लगे तो राम नाम से प्रसिद्ध हुए। उनके द्वारा दुष्ट राक्षसों का मरण हुआ, इसलिये भी 'राम' नाम की सार्थकता हुई। उन नित्यानन्द चित्स्वरूप में योगी और ज्ञानी जन नित्य-निरन्तर रमण करते हैं, इसलिए उनका नाम 'राम' है-

रमन्ते योगिनोऽनन्ते नित्यानन्दे चिदात्मनि।
इति रामपदे नासौ परं ब्रह्माभिधीयते।।
(रामपूर्वतापिन्युपनिषद)''

शुद्ध सच्चिदानन्द ब्रह्म के अवतार श्री राम काव्य-धारा का मूल उद्गम स्थल 'वाल्मीकि रामायण' है। आदि कवि वाल्मीकि से प्रारम्भ राम काव्य परम्परा का परिशीलन विभिन्न विद्वानों द्वारा किया गया है, जिनमें रेवरेण्ड फादर कामिल बुल्के का स्थान सर्वोपरि है। फादर कामिल बुल्के बेल्जियम में भारत आये एक मिशनरी थे। भारत आकर मृत्युपर्यन्त वे हिन्दी, तुलसी और वाल्मीकि के भक्त रहे।

''भारत कामिल बुल्के का जन्म 'बेल्जियम' के 'वेस्ट फ्लैंडर्स प्रान्त के 'रामस्केपेल' नामक गाँव में 1 सितम्बर 1909 को हुआ था और उनका देहावसान 17 अगस्त सन् 1982 को नयी दिल्ली, भारत में हुआ। बुल्के जी आरम्भ से ही आध्यात्मिक प्रवृत्ति के व्यक्ति थे। यद्यपि सन् 1928 में उन्होंने 'ल्यूवेन विश्वविद्यालय' से सिविल इंजीनियरिंग में बी0एस0सी0 की डिग्री प्राप्त की। इंजीनियरिंग की पढ़ाई के दौरान ही उन्होंने संन्यासी बनने की ठानी। इंजीनियरिंग की दो वर्ष की पढ़ाई पूरी कर वे वर्ष 1930 में 'गेन्त' के नज़दीक 'जेसुइट धर्मसंघ' में दाखिल हो गये। नीदरलैंड के 'वलकनबर्ग' में (1932-34) में अपना दार्शनिक प्रशिक्षण लेने के पश्चात 1934 में भारत की ओर निकल आए और नवम्बर 1936 में भारत (मुम्बई) पहुँचे। 'दार्जिलिंग'

में एक संक्षिप्त प्रवास के बाद उन्होंने 'गुमला' (वर्तमान झारखण्ड) में पाँच साल तक गणित पढ़ाया। वहीं पर हिन्दी, ब्रजभाषा व अवधी सीखी। सन् 1938 में सीतागढ़, हजारीबाग में 'पंडित बदरीदत्त शास्त्री' से हिन्दी और संस्कृत सीखी। सन् 1940 में प्रयाग से विशारद की परीक्षा पास की और फिर सन् 1942-44 में उन्होंने कोलकाता विश्वविद्यालय से संस्कृत में एम0ए0 किया।"[2]

"वर्ष 1974 में इलाहाबाद विश्वविद्यालय से उन्होंने हिन्दी साहित्य में एम.ए. किया तथा फिर वहीं से 1949 में 'रामकथा का विकास' विषय पर डी.फिल. किया। हिन्दी परिषद, विश्वविद्यालय, प्रयाग द्वारा 'रामकथाः उत्पत्ति और विकास' नाम से सन् 1950 ई0 में यह ग्रन्थ किंचित परिवर्द्धन के साथ प्रकाशित हुआ।"[3]

प्रस्तुत ग्रन्थ चार भागों में विभाजित है। प्रथम अध्याय में प्राचीन रामकथा साहित्य, द्वितीय में रामकथा की उत्पत्ति, तृतीय में अर्वाचीन रामकथा-साहित्य तथा चतुर्थ में रामकथा के विकास का विवेचन किया गया है। चारों भागों में कुल इक्कीस अध्याय हैं। पहला अध्याय 'वैदिक साहित्य और कथा' है जिसमें वैदिक साहित्य में रामकथा के विभिन्न पात्रों (इक्ष्वाकु, दशरथ, राम, अश्वपति, जनक, सीता आदि) का अनुसंधान करने के पश्चात् वैदिक साहित्य में रामकथा का प्रायः अभाव निर्णीत किया गया है। "वैदिक साहित्य में न तो इन नामों का पारस्परिक सम्बन्ध उल्लिखित है और न इनके संदर्भ में रामकथा का निर्देश मिलता है। जनक और सीता का बारम्बार उल्लेख होने पर भी दोनों के पिता-पुत्री सम्बन्ध की ओर कहीं भी संकेत मात्र भी नहीं किया गया है। अतः वैदिक साहित्य के रचनाकाल में राम कथा विषयक गाथाओं का अस्तित्व अत्यन्त संदिग्ध है। उस साहित्य में अनेक ऐसे ऐतिहासिक व्यक्तियों के नाम मिलते हैं जो रामायण के पात्रों के नाम भी हैं—इससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि ये नाम प्राचीन काल में भी प्रचलित थे।"[4]

दूसरे अध्याय में वाल्मीकि-रामायण के पाठ तथा रचनाकाल पर विचार किया गया है, साथ ही आदिकवि वाल्मीकि के अस्तित्व एवं जीवन चरित्र पर भी विचार किया गया है।

तीसरे अध्याय में 'महाभारत' के विभिन्न पर्वों में वर्णित रामकथा का आकलन किया गया है। चौथे अध्याय में जातकों तथा अन्य बौद्ध साहित्य में रामकथा की शोध की गयी है। पाँचवे अध्याय में जैन-रामकथा की विशेषताओं का अनुशीलन किया गया है। छठे अध्याय में 'दशरथ जातक' में वर्णित रामकथा की प्रामाणिकता तथा 'रामायण' पर पड़े बौद्ध प्रभाव की समीक्षा की गयी है। "दशरथ जातक की अन्तरंग परीक्षा से सिद्ध होता है कि उसका कथानक मौलिक नहीं है। यह रामायणीय कथा का विकृत रूप है।"[5]

सातवें अध्याय में अनेक विदेशी तथा भारतीय विद्वानों के मतों की आलोचना करते हुए रामकथा के मूलस्रोत का विश्लेषण किया गया है। "रामकथा के मूल स्रोत के विषय में विभिन्न धारणाओं की अप्रमाणिकता और पारस्परिक विरोध को ध्यान में रखकर सबसे स्वाभाविक अनुमान यही प्रतीत होता है कि राम-विषयक प्राचीन गाथा-साहित्य ऐतिहासिक घटनाओं पर आधारित है।"[6]

आठवें अध्याय में प्रचलित वाल्मीकि-रामायण के मुख्य प्रक्षेपों पर विचार किया गया है। नवें अध्याय में रामकथा के प्रारम्भिक विकास तथा व्यापक प्रसार का निदर्शन हुआ है। दसवें अध्याय में संस्कृत के धार्मिक साहित्य और ग्यारहवें अध्याय में उसके ललित साहित्य में निबद्ध रामकथा का विवेचन है। बारहवें अध्याय में आधुनिक भारतीय भाषाओं में वर्णित रामकथा की विचार-चर्चा की गयी है। तेरहवें अध्याय में तिब्बत, खातोन, हिन्देशिया आदि अन्य देशों में प्रचलित रामकथा का निरूपण है। चौदहवें से लेकर बीसवें अध्याय में रामायण के सात कांडों की कथावस्तु का विश्लेषण करते हुए रामकथा के विकास का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। इक्कीसवें अध्याय में ग्रन्थ का उपसंहार है, जिसमें रामकथा की व्यापकता, विभिन्न रामकथाओं

की मौलिक एकता तथा प्रक्षिप्त सामग्री की सामान्य विशेषताओं का परिशीलन और रामकथा को प्रभावित करने वाले विभिन्न साधनों का उल्लेख करते हुए रामकथा के विकास का सिंहावलोकन प्रस्तुत किया गया है। ग्रन्थ के परिशिष्ट में रामकथा-साहित्य की एक उपयोगी तालिका भी प्रस्तुत की गयी है।

प्रस्तुत ग्रन्थ रामकथा-सम्बन्धी सामग्री का एक विश्वकोश के समान है, जिसमें देश और विदेश की विभिन्न भाषाओं के साहित्यों में उपलब्ध रामायण के लगभग 300 रूपों की विवेचना प्रथमतः की गयी है। यह स्वयं में हिन्दी शोध के क्षेत्र में एक मानक है। ''उनके गुरू और प्रसिद्ध विद्वान डॉ. धीरेन्द्र वर्मा ने लिखा है-

''यह ग्रन्थ वास्तव में रामकथा सम्बन्धी समस्त सामग्री का विश्वकोश कहा जा सकता है। वास्तव में यह खोजपूर्ण रचना अपने ढंग की पहली रचना है। हिन्दी ही क्या किसी भी यूरोपीय अथवा भारतीय भाषा में इस प्रकार कोई दूसरा अध्ययन उपलब्ध नहीं है।''[7]

'फादर बुल्के' के घनिष्ठ सहयोगी रहे 'स्व0 डॉ. दिनेश्वर प्रसाद' ने अपने संस्मरण में लिखा है- ''1947ई0 में जब उन्होंने एम0ए0 कर लिया, तो डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा की प्रेरणा से उन्होंने डॉक्टरेट के लिए रामभक्ति के विकास पर शोध आरम्भ किया। उनके शोध निर्देशक डॉ0 माता प्रसाद गुप्त थे। उन्होंने अपने प्रबन्ध के प्रथम अध्याय के लिए रामकथा के विकास से सम्बन्धित सामग्री का संकलन किया, जिसका परिमाण इतना अधिक था और निष्कर्ष इतने रोचक कि डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा ने उन्हें अपना विषय संशोधित कर केवल रामकथा के विकास पर कार्य करने की अनुमति दे दी। उन्होंने बाद में भी इस विषय पर प्रायः अठ्ठारह वर्षों तक अनुसंधान किया।''[8]

जिस समय फादर बुल्के इलाहाबाद में शोध कर रहे थे, उस समय पूरे देश में यह नियम प्रचलित था कि सभी विषयों के शोध-प्रबन्ध केवल अंग्रेजी में प्रस्तुत किये जा सकते हैं। ''बहुभाषाविद फादर बुल्के ने लिए अंग्रेजी में शोध प्रबन्ध प्रस्तुत करना सरल था, किन्तु यह बात उनके हिन्दी स्वाभिमान के विपरीत थी और उन्होंने आग्रह किया कि उन्हें हिन्दी में ही शोध कार्य प्रस्तुत करने की अनुमति प्रदान की जाये। इलाहाबाद विश्वविद्यालय के तत्कालीन उपकुलपति डॉ0 अमरनाथ झा ने उनके आग्रह पर शोध सम्बन्धी नियमावली में संशोधन कराया और उन्हें अनुमति दे दी।[9] इस प्रकार समस्त शोध जगत देवनागरी लिपि में शोधग्रन्थ लेखन का स्वत्वाधिकार पाने हेतु फादर बुल्के का सदैव ऋणी रहेगा।

''रामकथा सम्बन्धी अध्ययन व्यापक होते जाने के साथ तुलसी के प्रति उनकी श्रद्धा भी बढ़ती गयी। अनेक महत्वपूर्ण निबन्ध इस महाकवि पर लिखने के साथ ही वे एक विस्तृत ग्रन्थ भी तुलसी पर लिखना चाहते थे। 'रामकथा और तुलसीदास' तथा 'मानस कौमुदी'- इन दो पुस्तकों से उनकी तुलसी विषयक दृष्टि की जानकारी प्राप्त की जा सकती है।[10]

स्वयं डॉ0 बुल्के ने 'ईसाई होते हुए भी तुलसी पर इतनी श्रद्धा कैसे?'- इस प्रश्न का उत्र देते हुए लिखा है- ''ईसा, हिन्दी और तुलसीदास- ये वास्तव में मेरी साधना के तीन प्रमुख घटक हैं कि मेरे लिए इन तीनों तत्वों में कोई विरोध नहीं; बल्कि गहरा सम्बन्ध है।''[11] तुलसी के भक्तिमार्ग की विशेषताएँ बताते हुए उनका विचार है- ''सन्त गोस्वामी तुलसीदास ने भक्ति का जो सिक्का चलाया उसके दो पहलू हैं- एक भगवद्भक्ति और दूसरा नैतिकता। उनकी दृढ़ धारणा थी कि एक ओर सदाचरण के अभाव में पाखण्ड मात्रा है। भक्ति के राजमार्ग का प्रतिपादन तुलसी का मुख्य उद्देश्य था। दूसरी ओर, तुलसी जानते थे कि काम-क्रोध-लोभ पर विजय प्राप्त करने के लिए, अर्थात अपनी नैतिकता बनायें रखने के लिए भगवत्कृपा की नितान्त आवश्यकता है।''[12]

सन् 1975 में महाराष्ट्र के नागपुर शहर में आयोजित विश्व हिन्दी सम्मेलन में फादर बुल्के ने अपने सम्बोधन में तुलसी के प्रति अपनी अखण्ड आस्था व्यक्त करते हुए कहा- ''तुलसी विश्व के

महानतम कवियों में से एक हैं।' फिर उन्होंने हँसते हुए कहा, ''तुलसी ने कहा- सबहिं नचावत राम गोसाईं, किन्तु मैं कहता हूँ- मोहिं नचावत तुलसी गोसाईं। भाषण का अंतिम वाक्य सबसे अधिक मार्मिक था। तुलसी की भक्ति-भावना के प्रमुख तत्व आत्मदैन्य एवं समर्पणशीलता की व्याख्या करते हुए उन्होंने कहा, ''मै तुलसी का हाथ पकड़कर भगवान की ओर जा रहा हूँ।''[13] ''रामचरितमानस के रचयिता का गुणगान वे आजीवन करते रहे। उन्होंने कभी कहा था कि मरणोपरांत यदि कहीं यह अवसर आये कि मिलना राम अथवा तुलसी हो तो मैं राम से नहीं तुलसी से मिलना चाहूँगा। उनके हृदय में बाबा तुलसी ने जगह बना ली थी।[14]

वस्तुतः डॉ0 बुल्के में भी तुलसी के सदृश भक्तिभाव, प्रेम, समर्पण और विनय भाव विद्यमान था। उन्होंने प्रभु श्री राम, महर्षि वाल्मीकि, महाकवि तुलसीदास तथा रामचरितमानस को न केवल हिन्दी साहित्य अपितु विश्व साहित्य में प्रतिष्ठित कराने का जो भागीरथ प्रयन्त किया उसके किए हिन्दी भाषा एवं साहित्य सदैव फादर कामिल बुल्के का आभारी रहेगा। ''उनका यूरोप से आकर भारत में बसना और भारतीय कहलाने में गर्व महसूस करना यह बतलाता है कि महादेशों और देशों के बीच की दीवारें नकली हैं, सारे पृथ्वीवासी एक ही कुटुम्ब के सदस्य हैं। उनका जीवन धार्मिक एकता की भी मिसाल है। तभी तो वह ईसा का पुजारी रामकथा का अद्वितीय अन्वेषक बन गया।''[15]

(Footnotes)

[1] श्री राम भद्र पूर्णावतार हैंः जगद्गुरू शंकराचार्य स्वामी श्री स्वरूपानन्द सरस्वती जी महाराज (कल्याण-श्री राम भक्ति अंक जनवरी सन् 1994 ई.), पृ. 414.

[2] विकीपीडिया से।

[3] http:èèhindi.webdunia.com.

[4] रामकथा और तुलसीदासः फादर डॉ. कामिल बुल्के, पृ. 12.

[5] वही, पृ. 15.

[6] रामकथा और तुलसीदासः फादर डॉ. कामिल बुल्के, पृ. 17

[7] श्री राजेन्द्र उपाध्यायः इस्पात भाषा भारती (विकीपीडिया से)

[8] डॉ0 कामिल बुल्केः जीवन रेखाएँ-ले0डॉ0 दिनेश्वर प्रसाद,- (हिन्दी चेतना-डॉ0 कामिल बुल्के विशेषांक जुलाई 2009) पृ0 17.

[9] वही, पृ. 17-18.

[10] डॉ0 कामिल बुल्केः जीवन-रेखाएँ- ले0 डॉ0 दिनेश्वर प्रसाद (हिन्दी चेतना-डॉ0 कामिल बुल्के विशेषांक जु00 2009) पृ. 18.

[11] एक ईसाई की आस्था, हिन्दी-प्रेम और तुलसी भक्तिः डॉ0 कामिल बुल्के (हिन्दी चेतना-डॉ0 कामिल बुल्के विशेषांक जु. 2009) पृ.33

[12] रामकथा और तुलसीदासः फादर डॉ0 कामिल बुल्के, पृ.77.

[13] डॉ. कामिल बुल्के : विश्व हिन्दी सम्मेलन, नागपुर में- लेखक-डा. प्यारे लाल शुक्ल (हिन्दी चेतना-डॉ0 कामिल बुल्के विशेषांक-जुलाई 2009) पृ.51.

[14] गौरांग हिन्दी ऋषि फादर कामिल बुल्केः ले0 श्री संजय कृष्ण (दैनिक जागरण, सप्तरंग 2 जून 2014)

[15] बीसवीं शताब्दी का ऋषिः डॉ0 पूर्णिमा केडिया 'अन्नपूर्णा' (हिन्दी चेतना डॉ0 कामिल बुल्के विशेषांक, जुलाई 2009) पृ.23.

रामायण काल में नृत्य संगीत

डॉ. राहुल कुमार

सहायक प्राध्यापक, संगीत विभाग
गनौरी रामकली टीचर ट्रेनिंग कॉलेज, नवादा, बिहार

रामायण काल में सभ्यता के विकास के साथ ही संगीत भी विकसित हो चुका था। इस काल में बाल्मीकि जैसे चिंतक ने एक उच्च समाज की कल्पना की। रामायण का काल ईशा पूर्व 1600 माना जाता है। इस काल में इक्ष्वाकु वंशीय राम के सम्पूर्ण जीवन की गाथा को महाकवि बाल्मीकि ने अपने रामायण में पिरोया। जिसे लव और कुश राम के दरबार में जाकर राम की उस गाथा को सुनाते हैं, और अपना खोया हुआ अधिकार प्राप्त करते हैं। इस काल में समाज के अत्यन्त उच्च वर्ग से लेकर निम्न वर्ग के लोग नृत्य और गायन कलाओं में रूचि लेते थे। रामायण गेय श्लोकों के कारण उसे गायन कला का उत्कृट महाकाव्य माना गया है। इस काल में मनुष्यों में जो सौन्दर्य कल्पना का समाहार एवं आनंदपूर्ण चेतना का योग दिखाई पड़ता है वह विकसित संगीत के कारण ही है। मनुष्य को सुसंस्कृत बनाने के लिए संगीत नृत्य और चित्रकला की शिक्षा देना अनिवार्य था।

श्रीमद वाल्मीकीय 'रामायण' को महाकाव्य काल का प्राचीनतम ग्रंथ माना गया है। विद्वानों के अनुसार मानव जीवन का ऐसा कोई पक्ष नहीं जिसकी झाँकी रामायण में नहीं मिलती है। रामायण में संगीत की व्यापकता हम इसी से आँक सकते हैं कि सुदूर पूर्वीय देशों- जावा, सुमात्रा, बाली, मलेशिया, इण्डोनेशिया आदि देशों में राम कथा का "बैले नृत्य" आज भी बड़ी निष्ठा के साथ प्रस्तुत किया जाता है। अनुष्ठुप छन्द में निबद्ध रामायण गेय है। तात्पर्य है कि संगीतात्मकता ही इसका मूल स्वर है। आचार्यों का मत है कि वीणा के साथ इसे गाया जाता था। रामायण में गन्धर्वों का उल्लेख मिलता है। जिनका मूल पेशा संगीत, नृत्य था। देवगन्धर्वों में विश्वावसु, हाहा, हू,हू, नारद तथा तुम्बरो का संगीत के योगदान में विशेष उल्लेख है। भारद्वाज मुनि के आश्रम में भरत का स्वागतार्थ इन गन्धर्वों ने गीत नृत्यादि प्रस्तुत किया था।

रामायण का महानायक 'श्रीराम' जिनके व्यक्तित्व का सम्पूर्ण आकार रामायण में चित्रित है। राम के जन्म के समय अद्‌भुत उत्सव का आयोजन हुआ था। उसमें सभी वर्ग के लोग नृत्य करते हुए आनन्द से विभोर हो गए थे। सम्पूर्ण अयोध्या संगीतमयी और नृत्यमयी हो गई थी। राम के विवाह में बारातियों के मनोरंजन हेतु अनेकों गायक वादक, नृत्यकारों के द्वारा आश्चर्यजनक कलाओं का प्रदर्शन किया जाता है। जनकपुर की स्त्रियों के सुमधुर कण्ठों द्वारा एक से बढ़कर एक श्लोक, गीत एवं गलियाँ बारातियों को सुनने के लिए मिलते हैं- रामजी से पुछे जनकपुर की नारी बताबऽ बबुआऽ लोगवा देत काहे गारी, इ गनजेड़ी बाबा से कइसन बा इयारी, बताबऽ बबुआऽ एक भाई गोर एक भाई कार काहे। अतः इनके स्वागत हेतु जनकपुर में भी एक से बढ़कर एक कलाकारों के द्वारा नृत्य संगीत की प्रस्तुति हुई थी। राम के राज्याभिषेक के अवसर पर भी इन नट नर्तकियों के द्वारा भव्य संगीत का प्रदर्शन किया गया था। इस

काल में संगीत का प्रभाव न केवल मानवों पर अपितु पशुओं पर भी था। समस्त मानव जाति आर्य, वानर, राक्षस सभी पर इसका प्रभाव था।

हजारों वर्षों से लोक में नृत्य और गान की परम्परा विद्यमान थी। शिष्यों को गुरूकुल में नृत्य एवं संगीत का अवबोध कराया जाता था, ताकि वे लोक जीवन में जाकर लोगों के रंजनार्थ इस विद्या का प्रचार-प्रसार कर सके। रामायण काल में संगीत का सबसे ठोस प्रमाण कुश-लव गायन है। महर्षि वाल्मीकि ने तंत्रीवीणा के साथ इन दोनों को गायन का अभ्यास कराया था। इस काल में शिक्षा के साथ-साथ शिष्यों को वेद-गान भी कराया जाता था।

"कौशिक गानन्तय विधा तदाचायेस्तिुम्बरू प्रभृति गन्धर्वेर चरिते सेविते"

कौशिक राग प्राचीन ग्राम रागों में अन्यत्तम है। इसका उल्लिख "नारदीय शिक्षा' तथा 'नाट्यशास्त्र' आदि प्राचीन ग्रंथों में मिलता है। रामायण में उल्लिखित कौशिकाचार्य सम्भवतः गन्धर्व थे। जिन्होंने कैशिक राग की अवतारणा की। अयोध्या काण्ड में - 'उपानृत्यन्त भरत भारद्वाजस्य शास्नात्'

उक्त टीका की सम्मति में भरत से अभिप्राय भरत प्रवीण नृत्य से है। रामायण से पता चलता है कि यह भरत नाट्यशास्त्र प्रणेता भरत नहीं है। निश्चित रूप से यह राम के छोटे भाई भरत हैं। रामायण काल में नृत्य संगीत की विकसित परम्परा थी, क्योंकि युद्ध के समय शत्रुघ्न ने अपने साथ नट नर्तकियों का दल भी ले गए थे। राजा दषरथ के देहान्त के बाद जब ननिहाल में भरत को बुरे स्वप्न आते थे, तो उनके नाना, केकय अनेकों संगीतज्ञों और नर्तकियों के द्वारा उनका मनोरंजन किया करते थे।

मनुष्यों की तरह राक्षसों में भी संगीत का उतना ही महत्त्व था। रावण स्वयं एक विद्वान और शास्त्रकार था। जिसने 'शिव ताण्डव' को अपने शब्दों में पिरोया। रावण पत्नी मन्दोदरी तथा अन्तःपुर की अन्य स्त्रियाँ भी गायन और नृत्यकला में निपुण थी। राक्षस कुल में भी विभिन्न उत्सवों, राज्याभिषेकों, विवाहोत्सवों, जन्मोत्सवो आदि पर राक्षस स्त्रियाँ भी इस कला का प्रदर्शन करती थी। इनके राज महल में नाट्यशालाएँ भी होते थे। इस काल में वर्ग विशेष नहीं बल्कि संभ्रात धर के स्त्री-पुरुष भी संगीत नृत्य का प्रदर्शन करते थे। स्वयं रावण शिव को रिझाने के लिए ताण्डव का प्रदर्शन करता था। सारांश यह है कि रामायण काल संगीत, नृत्य, चित्रकला आदि कलाओं का विकसित काल था।

संदर्भ सूची

1. रामायणकालीन संस्कृति-व्यास पृ -4
2. रामायण 1/181
3. अयोध्याकाण्ड पृ -104/48
4. रघुवंषम् कालिदास 1012
5. नाररूप (प्र संपा) प्रेमलता. ार्मा, श्री कला संगीत भारती
6. योग दर्षन पं श्री राम. ार्मा,
7. योगविद्या स्वामी गुरूकृपानन्द सरस्वती
8. प्राचीन भारत के कलात्मक विनोद, पृ -106 हजारी प्रसाद
9. पूर्वमेध-कालीदास

भगवान श्री राम के जीवन प्रबन्धन सूत्र

डॉ0 अरविन्द कुमार

स0 आचार्य (संगीत विभाग)

मगध महिला महाविद्यालय, पटना विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर

श्री रजनीश विश्वकर्मा

शोधार्थी

बी0 आर0 ए0 बिहार विश्वविद्यालय, पटना

हम भारतीयों को इस बात पर गर्व होना चाहिए कि हमारी सभ्यता लगभग 10000 वर्षों से भी अधिक और पृथ्वी पर सबसे पुरानी सभ्यता है। भारतीय जन मानस में राम हमारी आस्था के ही नहीं हमारी अस्मिता के भी प्रतीक हैं, किन्तु पूर्वाग्रह पूर्व चिन्तन ने उन्हें भी इतिहास पुरुष के स्थान पर कवि की कल्पना की सृष्टि बतलाने का असफल प्रयास किया।

सदियों से भगवान राम की कथा भारतीय संस्कृति में रची बसी है, मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान राम का जीवन चरित्र लोगों को सही राह पर चलने की शिक्षा देता आ रहा है, लेकिन क्या भगवान से जुड़ी कहानी सिर्फ कथा है, क्या भगवान राम कल्पना है, आखिर हमारे पास भगवान राम के सच होने का क्या प्रमाण है इस बात को सफलतापूर्वक भुला दिया गया कि इतिहास प्रमाणों से परे भी होता है।

हिन्दू धर्म में राम, भगवान विष्णु के दस अवतारों में से सातवें माने जाते हैं राम का जीवन काल एवं पराक्रम महर्षि वाल्मीकि द्वारा रचित संस्कृत महाकाव्य रामायण के रूप में लिखा गया है। उन पर तुलसीदास ने भी भक्ति काव्य श्री रामचरित मानस रचा था। राम चन्द्र हमारे आदर्श पुरुष हैं।

ज़िन्दगी में अगर कुछ कर गुज़रने की तमन्ना रखते हैं तो हर समस्या के समाधान के लिए बेहतर प्रबन्धन आज़माना चाहिए भगवान श्री राम ने यह आज़माया और वे सफल हुए। दरअसल उन्होंने एक सफल प्रबन्धन के जरिए यह सब कुछ हासिल किया। एक कामयाब प्रबन्धक में कुछ विशेषताएं होती है जैसे लक्ष्य, उसे पाने का ढंग यानि मूल्य और रणनीति, विश्वास, प्रोत्साहन, श्रेय, उपलब्धता और पारदर्शिता भगवान श्री राम में ये सभी थीं।

राम का लक्ष्य था सत्य और न्याय का शासन स्थापित करना, इसके लिए उन्होंने जो मूल्य चुने उनमें पिता की आज्ञा का हृदय से पालन, शबरी और केवट के सामाजिक समानता थी। श्री राम एक सकारात्मक प्रेरक व्यक्ति थे जिन्होंने हनुमान को उनकी शक्तियां याद दिलाने में एक प्रेरक की भूमिका निभाई थी।

श्री राम कूटनीतिज्ञ भी थे वह देश, काल, वातावरण और विभिन्न परिस्थितियों को ध्यान में रखकर कोई फैसला किया करते थे दरअसल कूटनीति एक ऐसा अस्त्र है जिससे बिगड़ती हुई बात का विवेकपूर्ण समाधान प्राप्त किया जा सकता है, राम ने अपने जीवन में कूटनीति को प्रबन्धन से जोड़कर पेश किया था।

भगवान राम विषम परिस्थितियों में भी नीति

सम्मत रहे। उन्होंने वेदों और मर्यादा का पालन करते हुए सुखी राज्य की स्थापना की। स्वयं की भावना व सुखों से समझौता कर न्याय और सत्य का साथ दिया फिर चाहे राज्य त्यागने, बालि का वध करने, रावण का संहार करने या सीता को वन भेजने की बात ही क्यूं न हो। राम का संयमी होना माता कैकेयी की उस शर्त का अनुपालन था जिसमें उन्होंने राजा दशरथ से मांग की थी-

तापस वेष विसेषि उदासी।
चौदह बरिस राम बनवासी।।

माता सीता को त्यागने के बाद राजा होते हुए भी सन्यासी की भांति जीवन बिताना उनकी सहनशीलता का पराकाष्ठा है।

वर्तमान सन्दर्भों में भी मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्री राम के आदर्शों का जनमानस पर गहरा प्रभाव है त्रेता युग में भगवान श्री राम से श्रेष्ठ कोई देवता नहीं उनसे उत्तम कोई व्रती नहीं कोई श्रेष्ठ योगी नहीं कोई उत्कृष्ठ अनुष्ठान नहीं। उनके महान चरित्र की उच्चवृत्तियां जन मानस को शांति और आनंद उपलब्ध कराती है। सम्पूर्ण भारतीय समाज के जरिए एक समान आदर्श के रूप में भगवान श्री राम को उत्तर से लेकर दक्षिण तक सम्पूर्ण जनमानस ने स्वीकार किया है। उनकी तेजस्वी एवं पराक्रमी स्वरुप भारत की एकता का प्रत्यक्ष चित्र उपस्थित करता है।

परिदृश्य अतीत का हो या वर्तमान का जनमानस ने राम जी के आदर्शों को खूब समझा-परखा है राम जी का पूरा जीवन आदर्शों, संघर्षों से भरा पड़ा है राम सिर्फ एक आदर्श पुत्र ही नहीं एक आदर्श पति और भाई भी थे जो व्यक्ति संयमित मर्यादित और संस्कारित जीवन जीता है, निःस्वार्थ भाव से उसी में मर्यादा पुरुषोत्तम राम के आदर्शों की झलक परिलक्षित हो सकती है राम के आदर्श लक्ष्मण रेखा की उस मर्यादा के समान है जो लांघी तो अनर्थ ही अनर्थ और सीमा की मर्यादा में रहे तो खुशहाल और सुरक्षित जीवन।

विज्ञापन के इस युग में राम के चरित्र से सीख लेनी चाहिए कि बिना प्रचार के शांतिपूर्वक हम अपने लक्ष्य की ओर बढ़े, क्योंकि आने वाली पीढ़ी नींव को याद रखेगी न कि प्रचार को।

कथक और राम

कुमारी रक्षा सिंह

आनंद की चरम-सीमा नृत्य है और नृत्य की चरम सीमा भक्ति। अर्थात् जब मन आनंद की पराकाष्ठा पर पहुँचता है तो शरीर नाच उठता है और जब नृत्यकार का शरीर नृत्य में लीन हो जाता है तो भक्ति रस की उत्पत्ति होती है और भक्ति करने के लिए राम नाम श्रेष्ठ है। राम वह नाम है जिसका जप करने से, नित्य स्मरण करने से सभी दुखों से मुक्ति मिल जाती है। राम शब्द का अर्थ है - मनोहर, विलक्षण, चमत्कारी, पापियों का नाश करने वाला व भवसागर से पर उतारने वाला। राम एक संस्कृति है, एक सभ्यता है। भारतवर्ष के लोग अपनी इसी संस्कृति-सभ्यता का युगों-युगों से अनुसरण करते आ रहे हैं।

मानव सभ्यता के विकास में नृत्य का स्थान बहुत महत्वपूर्ण है। भारतीय नृत्य दो प्रकार के होते हैं - शास्त्रीय और लोक। शास्त्रीय नृत्य शैलियों में कथक नृत्य उत्तर भारत का एक मात्र शास्त्रीय नृत्य है। कथक शब्द का उल्लेख अनेक प्राचीन ग्रंथों में पाया जाता है, जिससे हमें पता चलता है कि कथक एक प्राचीन नृत्य है। जिसकी परम्परा रामायण काल से चली आ रही है। आदि कवि वाल्मीकि ने प्रभु रामचन्द्र जी के दोनों पुत्रों (लव-कुश) के द्वारा रामायण की कथा रामचन्द्र जी के सम्मुख गाकर प्रस्तुत की थी।

मान्यता यह भी है कि लव-कुश से शुरू हुई कथा वाचन की परंपरा को आगे ले जाने वाले कीर्तनकार 'कुशीलव' कहलाये। ये कथाकार अपनी कथा को रोचक बनाने के लिए आवश्यकता के अनुसार अभिनय और पद-संचालन के साथ अंग-भंगिमाओं का भी प्रयोग करते थे। इसी परम्परा को आगे बढ़ाने वाले कलाकारों को अलग-अलग जगहों पर अलग-अलग नामों से जाना गया। जैसे अयोध्या से जुड़े पारंपरिक नर्तक स्वयं को 'कथिक' कहते थे। राजस्थान में उनके लिए कत्थक शब्द का प्रयोग हुआ। कथक शब्द के लिए सूत्र वाक्य कहा जाता है कि -

''कथा कहे सो कथक कहावे'' अर्थात् कथा कहने वाला कथक कहलाता है।ये कथाकार अपने कथन को आकर्षक बनाने के लिए उसमें गायन-वादन व अभिनय का भी समावेश करते थे ताकि वह कोरा भाषण या प्रवचन न लगे बल्कि संगीत-नृत्य से सुसज्जित होने के कारण हर आम और खास को आकर्षक प्रतीत हो। कत्थक जाति के लोग ब्राह्मण जाति के एक ऐसे विशेष लोग होते थे जो रामायण-महाभारत और पौराणिक कथाओं को अपने कथा वाचन के माध्यम से सामान्य जन तक पहुँचाते थे।

समय बदला और नृत्यों की रूपरेखा भी। आज के कथन का स्वरूप भी बदला है परन्तु पौराणिक कथाओं को भजन, कीर्तन व पद के माध्यम से मंच पर प्रस्तुत करने का चलन आज भी है। गीत अथवा कथानकों को मुखाभिनय, हस्त-मुद्राओं द्वारा दर्शाना नृत्य के अंतर्गत आता है जो कथन का एक अभिन्न व महत्वपूर्ण अंग है।

जैसा कि हम जानते हैं भारत की सभी नृत्य शैलियां मंदिरों से जन्मी हैं। कथक भी अपवाद नहीं है। इसीलिए आज भी इसमें धार्मिक गीतों पर भाव प्रदर्शित किया जाता है जैसे भजन, पद, दोहे, चौपाइयां इत्यादि। वैसे तो कलाकार अपने इच्छानुसार इनका चयन करते हैं परन्तु भक्ति और भजन के नाम से ही मन राम का गुणगान करने लगता है। रघुकुल में जन्में मर्यादा पुरूषोत्तम श्रीराम सौन्दर्य, सात्विकता, वीरता, पराक्रम और आदर्शवाद के प्रतीक हैं। इसीलिए राम कथक सहित सभी नृत्य शैलियों के प्रिय पात्र हैं। कथक नर्तक-नर्तकियों ने अपनी अभिनय प्रतिभा का परिचय देने के लिए राम के चरित्र को चुना है। जैसे जब किसी पुरूष पात्र की सुन्दरता का वर्णन करना हो तो वह तुलसी के राम से बेहतर नहीं हो सकता। सोलह कला सम्पूर्ण होने के बावजूद कृण यहाँ पीछे रह जाते हैं।

श्रीराम चंद्र कृपालु भज मन हरण भव भय दारूणम्।
नव कंज लोचन कंज मुख कर कंज पद कंजारूणम्।।

अर्थात् हे मन कृपालु श्रीरामचन्द्र जी का भजन कर। वे संसार के जन्म-मरण रूपी दारूण भय को दूर करने वाले हैं। उनके नेत्र नव-विकसित कमल के समान हैं। मुख-हाथ और चरण भी लाल कमल के सदृश हैं।

इसीलिए तुलसी अनूपमेय राम के विषय में अपने एक अन्य भजन में ये भी कह देते हैं -

रघुवर के छवि के समान रघुवर छवि बनिया।

अर्थात् राम की जो छवि है वह राम की ही हो सकतीहै किसी और की नहीं। उस एक छवि में ही नृत्यकार अनेक भावों ओर रसों का निरूपण कर पाते हैं। जैसे तुलसीदास के शब्दों में श्रृंगार रस का वर्णन इस प्रकार हुआ है -

कंदर्प अगणित अमित छवि नव नील नीरद सुंदरम्।
पट पीत मानहुं तड़ित रूचि शुचि नौमि जनक सुतावरं।।

अर्थात् - उनके सौन्दर्य की छटा अगणित कामदेवों से बढ़कर है। उनके शरीर का रंग नील-सजल मेघ के जैसा सुन्दर है। पीताम्बर धारी मेघरूप शरीर मानो बिजली के समान चमक रहा है। ऐसे पावनरूप जानकीपति श्रीराम जी को मेरा नमन।

तुलसी अपनी एक रचना में राम की सुंदरता का वर्णन इस प्रकार भी करते हैं -

लोचन अभिरामा तनु घनस्यामा निज आयुध भुज चारी।
भूषण वनमाला, नयन बिसाला शोभासिंधु खरारी।।

अर्थात् - उनकी आँखें सुन्दर हैं, शरीर मेघ के समान श्यामवर्णी हैं, चारो भुजाओं में उनके अस्त्र-शस्त्र हैं और वनमाला से जिन्होंने अपना श्रृंगार किया है और जिसकी शोभा समुद्र के समान विशाल है।

लेकिन राम सिर्फ सुंदर और मनोहारी ही नहीं हैं वे महापराक्रमी और वीर भी है। तुलसी की इन पक्तियों में जहाँ उनकी सुन्दरता का वर्णन है वहीं उनकी वीरता का भी। नर्तक-नर्तकियों के लिए एक के बाद दूसरे रस का तुरंत निरूपण करना चुनौतीपूर्ण होता है, लेकिन राम की कृपा से वे कर ही लेते हैं। जैसे तुलसी की अगली पंक्ति में वीर रस का उदाहरण इस प्रकार है -

शिरमुकुट कुण्डल तिलक चारु उदारु अंग विभूषणं।
आजानुभुज शरचापधर संग्राम जित खरदूषणं।।

अर्थात - जिसके मस्तक पर रत्न जड़ित मुकुट, कानों में कुण्डल, भाल पर तिलक और प्रत्येक अंग में सुन्दर आभूषण सुशोभित हो रहे हैं। जिनकी भुजाएँ घुटनों तक लम्बी हैं। जो धनुष-बाण लिए हुए हैं, जिन्होंने संग्राम में खर-दूषण जैसे महा बलशाली योद्धाओं को उनकी भारी सेनाओं सहित मार गिराया है।

यद्यपि वात्सल्य रस के लिए सूरदास ने कृण की अनेक लीलाओं का वर्णन किया है लेकिन कृण जहाँ नटखट और शरारती हैं, इसीलिए यशोदा और गोपियां उन पर गुस्सा भी करतीं हैं वहीं राम नटखट होने बावजूद किसी को परेशान नहीं करते। तुलसी ने उनके बाल्यपन का चित्रण करते हुए लिखा है-

किलकि-किलकि उठत धायगिरत भूमि लपटाय।
धाय मात गोद लेत दशरथ की रनियाँ ।।

अंचल रज अंग झारिविविध भांति सो दुलारि ।
तन मन धन वारि-वारि कहत मृदु बचनियां ।।
मोदक मेवा रसाल, मनभावे सो लेहु लाल ।
और लेहु लाल पान कंचन झुनझनियां ।।

राम के विभिन्न चरित्रों के माध्यम से कथक नर्तकों ने गत-भाव आदि के सहारे विभिन्न भावों के रसों का प्रदर्शन करते हुए अपने नृत्य को एकरसता से भी बचाया है और अपने नृत्य को और अधिक आकर्षक भी बनाया है।

कत्थक नर्तक-नर्तकियों ने रामायण के विभिन्न प्रसंगों के माध्यम से राम के विभिन्न चरित्रों को जीया है। वे वीर और मर्यादा पुरूषोत्तम होने के बावजूद एक विहवल् पति के रूप में भी चित्रित किये गऐ हैं। पुष्पवाटिका में सीता के आगे वे अपना मन हार जाते हैं तो रावण द्वारा सीता हरण के बाद वे अपना धैर्य खो बैठते हैं और पशु-पक्षियों से सीता का पता पूछने लगते हैं। तुलसीकृत रामायण में इस प्रकार वर्णन है -

हे खग मृग हे मधुकर श्रेणी।
तुम देखी सीता मृगनयनी।।

और, एक बार तो उनका विरही मन छोटे भाई लक्ष्मण से भी अपनी विरह-व्यथा कह उठता है -

घन घमंड गरजत घनघोरा।
प्रिया हीन डरपर मन मोरा।।

कथक नर्तकों ने राम को परब्रह्म परमेश्वर के रूप में भी चित्रित किया है जो पापियों का संहार भी करते हैं और भक्तों को भवसागर से पार भी। वे ही अलग-अलग रूप धारण कर कभी गज को ग्राह (मगरमच्छ) से बचाते हैं तो कभी द्रौपदी की लाज बचाते हैं, प्रहलाद की रक्षा करते हैं, तो कभी अहिल्या का उद्धार भी। कभी जटायु को मोक्ष देते हैं तो कभी गोवर्धन धारण कर इन्द्र के प्रकोप से ब्रज को बचाते हैं।

महान् कथक नर्तक महाराज बिन्दादीन जी की एक भक्ति रचना में इनमें से कुछ प्रसंगों का सुंदर चित्रण हुआ है -

ऐसो राम हैं दुख हरण
खेंच द्रौपदी को दुशासन, चीर लाग्यो हरण,
खेंच हारो चीर बाढ्यो, सांस लाग्यों भरन।
ऐसो राम हैं दुख हरण
कोप के जब इंद्र मूसल-धार लाग्यो भरन,
सप्तदिन ब्रज रक्षा कीन्हों, नख पे गिरवर धरण।

यहाँ यह कहना गलत नहीं होगा कि संगीत नृत्य मय कथा कहने की परंपरा मूलतः राम से ही शुरू होती है। भले ही रासलीला से कथक नृत्य का शिल्प पनपा हो लेकिन संगीत नृत्य के माध्यम से पहली जो कथा कही गयी वह राम की ही थी, और जिनके लिये कही गयी वे भी राम ही थे।

इसलिए राम और कथक की अभिन्नता को बिल्कुल भी नहीं नकारा जा सकता है, बावजूद इसके कि राम की कथा को सभी नृत्य शैलियों ने कहा है, सबने गाया है, सबने नाचा है।

इसीलिए - तो

सिया राम मय सब जग जानी ।
करहुं प्रनाम जोरि जुग पाणि ।।

मैथिली लोकगीतों में राम

डॉ0 रीता दास

विभागाध्यक्ष, संगत विभाग, जे0डी0 वीमेन्स कॉलेज, पटना

लोकगीत मूलतः अपने क्षेत्र की मिटटी की सुगंध लिए होती है। लोकजीवन में स्थित सामाजिक एवं धार्मिक भावना इन गीतों के माध्यम से अत्यन्त आकर्षक ढंग से अभिव्यक्त होती हैं। लोकगीत वस्तुतः भावों का उल्लसमय संगीत होता है। लोकगीतों में धर्म और संस्कृति के आधारभूत स्वरूप को अत्यन्त सरलतापूर्वक व्यक्त किया जाता है।

भारतीय वांगमय में रामकाव्य एवं कृष्णकाव्य की प्रधानता रही है। वस्तुतः मैथिली साहित्य विशेषतया कृष्ण काव्य के सुकुमार भावना से ही ओत प्रोत रहा है। बावजूद इसके कृष्ण संबंधी साहित्य के साथ ही समाज में चारित्रिक आदर्श की प्रतिष्ठा के लिए एवं मनुष्य को कर्तव्य मार्ग पर आरूढ़ कराने के लिए भारत में रामकथा लिखने एवं पढने की प्राचीन परम्परा है। अतः रामकाव्य की संख्या अनगिनत है। संस्कृत, अवधी, हिन्दी के साथ-साथ भारत के विभिन्न क्षेत्रीय भाषाओं जैसे मराठी, बंगला, उड़िया, आसामी, तमिल, तेलगु, कन्ड, कोंकणी, पंजाबी के साथ बिहार की मैथिली, मगही एवं भोजपुरी भाषाओं में अनगिनत रामाख्यान लिखी गयी है।

प्रस्तुत आलेख में मैथिली लोकगीतों में रामकथा के वर्णनों की चर्चा की गयी है।

मैथिली साहित्य में राम काव्य की अवधारणा भी सहज स्वाभाविक रूप से हुयी है। फलस्वरूप कवीश्वर चन्दा झा का मिथिला भाषा रामायण, अत्यन्त लोकप्रिय हुआ। इसके बाद कविवर लाल दास ने सीता के शक्तिरूपा रूप की अवधारणा करते हुए 'रामेश्वर चरित मिथिला रामायण' नामक ग्रंथ की रचना की। इस रचना के माध्यम से उन्होंने यह प्रमाणित किया कि राम के आदर्श व्यक्तित्व एवं लाकोत्तर महिमा के कारण ही राम का रमेश्वर तत्व अर्थात सीता का स्वामित्व है। वैसे इस प्रकार के शक्ति कीर्तन को कुछ नया नहीं कहा जा सकता। क्योंकि "स्त्रियः समस्ता सकला जगत्सु" के आलोक में शंकराचार्य की उदधोषणा सर्व विदित है कि "कपोलो भूतेशो भजति जगदीशैक पदवीं भवानि त्वत्पाणिग्रहण परिपाटी फलमिदम्" सर्वत्र आधारभूता जगतस्त्वमेका 'सिद्ध प्रसिद्ध है और इसीलिए मिथिला के प्रसिद्ध कवि लाल दासजी ने लिखा है कि–

"मूलप्रकृति लक्ष्मी जनिक, सीतारूप प्रधान।
तनिक नाम जपि पाब वर, दुहु लोकक कल्याण।।

वस्तुतः शक्तिस्वरूपा जगज्जननी जानकी सीता का राम के बिना कल्पना ही नहीं की जा सकती है। यही कारण है कि कवि सीताराम झा श्याम रचित 'अम्बचरित', वैद्यनाथ मल्लिक का 'विधुक सीतायन', काशीकान्त मिश्र मधुप की रचना 'राधाविरह', आदि रचनाओं में शक्ति की महत्ता को मुक्त कंठ से स्वीकार किया गया है।

भारतीय संस्कृति में भगवान श्रीराम की परिकल्पना तथा शक्तिस्वरूपा सीता के संदर्भ में कवि खडगबल्लभ दास द्वारा रचित 'सीताशील' का महत्व और भी अधिक बढ जाता है। भारतीय स्त्रियों के आदर्श की प्रतीक सीता की चरितगाथा किसी के लिए भी आकर्षण की वस्तु हो सकती है। इसीलिए खडगबल्लभ दासजी ने लिखा है कि –

अछि भेल अभिलाषा परम नारीगणक हित किछु लिखी।
पावन चरित्रक पद्यपुष्पक हार गॉथक किछु लिखी।।
आदर्श पुरूषक प्रेमिका कें चरित शुभ लिखैत छी।
उपदेश नारी लेल सीताशील मध्य पबैत छी।।

यथार्थतः मर्यादा पुरूषोत्तम की सती साध्वी पति परायणा, शील की प्रतिमूर्ति, प्रातः स्मरणीया सीता के चरित्र एवं उनकी शक्ति की महत्ता को द्योतित करते हुए तिमिराच्छन्न वातावरण में प्रकाश स्तम्भ का कार्य करती है। मिथिला की बेटी सीता

अमर हैं सम्पूर्ण भारत में सीता एकमात्र आदर्श नारी के रूप में सर्वोपरि हैं। सीता कुवधू होकर भी शस्त्र और शास्त्र का ज्ञान रखती हैं। अपनी सन्तान को उन्होंने वीर-धीर और साहसी बनाया। कवि बाल्मिकि ने उनकी साधना और तपस्या को देखकर ही रामायण की रचना की थी इसके अतिरिक्त मैथिली लोक गीतों में भी राम-सीता का वर्णन बहुत ही सहजता के साथ किया गया है।

वस्तुतः लोकगीत के दो प्रकार हैं। पहला वार्तिक यानी नैरेशन दूसरा गीत्यात्मक यानी लिरिकल। वार्तिक-गीत के अर्न्तगत हमारे भारतीय धार्मिक नायकों जैसे राम एवं कृष्ण के जीवन को गीतात्मक रूप में वर्णित किया जाता है। ये लोकगीत समाज की उपज होते हैं। ये स्वाभाविक, स्वच्छन्द और आनन्ददायी होते हैं। ये लोकगीत वस्तुतः लोकजीवन की सुरूचिता,सौन्दर्यात्मक स्वर, उनकी आध्यात्मिक अपूर्वता, उनकी भावनात्मक सम्मपन्नता, उनकी कलात्मक अनुपमता, उनकी मनोरम चपलता में मूर्तिमान होती है। मैथिली लोकगीतों में गीतात्मक रूप के अतिरिक्त गीतों के वार्तिक शैली का भी रूप मिलता है। जैसे राम जन्म से लेकर जेनउ, राम-विवाह, राम-वनगमन, सीता वियोग, राम-रावण युद्ध आदि का बहुत ही सुन्दर चित्रण मिलता है। उदाहरण के लिए राम के राजतिलक के लिए गीत है -

रामचन्द्र के तिलक करै लै।
आज्ञा मांगल गुरूवर के।।
कहथि नृपति गुरू बशिष्ठ सँ।
राम भेलन्हिं सब लायक हे।

भरतीय समाज के परिवारों में वेटी-विवाह एक बहुत बड़ी समस्या है। यह कार्य एक यज्ञ के रूप में कार्यान्वित किया जाता है। लोक जीवन इस यज्ञ को गीतों के माध्यम से व्यक्त करते हैं। खडगवल्लभ दासजी ने पुष्प वाटिका का वर्णन करते हुए लिखा है कि सीता को देख राम कहते हैं" भेलनि सिया-

मुख चन्द लखि रामकनयन-चकोर कें।
आनन्द जहिना होइन वारिद देखि प्रेमी मोर कें।।
सीता मुखक सौन्दर्य अनुपम मुग्ध कैलक राम कैं ।
तजि पुष्प तोड़ब करय लगला मधुर दर्शन वाम कैं।।

मान्यता है कि भगवान शिव ने पिनाक नामक धनुष राजा जनक को दिया था। जिसका अभिप्राय था कि जो इस धनुष को भंग करेगा वही सीता के संग विवाह का अधिकारी होगा। मैथिली गीतों में इस तथ्य को कुछ इसप्रकार व्यकत किया गया है कि सीता को देख पिता जनक चिन्तित हैं कि सीता तो ब्याह करने योग्य हो गयी है। अतः अपनी बेटी सीता की गुणवत्ता देख राजा जनक ने स्वयं शिव से प्राप्त पिनाक धनुष को ऑगन को गोबर से लिपवा कर रखा और यह प्रण किया कि जो राजा इस धनुष भंग कर सकेगा उसी से सीता का विवाह किया जाएगा। राजा जनक की इस प्रतिज्ञा को सुनकर कई देशों के राजा, राम-लक्षमण सहित जनकपूर आए। सभी ने बारी-बारी से आगे बढकर धनुष को तोड़ने की कोशिश की। परन्तु कोई भी सफल नहीं हो पा रहे थे । यह देख कर राजा जनक चिन्तित हो उठे –

सीता के सकल देखि झखथि हेमन्त रिषी।
सीता भेली ब्याहन योग यौ।।
हरियर गोबर अंगना निपाओल।
धनुखा धएल ओंठगैल यौ।।
पिता जनक रिषी कयल कठिन व्रत।
राखि लिय प्राण पक्ष लाज यौ।

जनकपूर पधारे सभी राजाओं की यह दशा देखकर लक्ष्मण क्रोधित हो उठे। उन्होंने अपने भाई राम से आगे बढने को कहा। लक्ष्मण रूक रूक का उतावले हो रहे थे। राम ने उन्हें धैर्य रखने को कहा और अपनी बारी आते ही राम ने धनुष की प्रत्यंचा चढायी और देखते ही

देखते धनुष के दो टुकड़े हो गए। चारो ओर से जय जयकार होने लगी –मैथिली लोकगीत में इसे मंगल-गीत कहा जाता है।

(मंगल) –

आजु जनकपुर मंगल। भूप सब आएल हे।
लखन सहित श्रीराम। जनकपुर आएल हे।।
उंचे झरोखा चढि जानकी चहुं दिस चित बसु हे।
कियो नहीं एहि जग वीर पिता प्रण राखल हे।
कोपि उठल वीर लछुमन सूनू भईया रामचन्द्र हे।
हुकुम दिअ महाराज धनुष हम तोड़ब हे।
बिहुंसी उठल श्रीराम सुनु वीर लछुमन हे।
धड़ी एक धैरज बान्हूं धनुष हम तोड़ब हे।
धनुष तोड़ल श्रीराम दुन्दरि बाजल हे।
सब्द सुनल परसुराम धनुषा लए धवल हे।।

श्रीराम द्वारा धनुष भंग करने पर सीता संग विवाह सम्पन्न हुआ। मिथिला में प्रचलित विवाह गीतों में जिसप्रकार दूल्हें का प्रेमवश उपहास किया जाता है, वह इस गीत से स्पष्ट होता है कि राम-लक्ष्मण जैसे सुन्दर दूल्हे के पिता दशरथ एवं माता कौशल्या दोनों गोरे हैं, फिर दोनों भाई क्यों काले हैं –

राम लखन सन सुन्दर बर के जनि केओ पढिओन गारि यौ।
गोरे दशरथ गोरे कौसल्या भरत-राम कियै कारी यौ।।

विवाह समाप्त होने के बाद सीता की विदायी होती है। सीता अयोध्या के लिए विदा होती है तो सखियां कहती हैं कि इतने जतन से सीताजी को पाला-पोसा, बड़ा किया, आज उसे रघुवंशी ले जा रहे है। सभी जनकपुर-वासियों की आंखों से अश्रु की धारा बहती है 'बड़ रे जतन सँ सियाजी के पोसलहुं। सेहो रघुवंशी नेने जाय।। इसके अतिरिक्त राम वनगमन के भी कई गीत हैं। जैसे

राम-वनगमन –

चलला राम लखन अलबेला जंगल तीरे तीरे ना।
कोन गाछ तर आसन बासन कोन गाछ तर डेरा,
कोन गाछ तर बिहरति होइहें राम लखन अलबेला,
जंगल तीरे तीरे ना।।
कदत्ब गाछ तर आसन बासन। पिपरि गाछ तर डेरा,
आम गाछ तर बिहरति होइहें राम-लखन अलबेला,
जंगल तीरे तीरे ना
(2) जखन सुमंत्र अवधपुर ऐलन्हि, अवध नगर भेल अनाथ
पूछन्हिं अवध के सकल नर नारी, कतए गेला लखन आ राम।।
सीता सुकुमारि वन कोना रहती, वनक जीवन कठिन हिंसक जीव रहै अछि वन में, कोन विधि कटतन्हिं दिन।।

जंगल में सीता हरण के उपरान्त राम सीता को स्मरण करते हुए विलाप करते हैं कि भईया लक्ष्मण सीता को कौन हरण कर ले गया। जब मैं जंगल से वापस धर लौटता था तो सीता जल लेकर खड़ी रहती थी। इतने धनधोर-अंधेरे जंगल में दीप जलाओ,प्रकाश लेकर सीता को ढूढो। पूरा धर सूना पड़ा हैं। रावण क्यों सीता हर ले गया, इस जंगल में सीता कहाँ खो गयी है –

भईया लछुमन जानकी कौने हरि।
आनदिन आबि मड़ईया में पाबी। जल नेने सीता खड़ी।
भईया लछुमन जानकी कौने हरि।।
लेसु प्रहनाद हेरू में जंगल में। सूने पलंगा परी।।
भईया लछुमन जानकी कौने हरि।।
किए हरि लए गेल लेकापति रावण। किए बन भूली पड़ी।।
भईया लछुमन जानकी कौने हरि।।

जंगल में सबरी द्वारा श्रीराम को स्वयं चखकर बैर प्रदान करना –

जंगल जाए सबरी बैरलए अएलन्हि, सबरी धन्य भेली
प्रभू लए राखल जोगाए सबरी धन्य भेली
बैर के सबरी चिखि चिखि राखथि, सबरी धन्य भेली।।

इस प्रकार मैथिली लोकगीतों में विवाह गीत आज तक जन जीवन में प्रवाहित है। मिथिलांचल में विवाह का विधान इन गीतों के गायन के बाद ही सम्पूर्ण माना जाता है।

साहित्य में राम

डॉ0 रेखा दास

व्याख्याता, गायन विभाग, भारतीय नृत्य कला मंदिर, पटना

भारत की विभिन्न भाषाओं के साहित्य में रामकथा अनेक रूपों में प्रचलित रही है। एक अनुमान के अनुसार लगभग दो सौ रामायण का उल्लेख मिलता है, जो इस बात का प्रमाण है कि भारतीय जीवन प्रवाह के केन्द्र में राम सदियों से विद्यमान हैं। इस संदर्भ में मैथिलीशरण गुप्त का यह कथन सर्वथा उपयुक्त है –

हे राम तुम्हारा चरित स्वयं ही काव्य है।
कोई कवि बन जाय सहज सम्भाव्य है।।

इसमें दो राय नहीं कि उत्तर भारत में रामकथा का प्रचार-प्रसार तुलसीदास के रामचरित मानस से हुआ। जनमानस में राम एक आदर्श पुरूष के रूप में प्रतिष्ठित हैं। वैसे तुलसीदास से पहले कबीरदास ने भी राम की चर्चा की है। किन्तु कबीर के राम तुलसी से भिन्न हैं। कबीर स्वयं कहते हैं –

दशरथ सुत तिहु लोक बखाना।
राम नाम के परम है आना।।

यानी दुनियां राजा दशरथ के पुत्र के रूप में जिस राम को जानती है, उनका बखान करती है, कबीर के लिए उस राम का मतलब कुछ अलग है, वह दूसरा राम है। जाहिर है कबीर निर्गुण ब्रम्ह के उपासक थे इसलिए उनके राम दशरथ सुत नहीं , बल्कि स्वयं निर्गुण स्वरूप हैं। निर्गुण ब्रम्ह हैं। किन्तु व्यवहार में उसे सगुण निराकार मानकर उस राम से अपना संबंध कई रूपों में जाहिर करते हैं। कहीं दाम्पत्य भाव से कहते हैं – 'राम मेरा पियु मैं राम की बहुरिया', तो कहीं दास्य भाव व्यक्त होता है- कबिरा कुत्ता राम का मोतिया मेरा नॉव, गले राम की जेवरी जित खींचै तित जांव।

कहने का तात्पर्य कि कबीर के काव्य में जिस राम की चर्चा है वह प्रतीकात्मक है। वह कबीर का आराध्य तो है पर उसका कोई स्वरूप नहीं है। उस आराध्य के लिए कबीर कहते हैं – बिनु पग चलै सुनै बिनु काना, बिनु कर कर्म करै विधि नाना ।

लेकिन तुलसी का अपने आराध्य के सामने सिर तब झुकता है जब हाथ में धनुष बाण लेकर वे खड़े होते है – 'तुलसी माथा तब नवै, धनुष-बाण हो हाथ'। यह सगुण का साक्षात स्वरूप है। सम्पूर्ण रामकथा इस सगुण स्वरूप का ही आख्यान है। जीवन के सुख-दुख, संघर्ष-पीड़ा पराजय और जय-विजय का इसमें ऐसा सजीव चित्र है जो सदियों से जन मानस में रच बस गया है।

वैसे राम शब्द की व्यंजना भी इसकी पुष्टि करती है। जो सर्वत्र रमता है वही राम है। आध्यात्मिक अर्थ में वह सृष्टि के कण-कण में रमता है। उसकी विद्यमानता सर्वत्रा है। उसकी अनुभूति दीपक के प्रकाश की तरह है, जिससे भीतर और बाहर चारो तरफ उजाला फैल जाता है। इसलिए तुलसी कहते हैं –

राम नाम मणि दीप धरू जीह देहरी द्वार।
तुलसी भीतर बाहरो जो चाहत उजियार।।

इस प्रकार तुलसीदास ने उत्तर भारत के जनमानस को राममय बनाने में बड़ी भूमिका निभायी। लेकिन वे राम का स्वरूप अंकित करने में सर्वथा स्वतंत्र नहीं थे। प्रो0 विष्णुकान्त शास्त्री अपने एक निबन्ध 'तुलसीदास के राम' में लिखते हैं –

"एक तरफ उन्हें बाल्मीकि रामायण से राम का पुरूषोत्तम रूप प्राप्त हुआ था जो समस्त मानवोचित

गुणों से युक्त था। बाल्मीकि के राम गाम्भीर्य में समुद्र, धैर्य में हिमालय, प्रियता में चन्द्रमा, क्रोध में कालाग्नि, क्षमा में पृथ्वी, त्याग में कुबेर और सत्य में धर्म के सदृश थे। दूसरी तरफ आध्यात्म रामायण से उन्हें ब्रम्ह राम की धारणा मिली थी। जिसका मानवीय रूप बहुत मर्मस्पर्शी नहीं था। पौराणिक परम्परा में दशरथ सुत राम को विष्णु का अवतार मानती थी। कबीर आदि भक्त सगुण साकार दशरथ सुत को ब्रम्ह या विष्णु का अवतार मानने से इन्कार करते थे। तुलसी ने राम संबंधी पूर्ववर्ती धारणाओं एवं कथाओं को इसप्रकार समेट लिया है कि सहसा यह प्रतीत ही नहीं होता कि इस प्रक्रिया में उन्होंने राम के रूप को स्थान स्थान पर अपना मौलिक सर्जनात्मक स्पर्श देकर उसे पहले से बहुत बदल दिया है, कहीं अधिक उदात्त, करूण, कोमल और मानवीय बना दिया है।" (तुलसी के हिय, हेरि, पृष्ठ सं0 32-33, लाकभारती प्रकाशन,ईलाहाबाद, प्रथम संस्करण 1990) इन्हीं उदात्त गुणों के कारण राम पुरूषोत्तम राम कहलाते हैं।

तुलसीदास ने राम की महिमा का बार-बार उल्लेख किया है। उनका मानना है कि राम का नाम उनके निर्गुण-सगुण दोनों रूपों से श्रेष्ठ है। इसलिए कि इसके उच्चारण मात्र से मनुष्य के सारे कलुष मिट जाते हैं। कलियुग में कर्म, भक्ति और विवेक में कमी आ जाती है। ऐसे में राम का नाम ही एकमात्र सहारा बनता है। तुलसी कहते हैं – नहिं कलि करम न भगति विवेकू।

राम नाम अवलम्बन एकू।।

तुलसीदास को विश्वास है कि राम की कृपा से सारे रोग दूर हो जाते हैं और वह कृपा राम का नाम जपने से ही मिलती है –

राम कृपा नासहिं सब रोगा
जौं इहिं भांति बनै संजोगा।।

इस दृष्टि से निर्गुण धारा और सगुण धारा दोनों में राम की श्रेष्ठता को लेकर एकमत है। कबीर कहते हैं –' गोविन्द के गुण बहुत हैं, लिखे जु हिरदै माहि' तो तुलसी का कहना है -' समुझि समुझि गुन ग्राम राम के उर अनुराग बढाउ। एकतरह से दोनों ही उनकी श्रेष्ठता के कायल हैं और मनुष्य जीवन की सार्थकता उनकी भक्ति में देखते हैं। इसीलिए उनके प्रति अनुराग बढाने की बात करते हैं।

मध्यकाल में तुलसीदास की तरह केशवदास ने भी राम के चरित्र को आधार बनाकर 'रामचद्रिका' की रचना की है। लेकिन रामचरित मानस की तरह जीवन की व्यापकता और गहराई के साथ-साथ भक्ति भावना का विनियोग उसमें नहीं है। वह एक श्रेष्ठ काव्यात्मक औदात्य से पूर्ण रचना होकर भी रामचरित मानस की लोकप्रियता नहीं छू सकी। फिर भी राम को केन्द्र में रखकर केशवदास ने रामकथा का आस्वाद कराया है, इसमें कोई संदेह नहीं।

दूसरी तरफ राम के व्यक्तित्व और चरित्र का आकर्षण मध्य काल के अनेक कवियों को अपनी ओर खींच रहा था, उसमें रहीम प्रमुख थे। वे अकबर के सेनापति बैरम खॉं के बेटे थे और अकबर के मंत्री भी थे। तुलसीदास से उनकी मित्रता थी। एकबार बादशाह से उनकी कुछ नाराजगी हो गयी। वे राजधानी छोड़कर चित्रकूट चले गए। ऐसा इसलिए कि अयोध्या छोड़कर राम भी वहां गए थे। अपनी इस भावना को रहीम ने व्यक्त किया –

चित्रकूट में रमि रहयो रहिमन अवध नरेस।

जापर विपदा पड़त है सो आवत यहि देस।।

इस्लाम को मानने वाले रहीम में राम के प्रति ऐसी निष्ठा इस देश की साझी संस्कृति की दुर्लभ मिसाल है।

रामकाव्य की यह परम्परा आधुनिक काल तक अप्रतिहत चलती आयी है। मैथिली शणगुप्त कृत 'साकेत', निराला की 'राम की शक्ति पूजा', केदारनाथ मिश्र प्रभात की 'कैकेयी', नरेश मेहता की 'संशय की एक रात' इसका उदाहरण है। इतना ही नहीं राम के उदात्त चरित्र ने साहित्य कि अलावा अन्य कला-विधाओं को भी प्रभावित किया है। संगीत, चित्रकला और मूर्तिकला में रामकथा विभिन्न प्रसंग में चित्रित किए गए है। भारत के प्रख्यात चित्रकार मकबूल फिदा हुसैन ने डा0 राममनोहर लोहिया की प्रेरणा से राम-कथा पर आधारित सैकड़ो चित्र बनाए थे, जिन्हें छठे दशक में धर्मवीर भारती ने 'हुसैनी रामायण' का नाम देकर धारावाहिक रूप में प्रकाशित किया था। इससे राम के नाम की महिमा और रामकथा की सार्वकालिक प्रासंगिकता का परिचय मिलता है।

राम एक व्यक्तित्व : रंग-मंच एवं जनमान्यताओं में श्रीराम की भूमिका

शिवानी चौरसिया

गायन विभाग
संगीत एवं मच कला संकाय
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

प्रभु श्रीराम की प्रतिष्ठा मर्यादा पुरूषोत्तम के रूप में है। राम ने मर्यादा के पालन के लिए राज्य, मित्र, माता-पिता यहाँ तक कि पत्नी का भी परित्याग किया। इनका परिवार आदर्श भारतीय परिवार का प्रतिनिधित्व करता है। यह सर्वमान्य है कि जब भी पृथ्वी पर संकट का आगमन हुआ है, तब-तब परमेश्वर ने धरा की रक्षा के लिए अपना अंश सवरूप पृथ्वी पर अवतरित किया है। निश्चय ही श्रीराम का अवतरण भी ऐसे ही किसी विशेष उद्देश्य पूर्ति के लिए ईश्वर की योजना का अंग रहा होगा। इस कथन की पुष्टि गोस्वामी तुलसीदासकृत 'श्रीरामचरितमानस' के श्लोक के द्वारा भी की जा सकती है-

जब-जब होई धरम कै हानि, बाढहिं असुर अधम अभिमानी।
तब-तब प्रभु धरि विविध सरीरा, हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा।।

अर्थात् जब-जब धर्म का ह्रास होता है अधर्मी, अभिमानी राक्षस बढ़ जाते हैं और वे ऐसा अन्याय करते हैं, तब-तब वे कृपानिधि प्रभु भाँति-भाँति के दिव्य शरीर धारण कर सज्जनों की पीड़ा हरते हैं।

भगवत् प्रार्थना से उद्धृत उपर्युक्त पंक्तियों में ईश्वर की आराधना व प्रार्थना का बोध हो रहा है। जहाँ सृष्टि में बढ़ रहे अधर्म, अभिमान एवं असंगतियों के समय में भगवान् क अवतरित होने तथा मानव-जाति को उन विभिन्न कष्टों से रक्षा प्रदान करने की कामना की गयी है। ऐसा ही वर्णन 'श्रीमद्भगवतगीता' के श्लोक से भी स्पष्ट होता है, जिसमें श्री कृण ने कहा है कि-

यदा-यदा ही धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।।

अर्थात् जब-जब भारत वर्ष में धर्म का विनाश होगा, तब-तब मैं सृष्टि की रक्षा करने के लिए पृथ्वी पर अवतरित होता रहूँगा।

उपरोक्त कथनों से यह स्पष्ट होता है कि जब भी मानव-समाज आक्रान्ताओं से पीड़ित और भयभीत होता है, एवं स्वयं को इन सबके बीच असहाय व कमजोर अनुभव करताा है, तब वह ऐसी आशा करता है कि कोई अतिमानव जिसमें मानव-चरित्र के सभी गुण विद्यमान हो वह आये और उनको रक्षा प्रदा करे। ताकि समाज में सुख व शान्ति विद्यमान रहे।

प्रभु श्री राम का व्यक्तित्व भी एक ऐसे ही उदात्त पुरूष का उदाहरण है। श्री राम का जनम प्राचीन भारत में हुआा था। उनके जन्म के विषय में अनेक भ्रांतियाँ विद्यमान हैं। वर्तमान में प्रभु राम का जंन्म रामनवमी के रूप में मनाया जाता है। बाल्यकाल से ही श्रीराम शान्त स्वभाव के थे। उन्होंने मर्यादाओं को हमेशा सर्वोच्च स्थान दियाा था। इसी कारण उन्हें मर्यादा पुरूषोत्तम राम के नाम से जाना जाता है। उनका राज्य न्यायप्रिय और

खुशहाल माना जाता था। इसलिए भारत में जब भी सुन्दर राष्ट्र की कल्पना की जाती है, तो सर्वप्रथम रामराज्य का उदाहरण दिया जाता है। राम के चरित्र में भारत की संस्कृति के अनुरूप पारिवारिक और सामाजिक जीवन के उच्चतम आदर्श पाए जाते हैं। उनमें व्यक्तित्वविकास, लोकहित तथा सुव्यवस्थित राज्यसंचालन के सभी गुण विद्यमान थे। उन्होंने दीनों, असहयों, संतों और धर्मशीलों की रक्षा के लिए जो कार्य किए, आचार व्यवहार की जो परंपरा कायम की सेवा और त्याग का जो उदाहरण प्रस्तुत किया तथा न्याय एवं सत्य की प्रतिष्ठा के लिए वे जिस तरह अनवरत प्रयत्नरत रहे, जिससे उन्हें भारत के जन-जन के मानस मंदिर में अत्यंत पवित्र और उच्च आसन पर विराजमान किया है। राम के पराक्रम सौंदर्य से भी अधिक व्यापक पवित्र और उच्च आसन पर विराजमान किया है। राम के पराक्रम सौंदर्य से भी अधिक व्यापक प्रभाव उनके शील और आचार-व्यवहार का पड़ा जिसके कारण उन्हें अपने जीवनकाल में ही नहीं, वरन् अनुवर्ती युग में भी ऐसी लोकप्रियता प्राप्त हुई जैसी शायद ही किसी व्यक्ति को प्राप्त हो सके। वे आदर्श पुत्र, आदर्श पति, स्नेहशील भ्राता और लोकसेवानुरक्त, कर्तव्यपरायण राजा थे। श्री राम प्रजा को हर तरह से सुखी रखना एक कुशल राजा का परम कर्तव्य मानते थे। उनकी धारणा थी कि जिस राजा के शासन में प्रजा दुःखी रहती है, वह नृप अवश्य ही नर्क का अधिकारी होता है। राम अद्वितीय महापुरूष थे। वे अतुल्य बलशाली, सौंदर्यनिधान तथा उच्च शील के व्यक्ति थे। जिन्होंने उत्कृष्ट चारित्रिक विशेषताओं के साथ ही धर्म का आचरण करते हुए समाज को अपनी न्यायप्रियता, वीरता, प्रेम, दया आदि विभिन्न विशेष गुणों से अभिसिंचित किया तथा समाज को धर्म व मर्यादा आदि का पालन करते हुए जीवन-पथ पर चलने की राह दिखाई।

यह तो सर्वविदित है कि समाज सुशिक्षित, शिक्षित और अशिक्षित जनों का समुच्चय होता है। अतः यह संभव नहीं है कि कोई भी साहित्य शत्-प्रतिशत व्यक्तियों द्वारा पढ़ा अथवा समझा जा सके। इसीलिए साहित्य के कथानक का रूपांतरण रंग-मंचों, गेय-पदों आदि के माध्यम से सर्वसुलभ कराने का प्रयास किया जाता रहा है।

भारत में प्रतिवर्ष आयोजित 'रामलीला' भी श्री राम के आदर्शों को रंग-मंच के माध्यम से जनता एक पहुचाने अथवा जन-सुलभ करवाने काा ही एक प्रयास है। भारत एक आध्यात्मक प्रधान देश है जिससे यह स्पष्ट होता है कि यहाँ जन-जन के हृदय में आध्यात्म वास करता है। रंग-मंच पर प्रस्तुति दे रहे कलाकारों द्वारा यह दिखाने का प्रयत्न किया जाता है कि मर्यादा पुरूषोत्तम श्री राम आज भी मानव समाज को यह संकेत प्रेषित कर रहे हैं कि मानव असहाय एवं अकेला नहं है अपितु एक अदृश्य सत्ता भी संसार में विद्यमान है जो आज भी मनुष्य को सत्य-पथ पर चलने के लिए प्रेरित करती है।

रामलीला उत्तर भारत में परंपरागत रूप से प्रस्तुत किया जाने वाला श्री राम के चरित्र पर आधारित नाट्य है। इसका कोई साक्षात प्रमाण तो नहीं है किन्तु ऐसा माना जाता है कि जब राम वनवास को चले गए थे तो चौदह वर्ष की वियोगावधि अयोध्या वासियों ने राम की बाल-लीलाओं का अभिनय करके बितायी थी, मान्यता है कि तभी से रामलीला का प्रचालन हुआ होगा।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य अथवा तत्कालीन समाज में श्री राम की भूमिका को समझने के लिए सर्वप्रथम गोस्वामी तुलसीदास कृत 'श्रीरामचरितमानस' की विवेचना करनी होगी जो महर्षि वाल्मीकि चरित 'रामायण' से प्रभावित महाकाव्य है। इसके लिए हमें भारत में तैमूर लंग से लेकर अकबर तक मुगल अक्रमणकारियों द्वारा उत्पीड़ित समाज पूर्णरूपेण भयाक्रांत एवं हतोत्साहित हो गया था। भारतीय समाज अपनी अस्मिता एवं भविष्य के प्रति आशंकित और निराश हो गया था। गोस्वामी तुलसीदास जी ने समाज की ऐसी दयनीय स्थिति देखी एवं उपरोक्त उद्धृत 'श्रीमभगद्गीता' के श्लोक की पुनस्थापना हेतु मर्यादा पुरूषोत्तम श्री राम के चुना एवंज न मानव में बोली जाने वाली भाषा 'अवधी' (मूलतः अवध क्षेत्र की भाषा) में 'श्रीरामचरितमानस' की रचना की, जिससे सामान्य जन इसका अध्ययन अपनी भाषा में कर सके तथा प्रभु राम के चरित्र द्वारा समाज में एक नवीन ऊर्जा का संचरण हो

सके। यह महाकाव्य लिखने का मुख्य कारण यह भी था कि मुगल आक्रमणकारियों के कारण देश में हिन्दूत्व की समाप्त होती पवित्रता को सुरक्षित एवं संवर्धित किया जा सके।

श्री राम की भूमिका रंग-मंच के द्वारा आज भी समाज में उसी प्रकार विद्यमान है। जिसका श्रेय गोस्वामी तुलसीदास जी को जाता है। आज भी श्री राम के जीवन-वृत्तांत समाज को दिशा प्रदान करने का कार्य कर रहे हैं तथा समाज की हताशा को समाप्त करके नयी उम्मीद प्रदान करने में सहायक सिद्ध हो रहे हैं।

रामलीला के मंच में प्रभु श्री राम के समग्र जीवन को समायोजित किया जाता है। जिसमें राजा मनु एवं रानी सतरूपा के पुत्रेष्टि तप, ब्रह्म का प्राक्टय, उनके द्वारा ब्रह्म को पुत्र रूप में पाने की कामना, ब्रह्म का त्रेता युग में उनके पुत्र रूप में जन्म लेने का आश्वासन, महाराज दशरथ का श्रृंगि मुनि से मिलना एवं उनसे यज्ञ की कामना करना, यज्ञ के याग का रानियों में वितरण, श्री राम व उनके तीन भाईयों का जन्म एवं बाल-लीलाएँ, महर्षि विश्वामित्र के साथ राम-लक्ष्मण का गमन, वन में राक्षस वध एवं ऋषियों को अभयदान, सीता-स्वयंवर, वनवास, राम व महाबली हनुमान जी का मिलन, बालि वध, सीता हरण, वानर सेना से सहयोग से रामेश्वरम् में सेतु बंध, लंका पर आक्रमण, राम-रावण युद्ध, रावण की पराजया, विभीषण का राज्याभिषेक, राम की अयोध्या वापसी और राम-राज्य की स्थापना तथा प्रजा के सुख-शांति प्रदान करना आदि वृत्तांतों एवं 'श्रीरामचरितमानस' की गेयात्मक्ता के साथ अशिक्षित मानव मन को भी आल्हादित, उत्प्रेरित एवं आत्मबल से सराबोर कर देता है। इसके साथ ही व्यक्ति मर्यादा पुरूषोत्तम श्री राम जैसे महान व्यक्तित्व के साथ होने की कल्पना से उल्लासित हो जाता है एवं नए उत्साह के साथ जीवन पथ पर अग्रसर हो जाता है।

प्रभु श्री राम आदर्श व्यक्तित्व की प्रतिमूर्ति हैं। चाहे पुरातन काल की बात हो अथवा वर्तमान परिप्रेक्ष्य, समाज एवं जनता ने श्रीराम के व्यक्तित्व को भली-भाँति आत्मसात किया है किन्तु श्रीराम के आदर्शों और सिद्धांतों को धूमिल करने का भी कार्य किया है। मर्यादा पुरूषोत्तम श्रीराम का जीवन संघर्षो से परिपूर्ण था। कहने का तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार कमल का पुष्प पंक अर्थात् कीचड़ से घिरा होने के बाद भी ओजस्वी एवं मोहक होता है तथा कीचड़ से सभी दोष से मुक्त होता है उसी प्रकार श्री राम का व्यक्तित्व उनके प्रकार के संघर्षों, उतार-चढ़ाव एवं विषमताओं में व्यतीत हुआ परंतु इन सबके बीच प्रभु राम का व्यक्तित्व उसी तरह से निखरता गया जिस प्रकार आग में तपने के बाद स्वर्ण में निखार आ जाये। अनेक विद्वानों ने श्रीराम को श्मर्यादापुरूषोत्तमश की संज्ञा दी है। अपने शील और पराक्रम के कारण भारतीय समाज में उन्हें जैसी लोकपूजा मिली वैसी संसार के अन्य किसी धार्मिक या सामाजिक जननेता को शायद ही मिली हो। भारतीय समाज में उन्होंने जीवन का जो आदर्श रखा, स्नेह और सवो के जिस पथ का अनुगमन किया, उनका महत्व आज भी सम्पूर्ण भारत में अक्षुण्ण बना हुआ है। वे भारतीय जीवन दर्शन और भारतीय संस्कृति के सच्चे प्रतीक थे। भारत के कोटि-कोटि नर-नारी आज भी उनके उच्चादर्शों से अनुप्राणित होकर संकट और असमंजस की स्थितियों में धैर्य एवं विश्वास के साथ आगे बढ़ते हुए कर्तव्यपालन का प्रयत्न करते हैं। उनके त्यागमय, सत्यनिष्ठ जीवन से भारत ही नहीं वरन् विदेशों के भी विद्वान जैसे-मैक्समूलर ए जोन्स, कीथ, ग्रिफिथ, बरान्निकोव आदि आकर्षित हुए हैं। उनके चरित्र से सम्पूर्ण मानवता गौरवान्वित हुई है। श्री राम के जीवन मूल्यों को यदि सामान्य व्यक्ति अपने जीवन में आत्मसात कर ले तो उसका सम्पूर्ण जीवन स्वर्ग की भाँति मनोरम हो जाये।

इस प्रकार सारांश के रूप में हम कह सकते हैं कि मंच कला, लोक-भाषा गीतों, गेय-पदों की प्रस्तुति व नाट्यों आदि के माध्यम से हम सरलतापूर्वक श्री राम के मर्यादा पुरूषोत्तम रूप, माता सीता के आदर्श एवं पवित्रता स्वरूप, भरत-लक्ष्मण-शत्रुधन के भातृ-प्रेम, उर्मिला की त्याग व निष्ठा, महाबली हनुमान की स्वामी भक्ति आदि उदाहरणों के द्वारा एक सकारात्मक संदेश जन-मानस में प्रवाहित करने के लिए प्रेरित होते हैं एवं समाज को एक सूत्र में पिरोये रखने में भी समर्थ रहते हैं।

रामकथा का न्यायिक पक्ष

डॉ0 कनक लता दुबे

संस्कृत- विभाग

जगत तारन गर्ल्स डिग्री कालेज, इलाहाबाद

महर्षि वाल्मीकि विरचित रामायण की रामकथा और श्रीराम भारतीय संस्कृति के अमृतमय स्रोत हैं। आदर्श की चरम पराकाष्ठा हैं। मानव जीवन का परम आदर्श हैं। इस कथा में राजा- प्रजा का परस्पर सम्बन्ध, ऋषियों-मुनियों का आदर्श, जन-जन की कार्यनिष्ठा, न्यायप्रियता, परस्पर सौहार्द के साथ अयोध्या नगरी का वैभव, उसकी मनोहारी छटा, जीव-जन्तु, वृक्ष- वनस्पतियों, नदियों-पर्वतों का सौन्दर्य, औषधियों का वर्णन सभी मानव मन को अभिभूत करते हैं। अपने सशक्त कथानक महाराज दशरथ और श्रीराम के धार्मिक एवं न्यायप्रिय कार्यो के कारण ही इस कथा का सम्पूर्ण विश्व में प्रचार-प्रसार है। महाभारत और पुराण में रामकथा का वर्णन है। संस्कृत के विभिन्न ग्रन्थ रामकथा पर आधारित हैं।[1] महाकाव्यों में रघुवंश, सेतुबन्ध, जानकीहरण, रामायणमञ्जूजरी आदि, नाटकों में प्रतिमानाटक, अभिषेकनाटक, महावीरचरित, उत्तररामचरित, अनर्घराघव, प्रसन्नराघव, कुन्दमाला, जानकीपरिणय आदि हैं। बौद्ध परम्परा के 'दशरथजातक' में तेरह गाथाओं में रामवनगमन का प्रसंग है। जैन परम्परा में रामकथा का अधिक वर्णन है। विमलसूरि एवं स्वयंभू का पउमचरिय रामकथा पर आधारित है। अनेक भारतीय भाषाओं की रामायण प्राप्त होती है—असमिया रामायण, बंगला रामायण, उडिया रामायण, नेपाली रामायण, मैथिली रामायण आदि। लोक साहित्य एवं लोक परम्परा में भी रामकथा का वर्णन है—भोजपुरी, अवधी, मगही, बुन्देली, उडिया, तेलुगु आदि। इसके अतिरिक्त विश्व में कहाँ- कहाँ रामकथा किस- किस रूप में वर्णित है, इसका विस्तृत विवेचन फादर कामिल बुल्के की पुस्तक 'रामकथा उत्पत्ति और विकास' में मिलता है।[2] हिन्दी भाषा में गोस्वामी तुलसीदास द्वारा विरचित 'रामचरितमानस' की रामकथा अत्यन्त लोकप्रिय हुई। ऐसी विश्वविश्रुत रामकथा का न्यायिक पक्ष अद्भुत है। सभी रचनाकारों ने रामकथा के उज्ज्वल पक्ष को अपने-अपने ढंग से वर्णित किया है। इसमें आसुरी प्रवृत्तियों का विनाश और आदर्शमय प्रवृत्तियों की स्थापना की गई है। निश्चय ही 'रामराज्य' की अवधारणा रामकथा के न्यायिक पक्ष को अभिव्यक्त करती है।

रामकथा का मूलाधार महर्षि वाल्मीकि का रामायण है। रामायण में वर्णित प्रसंग इसकी पुष्टि करते हैं। महर्षि वाल्मीकि के आश्रम में ही सीता के पुत्रों का जन्म वर्णित है।[3] महर्षि ने रामायण की रचना की थी। लव-कुश को सिखाया था। लव और कुश ने श्रीराम की सभा में रामायण का गान किया था।[4] वाल्मीकि रामायण की कथा पर ही यह शोधपत्र आधारित है। श्रीराम का वंश आदर्शात्मक है। इक्ष्वाकुवंशी राजाओं का चरित अनुकरणीय है। वैवस्वत मनु, इक्ष्वाकु, मान्धाता, हरिश्चन्द्र, सगर, भगीरथ, दिलीप, रघु, अज, दशरथ, राम आदि राजाओं का चरित्र अपने आदर्शमय कार्यो के द्वारा आज तक जीवित है। महाराज दशरथ, उनके अमात्यगण, ऋषि-मुनि, श्रीराम, भरत, लक्ष्मणादि सभी में उनकी

न्यायप्रियता के दर्शन होते हैं। न्याय शब्द का अर्थ है—उचित, सही, उपयुक्त, योग्य एवं न्यायसंगत आदि। न्याय द्वारा ही किसी भी राज्य में सुख-समृद्धि का साम्राज्य होता है। सबल दुर्बल को नही सताता है। दण्ड्य व्यक्ति ही दण्ड का पात्र होता है। अदण्ड्य कभी दण्ड का भागी नही होता है। न्याय को ही राजा का प्रभुख कर्तव्य माना गया है। राजा न्यायकर्ता के रूप में वर्णित है। अपने सत्कर्मो एवं धर्म का पालन करने वाला राजा ही सच्चा न्याय करने वाला होता है सम्पूर्ण रामायण धार्मिकता से परिपूर्ण है। इसमें धर्म का पूर्ण साम्राज्य हैं। राजा, प्रजा, मन्त्री, ऋषि- मुनि, श्रीराम आदि सभी धर्म में आस्था रखने वाले हैं। धर्म के पालक और संरक्षक है। इस लिए वे सब न्याय परक कार्यो को ही सम्पादित करते हैं। अयोध्यापुरी के समस्त नर, नारी, धर्मशील, संयमी प्रसन्न रहने वाले थे। वे लोग शील और सदाचार का पालन करते हुए महर्षियों की भाँति निवास करते थे।[5] राजा के हितैषी मन्त्रीगण नीति रूपी नेत्रों से देखने वाले थे। वे सब सदा सजग होकर रहते थे। [6] राजा दशरथ के मन्त्री शुद्ध आचार-विचार वाले थे। राजकीय कार्यो में संलग्न रहते थे। महाराज दशरथ के आठ मन्त्रियों का वर्णन है-घ्रष्टि, जयन्त, विजय, सुराष्ट, राष्ट्रवर्धन, अकोप, धर्मपाल और सुमंत्र।[7] इनके अतिरिक्त सुयज्ञ, जावालि, काश्यप, गौतम, दीर्धायु, मार्कण्डेय, कात्यायन, भी महाराज के मन्त्री थे।[8] ऋषिश्रेष्ठ वशिष्ठ और वामदेव महाराज दशरथ के माननीय ऋत्विज थे।[9] राजा के पूर्ववर्ती पूर्व परम्परागत ऋत्विज भी सदा मन्त्री का कार्य किया करते थे। वे सभी विद्वान, विनयशील, सलज्य, कार्य कुशल, जितेन्द्रिय, श्रीसम्पन्न, महात्मा, शस्त्रविद्या के ज्ञाता, सुदृढ़ पराक्रमी, यशस्वी, राजकीय कार्यो में सावधान रहने वाले, राजा की आज्ञानुसार कार्य करने वाले,तेजस्वी और कीर्तिमान थे।[10] महाराज दशरथ ऐसे श्रेष्ठ मन्त्रियों और ऋत्विकों के सान्निध्य में कार्य करते थे। महाराज दशरथ स्वयं सभी सदगुणों से युक्त थे। वे न्याय-प्रियता के साथ सभी कार्यो को किया करते थे। राजा दशरथ के मन्त्री व्यवहार कुशल थे, वे अपने पुत्र को भी दण्ड देने में हिचकते नहीं थे।[11] निरपराधी शत्रु की कभी भी हिंसा नहीं करते थे।[12] ब्राह्मण और क्षत्रियों को कष्ट नहीं देते थे। न्यायोचित धन से राजा का कोष भरते थे। अपराधी के बलाबल के आधार पर ही उसको तीक्ष्ण और मृदु दण्ड का विधान किया करते थे।[13] मन्त्री सदैव नीति रूपी नेत्रों से देखने वाले थे।[14] वे नीतिशात्र के विशेषज्ञ ज्ञाता थे।[15] ऐसे गुणज्ञ मन्त्रीयों के साथ राजा दशरथ अयोध्या में रहकर पृथ्वी पर न्यायपूर्वक शासन करते थे।[16] ऐसे न्यायप्रिय महाराज दशरथ के पुत्र श्रीराम भी अतिशय न्यायप्रिय थे। उनके जीवन के हर प्रसंग में उनका न्यायिक पक्ष दिखाई देता है। बालकाण्ड में ब्रह्मर्षि विश्वामित्र के साथ उनके यज्ञ रक्षार्थ श्रीराम-लक्ष्मण जाते हैं। विश्वामित्र जी के यज्ञ विध्वंसक राक्षसादि का वध करने में श्रीराम की न्यायप्रियता और ब्रह्मर्षि विश्वामित्र में प्रति उनका आदर सम्मान सभी व्यक्त होता है। श्रीराम ने यज्ञ विघ्वंसिनी तारका वध किया।[17] उन्होंने छः दिन और छः रात्रिपर्यन्त लगातार तपोवन की रक्षा की। इस बीच उन्होंने शयन तक नहीं किया।[18] मारीच को अपने वाणों से सौ योजन की दूरी पर फेक दिया।[19] यज्ञ विघ्नकर्ता, सुबाहु आदि अनेकों निर्दय, दुराचारी, पापकर्मी एवं रक्तभोजी राक्षसों को श्रीराम ने मारा।[20] इस समस्त वर्णन से स्पष्ट होता है कि श्रीराम को न्यायप्रिय था। इसीलिए उन्होंने ब्रह्मर्षि विश्वामित्र के यज्ञ विध्वंसक समस्त राक्षसों का विनाश किया। जिससे ब्रह्मर्षि अपने यज्ञ को विधिवत सम्पादित कर सके।

अयोध्याकाण्ड के 100 वें सर्ग में भरत सभी के साथ श्रीराम आदि को वापस अयोध्या लाने के लिए चित्रकूट जाते है। श्रीराम उस समय भरत से कुशल प्रश्न करते है।

अयोध्या की कुशलता जानने के बहाने वे भरत को राजनीति का उपदेश करते है। इस प्रसंग में श्रीराम की न्यायप्रियता अवलोकित होती है। श्रीराम ने अपने प्रसिद्ध कुल की प्रसिद्ध परम्परा एवं कुल की वृत्ति को पालन करने के लिए भरत को सलाह

दी है।[21] बहुत सारी न्यायपरक बातें कहने के पश्चात् अंत में श्रीराम ने धर्म के अनुसार दण्ड धारण करने वाले राजा के महत्व का वर्णन किया है।[22] इस प्रसंग में भी श्रीराम का न्यायिक पक्ष ही मुखर हुआ है।

श्रीराम के वन गमन के समय मार्ग में अनेकों प्रसंग उनके न्यायिक पक्ष को ही चरितार्थ करते है। ऋषियों मुनियों को पीड़ित करने वाले राक्षसों का विनाश, अत्याचारी विराध-वध, अपराधिनी शूर्पणखा का दण्ड, खर-दूषण सहित चौदह सहस्त्र राक्षसों का विनाश और त्रिशिरा वध आदि के प्रसंग से दुराचारी राक्षसों का विनाश करके बुराईयों को दूर किया है।

वाली वध के प्रसंग में सुग्रीव के प्रति वाली का अत्याचार, सुग्रीव के राज्य एवं उसकी पत्नी को छीनना आदि अनौचित्यपूर्ण आचरण के कारण श्रीराम वाली का वध करते है। सुग्रीव स्वयं वाली के अत्याचारों का वर्णन श्रीराम से करता है- मेरे बड़े भाई वाली ने मुझे घर से निकाल दिया हैं। मेरी पत्नी को भी छीन लिया, उससे आंतकित होकर मैं वन में इस दुर्गम पर्वत पर निवास करता हूँ।[23] परिणाम स्वरूप न्यायप्रिय श्रीराम ने वाली का वध किया।[24] अपने छोटे भाई को सताने और उसकी पत्नी को छीनने वाले अपराधी को श्रीराम ने उसके अपराध का समुचित दण्ड प्रदान किया।

रामकथा के प्रमुख आततायी रावण का वध[25] साथ ही उसके समस्त कुल का विनाश, एक अत्याचारी, अनाचारी के समुचित विनाश को दिखाता है। यहाँ भी श्रीराम का न्यायिक पक्ष पुष्ट होता है। रावण वंश का विनाश करने के पश्चात् श्रीराम ने रावण के धर्माचरण करने वाले भ्राता विभीषण को लंका का राजा बनाया। श्रीराम की आज्ञा से लक्ष्मण ने लंका में जाकर विभीषण का विधिवत राज्याभिषेक किया।[26] श्रीराम का लंका की सम्पत्ति के प्रति कोई रूझान नहीं हैं, वे परसम्पत्ति की लालच नहीं करते। अपने स्वभावानुकूल उन्होंने न्यायाचित श्रेष्ठ आचारण किया।

इस प्रकार सम्पूर्ण रामायण में महाराज दशरथ का न्याय, श्रीराम के जीवन के अनेक प्रसंगो विश्वामित्र के साथ उनके यज्ञ रक्षार्थ जाने और राक्षसों का वध करने, चित्रकूट में भरत से कुशल समाचार पूछने के प्रसंग के विविध न्यायोचित कथन, वन गमन के विविध प्रसंग, वाली वध, रावण वध, विभीषण राज्याभिषेक एवं अयोध्या लौटकर श्रीराम द्वारा किये गये अनेकानेक कार्य उनके न्यायिक पक्ष को व्यक्त करते हैं। रामकथा का यह न्यायिक पक्ष सदा से हर युग में सत्प्रेरणा देता आ रहा है। अनेक प्रकार से यह ग्रंथ समाज और साहित्य में न्याय का पुरोधा महाकाव्य सिद्ध हुआ हैं। स्मृति ग्रंथों कौटिल्य के अर्थशास्त्र इत्यादि ग्रंथों में किये गये न्याय व्यवस्थ में रामकथा से अवश्व प्रेरणा मिली होगी। रामायण की यह रामकथा युगों-युगों तक अपनी अबाध गति एवं सरस धारा से लोगों का मार्ग दर्शन करती रहेगी। विषम से विषम परिस्थितियों में भी मानव को आदर्शात्मक एवं न्यायपरक निर्णय लेने की शक्ति प्रदान करेगी।

संदर्भ-सूची

1. संस्कृत वाङ्मय का बृहद् इतिहास, प्रधान संपादक आचार्य बलदेव उपाध्याय, संस्कृत संस्थान लखनऊ, उत्तर प्रदेश।
2. रामकथा उत्पत्ति और विकास, फादर कामिल बुल्के, हिन्दी परिषद् प्रकाशन, प्रयाग विश्वविद्यालय।
3. रामायण 7. 66 गीताप्रेस गोरखपुर।
4. वही 7. 94 गीताप्रेस गोरखपुर।
5. वही 1. 6. 9 सर्वे नराश्च नार्यश्च धर्मशीलाः सुसंयताः।
   मुदिताः शीलवृत्ताभ्यां महर्षय इवामलाः।।
6. वही 1. 7. 16 सुवाससः सुवेषाश्च ते च सर्वे शुचिव्रताः।
   हितार्थाश्च नरेन्द्रस्य जाग्रतो नयचक्षुषा।।
7. वही 1. 7. 1-3 तस्यामात्या गुणैरासनिक्ष्वाकोः सुमहात्मनः।
   अकोपो धर्मपालश्च सुमन्त्रश्चाष्टमोऽर्थवित्।।
8. वही 1. 7. 5 सुयज्ञोऽप्यथ जाबालिः काश्यपोऽप्यथ गौतमः।
   मार्कण्डेयस्तु दीर्घायुस्तथा कात्यायनो द्विजः।।

9. वही 1. 7. 4 ऋत्विजौ द्वावभिमतौ तस्यास्तामृषिसत्तमौ।
वसिष्ठो वामदेवश्च मन्त्रिाणश्च तथापरे।।
10. वही 1. 7. 6-8 एतैर्ब्रह्मर्षिमिर्नित्यमृत्विजस्तस्य पौर्वकाः।
क्रोधात् कामार्थहेतोर्वा न ब्रूयुरनृतं वचः।।
11. वही 1. 7. 10 कुशला व्यवहारेषु सौहृदेषु परीक्षिताः।
प्राप्तकालं यथा दण्डं धारयेयुः सुतेष्वपि।।
12. वही 1. 7. 11 कोशसंग्रहणे युक्ता बलस्य च परिग्रहे।
अहितं चापि पुरुषं न हिंस्युरविदूषकम्।।
13. वही 1. 7. 13 ब्रह्मक्षत्रमहिंसन्तस्ते कोशं समपुरयन्।
सुतीक्ष्णदण्डाः सम्प्रेक्ष्य पुरुषस्य बलाबलम्।।
14. वही 1. 7. 16 हितार्थाश्च नरेन्द्रस्य जाग्रतो नयचक्षुषा।
15. वही 1. 7. 19 मन्त्रसंवरणे शक्ताः शक्ताः सूक्ष्मासु बुद्धिषु।
नीतिशास्त्रविशेषज्ञाः सततं प्रियवादिनः।।
16. वही 1. 7. 22 विश्रुतस्त्रिषु लोकेषु वदान्यः सत्यसंगरः।
स तत्र पुरुषव्याघ्रः शशास पृथिवीमिमाम्।।
17. वही 1. 26. 26 शरेणोरसि विव्याध सा पपात ममार च।
तां हतां भीमसंकाशां दृट्वा सुरपतिस्तदा।।
18. वही 1. 30. 5 तौ तु तद्वचनं श्रुत्वा राजपुत्रौ यशस्वि नौ।
अनिद्रं.ाडहोरात्रं तपोवनमरक्षताम्।।
19. वही 1. 30. 18 स तेन परमास्त्रेण मानवेन समाहतः।
सम्पूर्णं योजनशतं क्षिप्तः सागरसम्प्लवे।।
20. वही 1. 30. 21-23 इमानपि वधिष्यामि निर्घृणान् दुष्टचारिणः।
राघवः परमोदारो मुनीनां मुदमावहन्।।
21. वही 2. 100. 74 यां वृत्तिं वर्तते तातो यां च नः प्रपितामहः।
तां वृत्तिं वर्तसे कश्चिद् या च सत्पथगा शुभा।।
22. वही 2. 100. 76 राजा तु धर्मेण हि पालयित्वा महीपतिर्दण्डधरः प्रजानाम्।
अवाप्य कृत्स्नां वसुधा यथाव -
दितश्च्युतः स्वर्गमुपैति विद्वान्।।
23. वही 4. 5. 21-22 प्रत्युवाच तदारामं हर्षव्याकुललोचनः।
सोऽहं त्रस्तो वनेभीतो वसाभ्युदभ्रान्तचेतनः।।
24. वही 4. 16. 39 अथोक्षितः शोणिततोयविस्त्रवैः।
प्रभ्रंशितेन्द्रध्वजवत् क्षितिं गतः।।
25. वही 6. 108. 21-22 तस्य हस्ताद्धतस्याशु कार्मुकं तत् ससायकम्।
पपात स्यन्दनाद् भूमौ वृत्रो वज्रहतो यथा।।
26. वही 6. 112. 14-16 आगतास्तु जलं गृह्य समुद्राद् वानरोत्तमाः।
अभ्यषिञ्चस्तदा सर्वे राक्षसा वानरास्तथा।।

राम सेतु की ऐतिहासिकता :- एक विश्लेषण

डॉ0 वीना सिंह

एसोसिएट प्रोफेसर शिक्षा संकाय
हंण्डिया पी0जी0कॉलेज इलाहाबाद।

राम भारत की प्रभात की पहली ध्वनि, भोर की गूँज पहली,राम आस्था है, राम ईश्वर है, राम मंत्र है, राम ब्रम्ह है, राम ईश्वर है, राम देश की एकता के प्रतीक हैं एवं राम जन-जन के मन में है। राम पूर्णरूपेण गूरू है आदर्श पुत्र , आदर्श भाई ,आदर्श सखा, आदर्श पति, मर्यादा पुरूषोत्तम एवं करूणानिधान है, (**नाम लेत भव सिन्धु सुखाई**) । जन मानस पर राम के आदर्शो का इतना गहरा प्रभाव है । कि वह युगों-युगों तक जीवन्त रहेगा। भारत की डोर सांस्कृतिक विरासत और सनातन धर्म की पहचान ही धर्म है।

हमारे भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृतियों में से एक है। मर्यादा पुरूषोत्तम श्री राम हमारी संस्कृति के महानायक है, उनके द्वारा स्थापित आदर्श हमारी प्राचीन परम्पराओं तथा जीवन मूल्यों के अभिन्न अंग है। रामायण के पात्रों तथा घटनाओं की प्रमाणिकता तथा ऐतिहासिकता को लेकर समय-समय पर राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्टीय संगोष्ठियों का आयोजन होता रहता है। प्रस्तुत शोध पत्र में रामायण में वर्णित "रामसेतु" की ऐतिहासिक व प्रमाणिकता पर उपलब्ध साहित्यिक, पुरातात्विक तथा वैज्ञानिक साक्ष्यों को आधार बनाया गया है।

इतिहास का लेखा जोखा मात्रा सतही घटनाओं को मूल्यांकन है जबकि यदि हम पुराण की चर्चा करें तो वह मापन करता है अंतरम लेखा जोखा जो मूलतः तिथियों एवं ग्रह नक्षत्रों पर आधारित एवं सत्यापित है। बाल्मिकी ने रामजन्म से पहले ही रामायण लिखी।

श्रीराम की कथा प्रथम बार महर्षि बाल्मीकि ने लिखी।कालान्तर में विश्व के अन्य देश जैसे-बाली, जावा, सुमात्रा, नेपाल, लाओस, कंबोडिया, इंडोनेशिया, बांग्ला देश, भूटान, कंपूचिया, मलेशिया, श्री लंका और थाईलैंड आदि देशों की संस्कृतियों व पौराणिक ग्रंथों द्वारा आज भी राम को जीवित रखा गया है। श्री लंका में भारतीय महाकाव्यों के आधार पर लिखा गया जानकी हरण के रचनाकार चीनी रामायण को अनामकं जातकम् और दशरथ कथानम, नाम से जाना जाता है, इन कथाओं के अनुसार राम का जन्म 7323 ई0पूर्व हुआ था। गादर कामिल बुल्के ने अपने शोध द्वारा 300 ऐसे प्रमाण दिये।

महर्षि वाल्मीकि एक महान खगोलविद थे। उन्होंने राम के जीवन में घटित घटनाओं से संबंधित तत्कालीन ग्रह, नक्षत्र और राशियों की स्थिति का भी वर्णन किया है। इन खगोलीय स्थितियों की वास्तविक तिथियां "प्लैनेटेरियम साफ्टवेयर" के माध्यम से जानी जाती है। भारतीय राजस्व सेवा में कार्यरत पुष्कर भटनागर ने अमेरिका से "प्लैनेटेरियम" गोल्ड नामक "साफ्टवेयर" प्राप्त किया, जिससे सूर्य/चंन्द्रमा के ग्रहण की तिथियां तथा अन्य ग्रहों की स्थिति तथा पृथ्वी से उनकी दूरी वैज्ञानिक तथा खगोलीय स्थितियों के आधार पर आधुनिक अंग्रजी कैलेंडर की तारीखें निकाली है। इन सबका अत्यंत रोचक एवं सराहनीय वर्णन उन्होंने अपनी पुस्तक 'डेटिंग द एरा ऑफ लार्ड राम' में किया है।

महर्षि वाल्मीकि ने बालकाण्ड के सर्ग 18 के श्लो0 8 और 9 में वर्णन किया है कि श्रीराम का जन्म चैत्र मास के शुल्क पक्ष की नवमी तिथि को हुआ। उस समय सूर्य, मंगल, गुरू, शनि व शुक्र ये पांच ग्रह उच्च स्थान मे विद्यमान थे तथा लग्न में चंन्द्रमा के साथ बृहस्पति विराजमान थे। ग्रहों नक्षत्रों तथा राशियों की स्थिति इस प्रकार थी-सूर्य मेष में,मंगल मकर में, बृहस्पति कर्क में,शनि तुला में और मीन में थे। चैत्र माह में शुक्ल पक्ष नवमी की दोपहर 12 बजे का समय था।

जब उपर्युक्त खगोलीय स्थिति को कंप्यूटर में डाला गया तो "प्लैनेटेरियम गोल्ड साफ्टवेयर" के माध्यम से यह निर्धारित किया गया कि 10 जनवरी, 5114 ई0पू0 दोपहर के समय अयोध्या के लेटीच्यूड से ग्रहों, नक्षत्रों तथा राशियों की स्थिति बिल्कुल वही थी, जो महर्षि बाल्मीकि ने वर्णित की है। इस प्रकार श्रीराम का जन्म 10 जनवरी सन् 5114 ई0पू0 (7117 वर्ष पूर्व) को हुआ जो भारतीय कैलेंण्डर के अनुसार चैत्र मास की शुल्क पक्ष की नवमी तिथि है और समय 12 बजे से 1 बजे के बीच का है।

राम सेतु के सम्बन्ध में बाल्मीकि रामायण से ज्ञात होता है कि श्री राम ने सीता को लंका पति रावण के चंगुल से छुड़ाने के लिए लंका द्वीप पर चढ़ाई की, तो उस समय भी उन्होंने समुद्र पार जाने के लिए रास्ता मांगा था, जब वरूण ने उनकी प्रार्थना नही सुनी तो उन्होंने समुद्र को सुखाने के लिए धनुष उठाया, डरे हुए वरूण ने क्षमा याचना करते हुए उन्हें बताया कि श्रीराम की सेना में मौजूद नल-नील नाम के वानर जिस पत्थर पर उनका नाम लिखकर समुद्र में डाल देंगे वह तैर जायेगा और इस तरह श्री राम की सेना समुद्र पर पुल बनाकर उसे पार कर सकेगी। इसके बाद श्री राम की सेना ने लंका के रास्ते में पुल बनाया और लंका पर हमला कर विजय हांसिल की।गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण सुख-सागर में अलग ही वर्णन आता है। इसमें कहा गया है कि राम ने सेतु के नामकरण के अवसर पर उसका नाम "नल सेतु" रखा। इसका कारण था कि लंका तक पहुंचने के लिए निर्मित पुल का निर्माण विश्कर्मा के पुत्र नल के बुद्धि कौशल से सम्पन्न हुआ था। बाल्मीकि रामायण में वर्णन है कि

नलश्चक्र महासेतु मध्ये नदनदीपतेः ।
स तदा क्रियते सेतुर्वानरैर्घोरकर्मभिः।।

रावण की लंका पर विजय पाने में समुद्र पार जाना सबसे कठिन चुनौती थी। कठिनता की यह बात बाल्मीकि रामायण और तुलसीकृत रामचरितमानस् दोनों में आती है। बाल्मीकि रामायण में लिखा है।

अब्रवीच्च हनुमांश्चं सुग्रीवश्चं विभीषणम।
कथं सागरमाक्षोभ्यं तराम वरूणालयम।।
सैन्यैःपरिवृताः सर्वे वानराणां महौजसाम ।।

(हम लोग इस अक्षोभ्य समुद्र को महाबलवान वानरों की सेना के साथ किस प्रकार पार कर सकंगे?) वहीं तुलसीकृत रामचरितमानस् में वर्णित है कि

'सुन कपीस लंका पति बीरा ।
केहि बिधि तरिअ जलधि गंभीरा।।
संकुल मकर उरग झष जाती।
अति अगाध दुस्तर सब भांती।।

समुद्र ने प्रार्थना करने पर भी जब रास्ता नही दिया तो राम के क्रोधित होने का भी वर्णन मिलता है। बाल्मीकि रामायण में तो यहाँ तक लिखा है कि समुद्र पर प्रहार करने के लिए जब राम ने अपना धनुष उठाया तो भूमि और अंतरिक्ष मानो फटने लगे और पर्वत डगमगा उठे।

तस्मिन् विकृष्टे सहसा राघवेण शरासने।
रोदसी सम्पफालेव पर्वताक्ष्य चकम्पिरे।।

गोस्वामी तुलसीदास रचित श्रीरामचरित मानस के सुंदरकांड में लिखा गया है कि तब समुद्र ने राम को स्वयं ही अपने ऊपर पुल बनाने की युक्ति बतलाई थी-

नाथ नील नल कपि दवौ भाईं।
लरिकाई रिषि आसिष पाई।।

तिन्ह के परस किए" गिरि भारे।
तरिहहिं जलधि प्रताप तुम्हारे।।

(समुद्र ने कहा हे नाथ नील और नल दो वानर भाई हैं। उन्होंने लड़कपन में ऋषि से आशीर्वाद पाया था।

उनके स्पर्श कर लेने से ही भारी-भारी पहाड़ भी आपके प्रताप से समुद्र पर तैर जाएंगे।

मै पुनि उर धरि प्रभुताई।
करिहउ बल अनुमान सहाई।।
एहि बिधि नाथ पयोधि ब"धाइअ।
जेहि यह सुजसु लोक तिहु"गाइअ।।

मै भी प्रभू की प्रभुता को हृदय में धारण कर अपने बल के अनुसार (जहां तक मुझसे बन पड़ेगा) सहायता करूंगा। हे नाथ ! इस प्रकार समुद्र को बंधाइये, जिससे तीनों लोकों में आपका सुन्दर यश गाया जाए। बाल्मीकि रामायण के युद्ध काण्ड का बाईसवां अध्याय विश्वकर्मा के पुत्र नल द्वारा सौ योजन लम्बे रामसेतु का विस्तार से वर्णन करता है। रामायण में 100 योजन लम्बे और 10 योजन चौड़े इस पुल को "नल" सेतु की संज्ञा दी गयी है। बाल्मीकि रामायण में वर्णन मिलता है कि पुल लगभग पांच दिनो में बन गया, जिसकी लम्बाई सौ योजन थी और चौड़ाई दस योजन।

दस योजन विस्तरीणं शतयोजनमातयम।
दहशुर्देवगन्धर्वा नलसेतुं सुदुष्करम्।।

नल के निरीक्षण में वानरों ने बहुत प्रयत्न पूर्वक इस सेतु का निर्माण किया था। विशालकाय पर्वतों और वृक्षों को काटकर समुद्र में फेंका गया था। बड़ी -बड़ी शिलाओं और पर्वत खण्डों को उखाड़कर यंत्रों के द्वारा समुद्र तट तक लाया गया था। 'पर्वतांश्च समुत्पाट्य यंत्रैः परिवहन्ति च'। वाल्मीकि रामायण के अतिरिक्त 'अध्यात्म रामायण के युद्धकांण्ड में भी नल द्वारा सौ योजन सेतु निर्माण का उल्लेख मिलता है।

"बबन्ध सेतुं शतयोजनमायतं सुविस्तृत पर्वत पादपैट्टढम्।"

पूरे भारत, दक्षिण पूर्व एशिया और पूर्व एशिया के कई देशों में हर साल दशहरा पर और राम के जीवन पर आधारित सभी तरह के नृत्य एवं नाटिका में सेतु बंधन का जिक्र किया जाता है। राम के बनाये इस पुल का वर्णन रामायण में तो है ही महाभारत में भी श्रीराम के नल सेतु का जिक्र आया है। कालीदास के रघुवंश में सेतु का वर्णन है। स्कंद पुराण, विष्णु पुराण,अग्नि पुराण, और ब्रह्यम पुराण में भी श्रीराम के सेतु का जिक्र किया गया है।

एन्साइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका में इसे एडम्स ब्रिज के साथ-साथ राम सेतु कहा गया है।

तेलगु भाषा की रंगनाथरामायण में प्रसंग आता है कि सेतु निर्माण में एक गिलहरी का जोड़ा भी योगदान दे रहा था। यह रेत के दाने लाकर पुल बनाने वाले स्थान पर डाल रहा था।

एक अन्य प्रसंग में कहा गया है कि राम-राम लिखने पर पत्थर तैर तो रहे थे लेकिन वह इधर उधर बह जाते थे। उनको जोड़ने के लिए हनुमान ने एक युक्ति निकाली और एक पत्थर पर "रा" तो दूसरे पर 'म' लिखा जाने लिखा जाने लगा इससे पत्थर जुड़ने लगे और सेतु का काम और आसान हो गया।

तुलसीकृत श्रीराम चरित मानस में वर्णन आता है कि सेतु निर्माण के बाद राम की सेना में वयोवृद्ध जाम्बवंत ने कहा था 'श्री रघुबीर प्रताप ते सिंध तरे पाषान' भगवान श्री राम के प्रताप से सिंधु पर पत्थर भी तैरने लगे।

सन 1908 में प्रकाशित ब्रिटिशकालीन 'इम्पीरियल गजैटियर' ऑफ इंण्डिया के खंण्ड पांच में एडम ब्रिज के बारे में जो ऐतिहासिक विवरण प्रकाशित हुआ है उसमें भी यह कहा गया है कि हिन्दू परम्परा के अनुसार राम द्वारा लंका में सैनिक प्रयाण के अवसर पर यह पुल हनुमान और उनकी सेना द्वारा बनाया गया था । डॉ0 राजबली पांण्डेय के हिन्दू धर्म कोश (पृ0 558) के अनुसार रामायण के नायक राम ने लंका के राजा रावण पर आकमण करने के लिए राम सेतु का निर्माण किया था। भारतीय तट से लेकर श्रीलंका के तट तक समुद्र

का उथला होना और वह भी एक सीध में इस विश्वास को पुष्ट करता है कि यह रामायणकालीन घटनाक्रम से जुड़ा एक महत्वपूर्ण अवशेष है।

इस तथ्य के अनेक प्रमाण है कि पुरातन काल में रामसेतु का प्रयोग भारत और श्रीलंका के बीच में भू-मार्ग के तौर पर किया जाता था। बौद्ध धर्म के इतिहास में भी इस बात का जिक्र है कि अशोक के बौद्ध धर्म अपनाने के बाद उनकी पुत्री संघमित्रा व पुत्र महेंद्र इसी पुल के रास्ते आज से लगभग 2300 वर्ष पूर्व भारत से श्रीलंका बौद्ध का प्रचार करने के लिए पहुंचे थे। महाकवि कालीदास द्वारा रचित रघुवंश में राम सेतु का वर्णन नासा द्वारा दिये गये चित्रों से बिल्कुल मिलता है।

महाभारत, विष्णुपुराण, तथा अग्निपुराण में भी इस पुल के बारे में लिखा गया है। दक्षिण भारत तथा श्रीलंका के अत्यंत प्राचीन सिक्कों पर भी इस रामसेतु पुल के चित्र उपलब्ध हैं। प्राकृत साहित्य में 7वीं से 12वीं सी के बीच इस रामसेतु का नाम एडम्स ब्रिज सोलहवीं शताब्दी में यूरोपवासियों के भारत आने के बाद पड़ा। 16वीं तथा 17वीं शताब्दी में दो डच मानचित्र तथा एक फेंन्च मानचित्र में एडम्स ब्रिज अर्थात राम सेतु को रामेश्वरम तथा तलाईमन्नार(श्रीलंका) के बीच क्रियात्मक भू-भाग दर्शाया गया है। सन 1803 के मद्रास प्रेसिडेंसी के अंग्रजी सरकार द्वारा जारी गजट में लिखा गया है कि 15 वीं शताब्दी के मध्य तक राम सेतु का प्रयोग तमिलनाडु से श्रीलंका जाने के लिए किया जाता था। परंतु बाद में एक भयंकर तूफान से इस पुल का बड़ा भाग समुद्र में डूब गया।

नासा और भारतीय सेटलाइट से लिए गये चित्रों में धनुषकोडि से जाफना तक जो एक पतली सी द्वीप की रेखा दिखती है, उसे ही आज रामसेतु के नाम से जाना जाता है। इस प्राप्त चित्र में छः स्थानो पर द्वीप दिखाई पड़ते है।

भारत में दक्षिण पूर्व में रामेश्वरम और श्री लंका के पूर्वोत्तर के मन्नार द्वीप के बीच चूने की उथली चट्टानों की चेन है, इसे भारत में राम सेतु व इसे दुनिया में (एडमस ब्रिज) के नाम से जाना जाता है। इस पुल की लम्बाई लगभग 30 मील लगभग है।नासा से मिली तस्वीर को देखकर यह कहा जा सकता है, कि अवशेष मानव र्निमित पुल के है नासा के पास **पाक स्ट्रेट** पर एडमस ब्रिज की तस्वीरे हैं जिन्हें भारत में रामसेतु के नाम से जाना जाता है। और कार्बन डेटिंग के अनुसार यह 1.7 अरब साल पुराना बताया गया है । रामचरित मानस में भी इस सेतू को सौ योजन लम्बा एवं एक योजन चौडा बताया गया है।

पुरातत्व विशेषज्ञो के अनुसार आज भी उस स्थान से प्राप्त पत्थर अन्य पत्थरो से भिन्न है व प्यूमिक स्टोन के नाम से जाने जाते है तुलसीदास जी ने भी पत्थरो की चर्चा करते हुए कहा -**श्री रघुवीर प्रताप से सिन्धु तरे**

डा0 राजीव निगम (राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान गोवा) के अनुसार समुद्र का जल स्तर 7 हजार वर्ष पूर्व इतना ही रहा होगा।आज के समुद्र का जल स्तर नासा द्वारा 1993 मे सेटेलाइट द्वारा ली पतली सी रेखा इस बात को प्रमाणित करती है।

उपरोक्त बिन्दुओं के आलोक में क्या श्रीराम को और उनके जीवन से सम्बंधित स्थलों व घटनाओं को काल्पनिक अथवा मिथक माना जा सकता है? वास्तविकता यह है कि हमारी सरकार ने सांस्कृतिक विरासत को खोजने में ईमानदारी के साथ अब तक कोई प्रयास नही किया। जब इस दिशा में कोई प्रयास किया ही नही गया? तो यह कैसे कहा जा सकता है कि राम सेतु एक कल्पना मात्र है और इसका निर्माण किया ही नहीं गया इस सम्बंध में यह उल्लेखनीय है कि महाभारत में वर्णित द्वारका नगरी जो समुद्र में डूब गई थी, की खोज समुद्री पुरातत्व के माध्यम से ही की गई और प्राप्त अवशेषों की कार्बन डेटिंग से महाभारत में वर्णित द्वारका की पुष्टि हुई। वस्तुतः रामायण की घटनाओं की प्रमाणिकता के लिये भाषा मूलक इतिहास को छोड़, अनुसंधान वैज्ञानिक के आधार पर ऐतिहासिक तथ्यों की जॉच पड़ताल की जाय। वैज्ञानिक आधुनिक आविष्कारों ने यह सिद्ध कर दिया है कि केवल भारत का ही नही अपितु विश्व के इतिहास का

पुर्नलेखन आवश्यक है,क्यों कि विभिन्न सभ्यतांए भाषा मूलक इतिहासकारों के अनुमानों से कहीं अधिक पुरानी है। अतः आवश्यक है कि एक नवीन भारतीय इतिहास पुर्नलेखन संस्थान की स्थापना की जाय जिसमें संस्कृत तथा साहित्य के विद्वान, खगोलविद्, अन्तरिक्ष वैज्ञानिक, पुराविद्, इतिहासविद् तथा इकॉलाजिस्ट होने चाहिये जो केवल वैज्ञानिक तथ्यों के आधार पर इतिहास की प्राचीन घटनाओं की ऐतिहासिकता, प्रमाणिकता, तिथिक्रम का निर्धारण करें।

इस सम्बंध में यह तथ्य भी महत्वपूर्ण है, कि समाचारपत्र पत्रिकाएं तथा इलेक्ट्रानिक मीडिया को यह ध्यान में रखना होगा कि वे ऐसा वातावरण तैयार करें कि हमारी वर्तमान पीढ़ी प्रचीन भारतीय सभ्यता और संस्कृति तथा सांस्कृतिक विरासत के प्रति न केवल जागरूक हो अपितु इस दिशा में शोध व अनुसंधान के लिए प्रेरित हो कर शोध कार्य करें और नये तथ्यों को उदघाटित कर भारत की विराट संस्कृतिक विरासत को निर्भय होकर गर्व के साथ विश्व के समक्ष रख सकें।

राम के रूप, धाम, लीला, आचरण में हमे आज एक दिव्यशैली मिलती है, जो परस्पर एक दूसरे को जोडती है, चाहे वह बाल लीला हो, चाहे वह वन लीला हो। भारतीय संतो व चितंको का विश्वास है कि जब धर्म की सभी मर्यादायें टूट जायेगी तो भी राम चरित्र सारे समाज को मिलाने के लिए सदा प्रस्तुत रहेगा। क्योकि छाटे-बड़े, महल-कुटिया, अमीरो-गरीबों को जोड़ने का पहला अभियान था और इसी के बाद नियम कानून बनना प्रारम्भ हुआ, और यह पहला नियम भी उतना ही प्रासंगिक है।

सन्दर्भ ग्रंथ

राम कथा का उद्भव एवं विकास- फादर कामिल बुल्के
रामसेतु पर प्रकाशित विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं का लेख
बुद्धिस्ट इण्डिया -रीज डेविड्स
स्टडीज इन रामायण- रामास्वामी शास्त्री
आजतक न्यूज चैनल कार्यक्रम, 07/04/2017
इंटरनेट
वाल्मीकि रामायण
तुलसीकृत रामचरित मानस
विष्णु पुराण
कम्ब रामायण
आनन्द रामायण

नासा द्वारा प्राप्त चित्र :-

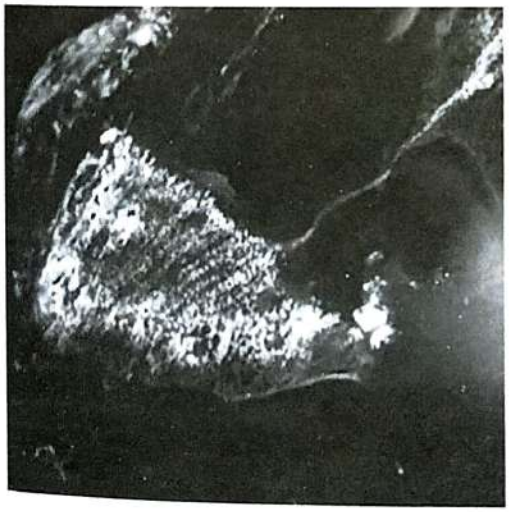

प्यूमिक स्टोन का चित्र :-

Thumri Rendered in the Karaikudi Veena Gharana

Dr. Shanti Mahesh

Karnatik music, the system of classical music associated with the southern part of Bharat, in the states viz. Tamil Nadu, Andhra Pradesh , Kerala and Karnataka is one of the two main classical systems of music in our sub continent. There are many musical forms specific to that system. It may be noted that forms in Hindustani system of music are also rendered in Karnatik music. This is to present a Thumri which I recollect my grand mother belonging to the eighth generation of the Karaikudi veena Gharana used to sing. Belonging to the Tenth generation of that Gharana, I wish to mention that although I imbibed music sounding perennially at home I was initially taught to speak as singing. In our Gharana, we are taught initially to sing and reproduce the same on Veena as similar as possible to Vocal music. I remember to have answered questions in the tunes similar to the questions by my grand mother. These tunes pictures the essence of any Raga chosen by her that day or hour.

There are musical forms like Bhajan, Abhang etc., rendered as Tukkadas, musical compositions after the main piece in the concert. I remember my grand mother singing a Thumri. I later studied that the lyrics of Thumris are in dialects of Hindi and usually in Uttar Pradesh. The lyrics are given with what I am aware in the singing by my grand mother. The Tal is perhaps Kaherava Tal of 8 beats, but as I comprehended, I have given as Ek Tal of Karnatik Music with 4 beats two cycles of which counts to 8 beats.

It is notated and furnished below. It has been done using the patantara.com devised by Dr. Sri Kumar K.S. who is the son of Dr. Karaikudi. Subramanian.

The Svara Sthanas are indicated with Roman letters as given below.

SVARASTHANA AS KNOWN IN KARNATIK MUSIC INDICATED AS

SHADJA	S
SUDDHA RISHABHA	r
CHATUSRUTI RISHABHA	R

SADHARANA GANDHARA	g
ANTARA GANDHARA	G
SHUDDHA MADHYAMA	m
PRATI MADHYAMA	M
PANCHAMA	P
SUDDHA DHAIVATA	d
KAISIKI NISHADA	n
KAKALI NISHADA	N

A dot above the Svara denotes Tara Sthayi and below, Mandra Sthayi, no dot below or above Madhya Sthayi.

References :

i) Thumri - Wikipedia, the free encyclopedia https://en.wikipedia.org/wiki/Thumri

ii) Hindustani and Carnatic Classical Music - Important India www.importantindia.com/3828/hindustani-classical-music/

पं. सामता प्रसाद जी का 'वज्रादपि कठोर कुसुमादपि कोमल' तबला वादन

डॉ. रेनू जौहरी, स. आ. (तबला)

संगीत एवं प्रदर्शन कला, विभाग, इ. वि. वि. इलाहाबाद

महाराज जी के वादन की यह विषेषता भी अपूर्व थी। उनका वादन शक्ति ओर सौन्दर्य का पर्याय था। उनका हाथ इतना सशक्त था। उस सशक्तता को उन्होंने सुन्दरता में बदल दिया।[1] उनके हाथ के वज़न के बारे में अनेक व्यक्तियों ने अनेकों बार चर्चा की है। अगर वह किसी की पीठ पर आशीर्वाद स्वरूप हाथ रख देते थे तो ऐसा लगता था कि बहुत वजन रख दिया हो।[2]

उनके वादन के इस गुण की प्रशंसा में उ. विलायत खाँ साहब ने एक बार दिल्ली की एक महफिल में कहा था—व (पं. जी) जब तेज बजायें तो किसी को गाने बजाने न दें अगर मुलायम बजायें तो ऐसे लगता था कि ख़्यालों में तबला बज रहा है।[3]

1991 में ग्रेट मास्टर्स की रिकॉर्डिंग में साक्षात्कार कर्ता ने महाराज जी से प्रश्न किया—आप तो कई लोगों के साथ संगत कर चुके होंगे जैसे तंत्रकार लोग हैं नर्तक हैं नर्तकियाँ हैं या गायक लोग हैं आपका मिज़ाज किनके साथ संगत करने में ज़्यादा भीतर से इच्छा होती है। या मजा मिलता है आपको? पं. जी कहते हैं—"देखो भइया हम हैं सुरीले लोग जो सुर में गाना बजाना होता है उसके साथ उसी मेल से बजाते हैं क्योंकि अपने को तबला को पीटने का कोई हक नहीं है क्योंकि किसी के बनाया हुआ चीज़ को पीटकर खराब कर देते हैं लोग, वह चीज़ हमने साधा नहीं। हम तो ऐसे मेल से बजाते हैं कि प्रचंड भी बजा सकते हैं कि उठ-उठ के लोग भागने की भी कोशिश करें, ऐसे भी बजाते हैं कि लोगों को अच्छा लगे। इसलिए सुर जो पकड़ के खींचता है कि पंडित जी तबले को मत ज़्यादा तकलीफ दीजिए, ऐसी तरह से बजाइये जिसमें तबले में उस सितार को तकलीफ न हो, उस गाने वाले को तकलीफ न हो और उस डांस वाले को तकलीफ न हो।"[4]

उनके तबला वादन के इस 'वज्रादपि कठोर कुसुमादपि कोमल' स्वरूप को हर कोई जानता था इस स्वरूप के विषय में दिल्ली घराने के श्री सुभाष निर्वाण जी ने भी कहा है—"जब पराल बजाते थे विकराल रूप में ऐसा लगता था ब्रह्मांड में समा गया सौफ्ट इतने थे जैसे बच्चा नहीं होता। ऐसे स्वीट थे।"[5]

एक पुस्तक में उल्लेख मिलता है कि 'पश्चिमी बाज' सितार और सरोद की संगति के लिए 'पूरब ckt*lsv fBd mi;Dr gS"The Virtue of the greater clarity of constituent bols and (hence) articulateness of whole rhythmic passages, the western baaj is more suited to provide accompariment to Sitar & Sarod than the Eastern Baaj, because of its sheer loudness can easily swamp the individual clearity of swarars produced by a plectrum."[6]

उक्त पंक्तियों के लेखन ने पश्चिम बाज को तन्त्र वाद्यों की संगति में पूरब बाज के मुकाबले अधिक उपयुक्त बता तो दिया तभी शायद उन्हें बनारस घराने के पं. गुदई महाराज जी के तबदला वादन की याद आ गई होगी तभी तो वह पूर्वोक्त

पंक्तियों के तुरन्त बाद लिखते हैं[7]—"But I hasten to add, however great be the differences between the repertoires and playing styles of the two regional gharanas, any artist belonging to any one of them can provide good solos and accompaniment in case he has the ability to do so. Indeed, a great deal depands on the prowess of the individual artist."[8]

उक्त पंक्तियों के लेखक ने तो अपने कथन को आपत्तियों से बचा लिया। बचाव वाले, गद्यांश में आखिर सच्चाई आ ही गई कि अच्छा सोलो अथवा संगति प्रस्तुति करना कलाकार की व्यक्तिगत क्षमता पर निर्भर करता है। तभी तो जिन-जिन कलाकारों के द्वारा जिन-जिन घरानों का निर्माण हुआ तो उन कलाकारों की व्यक्तिगत विशेषताएं ही घरानों की विशेषताएं बन गईं।

सितार, सरोद वाद्य के साथ विभिन्न बाज के घरानों की तबला संगति की चर्चा में उपयुक्तता-अनुपयुक्तता की बात चली है तो मैं महान सितार कलाकार उ. विलायत खाँ साहब के विचार जो वह महाराज जी की तबला संगति के विषय में रखते थे वह यहाँ देना चाहूँगी—दिल्ली में 'कमानी ऑडीटोरियम में कार्यक्रम में विलायत खाँ साहब के साथ गुदई महाराज बजा रहे थे तो खाँ साहब ने कहा—"जैसे मेरा सितार ख़्यालों में बजता है वैसा सामता प्रसाद जी का तबला बजता है। यदि ऐसा तबला (लोग) बजायें मेरे सितार के हिसाब से बजायें तो मैं भी उनका तबला सुनूँ।"[9]

एक अन्य साक्षात्कार में एक पत्रकार ने उनके प्रिय तबला वादकों के विषय में पूछा था जिस पर उन्होंने कहा—

पं. अनोखे लाल जी के साथ झाला बजाने का सुख मिलता है।

पं. सामता प्रसाद जी के साथ 'नाद' का सुख मिलता है।[10]

'सरोद' वाद्य यंत्र के महान कलाकार उ. अमजद अली खाँ गुदई महाराज के नाद सौन्दर्य के सन्दर्भ में कहते हैं—"उनकी टोनल क्वालिटी इतनी खूबसूरत थी। हमारी जिन्दगी के जितने लाँग प्लेइंग रिकॉर्डस हुए उसमें वह ही बजाये।"[11]

जब सितार और सरोद के महान कलाकार पं. सामता प्रसाद जी के तबला-वादन के विषय में इस प्रकार कहते हैं तो कतिपय विद्वानों का यह कहना कि पश्चिमी बाज सितार-सरोद की संगति में पूरब बाज से ज़्यादा उपयुक्त है तो इस कथन का खंडन स्वतः ही हो जाता है। या पिफर यह कहना पड़ेगा कि महाराज जी बाज और घरानों के परिधि में आते ही नहीं है। तभी तो पं. सिया राम तिवारी जी (ध्रुपद-धमार के साथ संगति में) के साथ वादन करने में (पं. किशन महाराज जी के आवास पर) कई तबले फाड़ देने वाले सामता प्रसाद जी सितार के साथ इतना मुलायम इतना सुन्दर तबला वादन करते हैं जैसे ख़्यालों में तबला बज रहा हो।

मैं भी इस बात से सहमत हूँ कि सशक्त बजाना, मुलायम बजाना यह ध्वनि नियंत्रण की कला पर आधारित है न कि बाज और घराना पर।

तबला वादन के क्षेत्र में पं. सामता प्रसाद जी अकेले ऐसे कलाकार हैं जिनका ध्वनि पर असाधारण नियंत्रण था।[12]

संदर्भ

1. तलवलकर श्री सुरेश जी से साक्षात्कार में ज्ञात।
2. बैनर्जी, श्री अनूप जी से साक्षात्कार में ज्ञात।
3. मिश्र, श्री रजनीश जी से साक्षात्कार में ज्ञात।
4. ग्रेट मास्टर्स 1991 की रिकॉर्डिंग से लिया गया।
5. श्री सुभाष निर्वाण जी से उनके दिल्ली बुराडी (झरौड़ा) दिल्ली स्थिति आवास पर—साक्षात्कार में ज्ञात।
6. Saxena Prof. Sudhir 'The Art of Tabla Rhythm' Page No. 79
7. शोधकर्त्री।
8. Saxena Prof. Sudhir 'The Art of Tabla Rhythm' Page No. 79
9. अ़ली. उस्ताद अकरम जी से ज्ञात।
10. आज़ाद, श्री अरविन्द जी से ज्ञात।
11. खाँ, उ. अमजद अली जी से ज्ञात।
12. विभिन्न गुणीजनों से साक्षात्कार के आधार पर शोधकर्मी का मत।

'लोक साहित्य में राम'

डॉ सुनीता शर्मा

ऐसोसिऐट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग

प्रेम चन्द मारकण्डा एस.डी.कालेज फॉर वूमैन, जालन्धर शहर।

सारांश :- रामकाव्य अपनी लोक-संग्रहकारी प्रवति को लेकर अवतरित हुआ। हिन्दी का राम भक्ति काव्य जीवन के लिए आदर्श एंव कल्याणमयी भावनाओं को प्रस्तुत करता है।रामकाव्य से अपने युग की डगमगाती हुई, सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक एवं दार्शनिक परिस्थितियों के मध्य कर्त्तव्य एवं जीवन के आदर्शो को समाज के सम्मुख रखता है।राम काव्य अपने लोक-मंगलकारी रूप में प्रदर्शित होता है। इसमें लोकरक्षक राम का रूप भी सामान्य जनता के लिए ग्राह्य एवं सुलभ होता है। यही रामकाव्य हिन्दी भक्तिकाल की देन न होकर अति प्राचीन काल से निरन्तर गति से अपने किसी न किसी रूप में चलता आ रहा है। हिन्दी साहित्य में उद्भूत रामभक्ति की विचारधारा भारत में बहुत प्राचीन है। बौद्ध धर्म के प्रचार से पूर्व ही रामभक्ति का उदय हो चुका था। जिन दिनों बौद्ध धर्म का प्रचार हो रहा था उसी समय राम को महामानव रूप प्रदान करने के प्रयत्न अन्तः सलिला के रूम में वर्तमान थे। लगभग ईसा पूर्व 600 ईस्वीं में वाल्मीकि ने अपनी रामायण में राम को मानव के रूप में चित्रित किया। उनका हृदय रामभक्ति से परिपूर्ण था। वाल्मीकि को आदि कवि की भावभूमि पर दृष्टिपात करते हुए यदि यह कहा जाए कि भारतीय कविता का अविभार्व ही रामभक्ति की भावना को लेकर हुआ है तो यह अत्युक्ति न होगी। ईसा के दो सौ वर्ष बाद महाभारत में विष्णु के छः अवतार-वाराह, नृसिंह, वामन, मत्स्य, राम और कृण माने गए। इसके पश्चात् नारायणीय में विष्णु के छः अवतार से बढ़कर दस अवतार हो गए। ईसा को छठी शताब्दी के बाद की राम की भक्ति का विकास ''राम पूर्व तापनीय उपनिषद्'' और ''राम उत्तर तापनीय उपनिषद्'' में हुआ, जहां राम ब्रहम के अवतार माने गए है। जिस ब्रहम के वे अवतार है, उनका नाम विष्णु है।[1] अतः राम को ब्रह्मा का अवतार घोषित किया गया। तदन्तर ''अगस्त्य सुतीक्ष्ण संवाद सहिता'' और ''अध्यात्म रामायण'' ने राम को देवत्व का पद देकर उनके अलौकिक रूप को और अधिक पुष्ट किया।[2]

ग्यारवीं शताब्दी में ''भागवत पुराण'' में राम की महिमा का विस्तृत वर्णन मिलता है। ईसा की चौहदवीं शताब्दी में रामभक्ति के प्रचार का विशेष श्रेय रामानन्द जी को है जिन्होने उत्तरी भारत में जाति-पाति का भेदभाव न रखते हुए रामभक्ति का अधिकार सर्वसाधारण जनता को दिया। रामानन्द की रामभक्ति से सगुण एवं निर्गुण दोनो धाराएं समान रूप से प्रभावित हुई। निर्गुण भक्ति में राम को अवतार के रूप में नही माना गया अपितु सगुण भक्ति धारा में राम को विष्णु के साक्षात् अवतार के रूप में स्वीकार किया गया। राम भक्ति की विचार धारा ने वैष्णव-धर्म का पूर्ण रूप से प्रतिपादन किया। ज्ञान एवं कर्म की अपेक्षा भक्ति को अधिक महत्ता दी गई। रामानन्द ने तत्ववाद पर अधिक बल न देकर राम को उपास्य मानकर राम के प्रति अनन्य शरणागति को ही चरम साधन माना है।[3]

रामानन्द के मतानुसार सीतापति राम समस्त गुणों से युक्त, एकमात्र जगत के हेतु एंव सबके संरक्षक, दुखः निवारक, पालनकर्त्ता, सबके उपास्य है। राम सब के बन्धु सबके प्राप्य, सर्वदोषरहित एंव कल्याण गुणकर है। यही भगवान राम सत्यस्वरूप, आनन्दस्वरूप तथा चिरस्वरूप है और सम्पूर्ण संसार के स्वामी है। बदरी नारायण श्री वास्तव के मतानुसार-'' स्वयं विष्णु ही राम के रूप में अवतीर्ण हुए थे। ये राम ही राजा दशरथ के पुत्र थे, जानकी जी उनकी पत्नी थी। पिता की आज्ञा मानकर उन्होनें चित्रकूट को अपना निवास स्थान बनाया और वन में चौदह वर्ष बिता दिए थे। इन्होने भक्तों के भय को दूर किया। सुग्रीव को राज्य देकर और रावण को मारकर सबको सुखी बना दिया था।[4]

इस प्रकार हिन्दी साहित्य में जब राम भक्ति का विकास एवं प्रसार हुआ तभी सभी उपयुर्क्त बातों का समावेश उसने कर लिया गया और राम के चरित्र को लेकर आदर्श एवं मर्यादा की आधार भूमि पर उनकी कथा का सहयोग प्राप्त किया गया। इसी राम भक्ति को तथा उसके समस्त आदर्शो को तुलसीदास की रचनाओं ने चिरस्थायी जीवन एवं साहित्य का प्रमुख अंग बना दिया। राम भक्ति शाखा के कवियों ने निर्गुण भक्ति के स्थान पर ईश्वर के सगुण रूप में राम की उपासना पर बल दिया और वैष्णव धर्म के सिद्धान्तों के आधार पर विष्णु के अवतार राम की आराधना की। ज्ञान और कर्म की महत्ता को स्वीकार करते हुए भक्ति को सर्वश्रेष्ठ बताया इन्होने अपने काव्य की रचना स्वान्त सुखाए तथा लोक हित की दृष्टि से की है। राम भक्त कवियों ने रामकाव्य का प्रणयन उपास्य-उपासक, सेव्य-सेवक भाव से किया है। इनके उपास्यदेव राम विष्णु के अवतार और परमपुरूष है। वे पाप विनाशक, धर्मोपदेशक, लीला अवतारी है इनके राम शील, शक्ति और सौन्दर्य के समन्वय की साक्षात प्रतिमूर्ति है। डॉ. बलदेव मिश्र के कथनानुसार ''जिसमे शक्ति, शील और सौन्दर्य इन तीनो की जितनी अधिक पराकाष्ठा प्रतिष्ठित होगी वह जन समाज को अपनी और उतना ही अधिक आकृष्ट कर लेगा।[2] ''अतः इस प्रकार उनके राम अपनी आलौकिक शक्ति से दुष्टों का दमन करते है, भक्तों को संकट से मुक्त करते है। शील से समाज को लोकाचार की शिक्षा देते है वे अपनी दयालुता एवं करूणामयता से पतितों ;अधर्मियों का उद्धार करत है। अतः सगुण भक्तिधारा के कवियों के राम का लोक रक्षक रूप प्रधान है। राम काव्य का दृष्टिकोण अत्यन्त व्यापक है, उसके एक विराट् समन्वय की भावना है, इसमें न केवल राम की ही उपासना है अपितु शिव, गणेश आदि देवताओं की स्तृति समय-समय पर राम,सीता, हनुमान, आदि पात्रों से करवायी है। इससे रामभक्ति में अत्यन्त उदारता की भावना का परिचय मिलता है। राम भक्तिों ने भक्ति को साध्य माना है फिर उन्होने ज्ञान, कर्म, व भक्ति के बीच सुन्दर समन्वय स्थापित करने का सफल प्रयास किया है। फलतः इस काव्य में रामभक्तों के अराध्य सगुण भी है और निर्गुण भी, परन्तु निर्गुण एवं सगुण की एकरूपता बताते हुए भी सगुणभक्ति को जन-समाज के लिए सरल एवं सुलभ बताया है।

इस प्रकार रामभक्ति धारा अपनी विभिन्न काव्य-कृतियों में विकसित होती हुई भक्तिकाल में चिरकाल तक प्रवाहित होती रही, जिससे हिन्दी के उक्त कवि देश-काल वातावरण की परिस्थितियों से प्रभावित होकर काव्य रचना करते रहे। समाज की आवश्यकताओं के अनुरूप ही उनकी काव्य कृतियों भी अपना रूप बदलती रही और कवियों की भावना भी अपनी राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक एवं दार्शनिक परिस्थितियों से प्रभावित होती रही। तत्कालीन समाज की नारी स्थिति से भी युगकवि अप्रभावित न रह सका। उनकी कृतियों से नारी भावना का ययार्थ बिम्ब उभरकर आता है। जिसका दिग्दर्शन हमें उनकी कला कृतियों से होता है। फलतः साहित्य का विकास धर्म और समाज के आधार पर जीवन की उपयोगिता की दृष्टि में रखकर लोक मंगलकारी प्रवृति को लेकर भी उदय हो सकता है और लोक रंजनकारी भावना से प्रभावित होकर भी प्रवाहित हो सकता है।

भगवान श्री राम अपूर्व सौन्दर्य, शक्ति एवं शील के संगम है। इनका स्वरूप ऐसा नहीं जो हमारे हृदय की क्षण भर के लिए एक क्षीण प्रकार रेखा में आलोकित करके फिर अन्तर्ध्यान हो जाए। भक्त अपनी अभिरूचि एवं प्रवृति के अनुरूप उनके भिन्न भिन्न रूपों की उपासना किया करते है। कोई उनके 'बालरूप' की उपासना करता है, तो कोई उनके भयनाथ का उपासक होता है और किसी को उनका 'काननचारी' रूप ही उपासना के अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है। गोस्वामी तुलसीदास जी को इनका शरणाधारी रूप ही अत्यधिक प्रिय हैं''राम बजर से भी कठोर और फूल से भी कोमल है। मर्यादा पुरूषोतम भगवान श्री राम अनन्त सौन्दर्य सम्पन्न है। सभी भक्त राम का दर्शनकर आत्मसुधि खो देते है और गदगद हो जाते है। राम के अनुपम सौन्दर्य का इतना अधिक आकर्षण है कि वैरागी विदेह जनक सहित जनकपुर वासी उन मार्ग के ग्रामीण नर-नारी, कोमल-भील, पशु-पक्षी, सज्जन, दुर्जन, ऋषि मुनि देवता सभी बरवस वशीभूत हो जाते है। राम का रूप ऐसा अपूर्व है कि स्वयं तो लोग देखते ही है दूसरों को भी देखकर नेत्रों का लाभ लेने की शिक्षा देते है भगवान श्री राम स्वयं अनन्त है, उसी तरह उनकी महिमा नाम, रूप और गुणों की कथा अपार एवं अनन्त है।

रामकथा भारत की आदिकथा है। वाल्मीकि से पूर्ण आख्यानों में प्रचलित रही हैं। संस्कृति सदैव आदर्श की स्थापना करती है और प्रत्येक क्षेत्र में होती है। पारिवारिक, सामाजिक, राजनैतिक,धार्मिक, आर्थिक सभी दृष्टियों में एक आदर्श की कल्पना की जाती है, रामकथा भारतीय संस्कृति की एक रूपक कथा है। वह आर्यो की संस्कृति के उत्तर-दक्षिण प्रसार का रूपक है। संस्कृति के प्रसार के लिए निर्मित इस रूपक में सभी प्रकार के सांस्कृतिक आदर्शो की स्थापना है। लोक कथाओं से समस्त कथा का विकास भी यही प्रदर्शित करता है,लोक कथाओं के पीछे सदा निश्चित विचार होता है, युग जीवन होता है। राम कथा इन दोनों को साथ लेकर चलती है। वह अपने समय के जीवन का भी प्रदर्शन करती है और उसके द्वारा सशक्त नैतिक मानदण्डों की स्थापना हुई जो आज भी स्वीकृत है। इसका विशिष्ट कारण उसकी स्थायी मूल्यों-यानि, प्रेम, क्षमा, सत्य, नम्रता दया आदि पर आधारित होना व्यक्ति समाज से निरपेक्ष और सापेक्ष क्या और कितना रह सकता है कि यह सामस्य निदर्शित आदर्श को स्थापित करता है।

राम भक्ति शाखा के कवियों ने अपने काव्य में व्यक्ति, परिवार, समाज राज्य आदि के आदर्श प्रस्तुत करके मानवता का चिरतंन सन्देश प्रदान किया और अपनी रचनाओं के द्वारा रामचरित के आधार पर मानव का जो आदर्श प्रस्तुत किया है वह अन्यत्र दुर्लभ है। फलतः रामभक्ति शाखा की रचनाओं में वेदःशास्त्र वैष्णव धर्म के आदर्शों एवं आदेशो को महत्त्व प्रदान किया गया है। रामभक्ति काव्य में परिवार के प्रति, लोक के प्रति, कर्त्तव्यों का व्याख्यान प्रत्येक पात्र के माध्यम से किया गया है। भाई-भाई की सेवा में संलग्न है, भक्त भगवान की सेवा में व्यस्त है, कोई भी औचित्य का अतिक्रमण नहीं करता।[1]

रामकाव्य में लोक कल्याण एवं लोक संग्रह की भावना जन समाज के लिए प्रायः उपादेय रही है। गृहस्थ जीवन में आदर्श की स्थापना की है। रामकाव्य में राम आदर्श पुत्र, आदर्श राजा, सीता आदर्श पत्नी, कौशल्या आदर्श माता, लक्ष्मण और भरत् आदर्श भाई, हनुमान आदर्श सेवक और सुग्रीव आदर्श सखा के रूप में चित्रित किये गए है। अतःराजा-प्रज्ञा, पति-पत्नी, भाई-भाई, स्वामी-सेवक, पडोसी-पडोसी के सम्बन्धों के सुन्दर समन्वय पर बल दिया गया है और आदर्श की स्थापना की गयी है। इसके अतिरिक्त रामभक्ति में उपासना की संकीर्णता दूर करके रामावत सम्प्रदाय ने तत्कालीन राजनीतिक, धार्मिक, सामाजिक परिस्थिति के अनुरूप सर्वजन सुलभ भक्ति का मार्ग प्रशस्त किया। इनकी भक्ति पद्धति वैधी-कोटि में आती है। इसमें नवधा भक्ति के प्रायः सभी अंगो का विधान है। ये भक्ति कवि

विशिष्टा द्वैतवाद से प्रभावित थें। इनके लिए जीव भी सत्य है क्योकि वह ब्रह्मा का अंश है। जीव और बह्म में अंश -अंशीभाव है। अतः इस भक्तिकवियों की भक्ति में मर्यादा, शील,सौदर्न्य , समन्वय से युक्त भक्ति का विधान है। इन्होने साधना की ऐसी पद्धति चलायी जो सबसे सुगम थी और अर्चना की प्रणाली की, जो जटिलता उस समय के अन्य भक्ति पंथो में आ गयी थी, उसे भी दूर किया [2] अतः सरल सहज एवं साधारण जनसुलभ भक्ति का प्रचार हुआ जिनके आदर्श ने उत्तरवर्ती कवियों का मार्ग-दर्शन किया।

वैयक्तिक आदर्श :- मानव की स्वतन्त्रता सत्ता होती है उसे अस्वीकार नहीं कर सकते पर स्वीकार की एक सीमा होती है जिसमें सामाजिकता की हानि न हो। रामकथा के समक्ष सभी विशिष्ट पात्रों का अपना व्यक्तित्व है। राम, भरत, लक्ष्मण, शत्रुघन, दशरथ,सीता कौशल्या सभी में व्यक्तित्व रूचि हैं, भावनाएं है, किन्तु के सभी उनका समंजन करते है चाहे समाज के प्रत्यक्ष सबसे व्यक्ति को छोटा होना पड़े। अपने गुणों का चरम विकास राम में भी है भरत में भी है। प्रारम्भ में एक राम एक श्रेष्ठ राजकुमार ही हैं। फिर भी वें प्रजाजनों और गुरूजनों में सर्वप्रिय है। भरत भी इस दृष्टि से सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। अपने स्नेह में, त्याग में, कर्तव्य निष्ठा में सदैव व विशिष्ट है। भावात्मक आवेश उनमें है किन्तु वही तक जहां तक सामाजिकता भी क्षति न हो। वनवास प्रसंग के व्यक्ति के रूप में दशरथ विलाप कर रहे है, लक्ष्मण क्रोध कर सकते है कि बाकि लोग विरोध कर सकते है, पर उससे आगे बढ़कर राम वनगमन नहीं रूक सकता, कौशल्या साधारण हृदय माता है पर उनका स्नेह मार्ग का अवरोधक नहीं बन सकता। राम कथा में सभी पात्र मानव के रूप में सदगुणों का चरम विकास प्रदर्शित करते है। वैदिक ऋषि की कामना है-हमारे कान श्रेष्ठ बात ही सुने, चक्षु श्रेष्ठ वस्तु ही देखे, हम स्वस्थ तथा बलिष्ट शरीर से इस जीवन यात्रा को पूरा करें।[1] मैं प्रत्येक प्राणी से प्रेम करू।[2] बुरे कामों में मेरी रक्षा हो और मैं ईमानदार बनू[3] जीवन दाता सत्यवादी को अत्यन्त उच्च पद पर बैठाता है आदि।[4] इन सब के लिए जिस व्यवहार को श्रेष्ठ सिद्ध किया गया था वह सत्य, प्रेम, तप,इत्यादि से संयुक्त जीवन ही रामकाव्य में दृष्टवय है।

पारिवारिक आदर्श :- अयोध्या का राजपरिवार एक आदर्श परिवार प्रस्तृत करता है। जहां सामान्य डाह नहीं भगिनीत्व है। राम कौशल्या मां, के पुत्र होने पर भी, कैकेयी मां के अधिक प्रिय है भरत कौशल्या माता के अत्यधिक प्रिय है, पर परिवार में समस्त आदर्श दाम्पत्य को स्थापित किया है, ऐसा नहीं है। राजा दशरथ ने तीन विवाह किए है और बाद में कैकेयी के प्रति इनमें अत्यधिक आकर्षण भी है रामायण में कैकेयी का भवन भी अन्य रानियों से श्रेष्ठ है। कैकेयी के समक्ष, दशरथ का दौर्बल्य इस दाम्पत्य को आदर्श नहीं रहने देता। राम, लक्ष्मण, भरत शत्रुध्न दाम्पत्य का आदर्श प्रस्तुत करते है। राम और सीता को सर्वाधिक चित्रित किया गया है। भारतीय नारी आज भी आदर्श सीता ही है। लक्ष्मण और उर्मिला के दाम्पत्य जीवन को यद्यपि बाद में स्थान मिला है, पर उसमें भी गम्भीर्य है,साधना है। भरत का दाम्पत्य और भी उपेक्षित है किन्तु साकेत सन्त आदि में जहां भी वे आए हैं सयत आदर्श सुख-दुख में समभागी दम्पति के रूप में ही हैं। राम एक पत्नी व्रत का आदर्श सामने रखते है 'पचंवटी' के लक्ष्मण भी उसका महत्त्व स्वीकार करते है।[5]

"नारी के जिस भव्य भाव का, स्वाभिमान भावी हूं मैं"
उसे नरों में भी पाने का उत्सुक अभिलाषी हूँ मैं।

"पुत्र धर्म का आदर्श राम, सतीत्व का आदर्श सीता है। "माता पिता को सन्तुष्ट कर सकना ही पुत्र धर्म है" माता-पिता का आदेश तर्क-वितर्क का विषय न होकर निर्विकार मन से पालन किए जाने योग्य है। मातृत्व की आदर्श कौशल्या है, जिनके व्यक्तित्व में सरल मातृत्व के अतिरिक्त कुछ नहीं।

पुत्रों ही के प्रति नहीं पुत्र वधुओं के प्रति भी उनमें वही वात्सल्य है। सीता की कोमलता कौशल्या की चिंता है।[6] राम वन में हैं, कौशल्या का कोमल वात्सल्य चिंतित है।-''काऊ बिरछ तर भीजत है राम लखन दोऊ भैया।'' बैठी-बैठी सगुण मना रही है। -दशरथ में हमें वात्सल्य के दर्शन होते है। राम के प्रति यद्यपि उनका विशेष मोह है फिर भी वे स्वीकार करते है कि वृद्वावस्था की सन्तानों से उन्हें अधिक स्नेह है। सीता के वन जाने पर उनकी सुकमारता की उन्हे चिन्ता है।[7]

अयोध्या के इस राज्य परिवार में सेवकों तक का सही महत्त्व है। उन्हे कष्ट न हो। सभी इस बात का ध्यान रखते है। साकेत के भरत-मांडवी को कुटी से अधिक स्नेह करने से रोकते है क्योंकि भृत्यों को कष्ट होगा। गुरूजन भी परिवार के ही सदस्य हैं सुमन्त का प्रवेश अंतःपुरी में भी है और विशिष्ट तो सभी को आदेश देने में और आवश्यकतानुसार निर्णय लेने में सक्षम है जैसा वे दशरथ की मृत्यु के पश्चात करते है। पारिवारिक सम्बन्धों के आदर्श में राम-लक्ष्मण की जोड़ी आज भी देखी नहीं तो सुनी तो जाती है। अथर्ववेद द्वारा प्रतिपादित हृदय की एकता,मन की एकता और आपस में द्वेष का त्याग यहां परस्पर पराकाष्ठा के प्रति से संवर्द्धित है। राष्ट्र तथा समाज के उत्थान का जो प्रयास राम कथा में ही उसे लिए आधारभूत इकाई में पूर्णतः मैत्री, बन्धुत्व तथा शान्ति आवश्यक है। जिसके अभाव में उसी विग्रह के दर्शन होते है जो वनवास प्रसंग में दिखाई देता है।

संस्कृति यद्यपि आंतरिक वस्तु है तदापि उसका बाह्य रूप परम्पराओं प्रथाओं आदि में देख सकते है। सभ्यता क्षणिक होती है। संस्कृति परम्परा की देन है। उसमें परिवर्तन शीघ्र नहीं आते। संस्कृति मानसिक पक्ष है विचार परम्परा और दूसरा पक्ष है-इसकी बाह्याभिव्यक्ति के रूप में दुष्टव्य कार्य कलापों विचारों का निर्माण परिवेश करता है, इतिहास करता है। स्थान और वातावरण के अनुकूल ही नैतिक -अनैतिक, उचित-अनुचित, पाप-पुण्य के मानदण्ड स्थापित होते है। यही मानदण्ड संस्कार के रूप में व्यक्ति में मानस में प्रविष्ट होकर ऐसे दृढ़ हो जाते है कि युगों तक नहीं बदलते है। यद्यपि इसमें राजनैतिक, सामाजिक, बाह्य परिवर्तन आ सकते हैं सभी व्यक्ति उसी तरीके से सोचते लगता हैं जैसी विचार परम्परा उसे संस्कार के रूप में मिलती है। इस प्रकार विचार संस्कार बनाते है और संस्कार विचार बनाते है। विचारों को जन्म देने वाली शक्ति (परिवेश) जब अधिक शक्ति सम्पन्न रहती है तभी नवीन विचार परम्परा, मूलतः नवीन संस्कृति रूढ़ि बन जाती है जो युगों युगों तक परिवर्तित रहती हैं। समस्त सृष्टि में रमें राम युंग-युग से सार्त्विक रसिक जनों की रस साधना का केन्द्र बने है। राम हमारे सुपरिचित है। इतने अधिक परिचित कि जन सामान्य में न लगे तो उसके समान उनके जीवन से सम्बद्व हर प्रत्येक घटना जन मानस के लिए आंख मूंद कर विश्वास किए जा सकते की सीमा तक प्रामाणिक है।

<u>सामाजिक आदर्शः-</u> समाज में सामाजिक व्यवस्था का आदर्श रामकथा में प्रस्तुत है। सामाजिक व्यवस्था व्यक्ति और परिवेश के सन्तुलन का परिणाम है। व्यक्ति और परिवेश में विरोध कों नियन्त्रित कर सकने की व्यवस्था, समाज और उसकी मान्यताएं है। रामकथा का आदर्श समाज है जहां, किसी को शारीरिक, मानसिक अथवा दैवी कोई कष्ट नहीं है।[8] सभी प्रसन्नता से प्रत्येक कार्य करते है न ही छल, कपट द्वेष और न ही संघर्ष है।[9]पर यह वर्णाश्रम व्यवस्था पर आधारित हैं सभी वर्णाश्रम के आधार पर आचरण करते है वेद के अनुकूल व्यवहार करते है।[10] साकेत का समाज तो गुणग्राही समाज हैं जिसमें शक्ति है यद्यपि समयानुकूल परिवर्तित विचारधारा के कारण यह विचारधारा, आज उपयुक्त नहीं लगती।.वर्णाश्रम व्यवस्था है पर उसमें अस्पृश्यता की गन्ध नहीं है। उदाहरणतया राम का '', शबरी, किरात, भील, कोल आदि से मधुर सम्बन्ध इसी रूप

को दिखाता है।'राम के सान्मिध्य से वन्यजातियों संस्कृति हो गई है।[11] उन्हे मानव समझ कर ही देखा, पहचाना जा सकता है।[12] समाज उचित-अनुचित का निर्णय लेने में सक्षम है। वह वन में समाज अनाचार का विरोध कर सकता है।[13] सामाजिक व्यवस्था में कही भी द्वन्द्व और तनाव नहीं है। वेदों की वाणी का उच्चारण होता है। नगर और तपोवन सभी परस्पर सहयोग देते है। प्रत्येक अपने कर्त्तव्यों और अधिकार के सम्पन्न सुख का अनुभव करते है। राम वैकुण्ठ की तुलना में भूतल पर स्वर्ग है, उसे महत्त्व देते है। रामकथा का प्राचीन वर्णाश्रम व्यवस्था ही सामाजिक आदर्श है पर उसमें स्नेह है फलतः वहां न कटुता है न ही विरोध है। व्यवस्था कर्मानुरूप है ब्राह्मण ऋषि मुनि तपोवन में रह सकते है। शास्त्र और अध्यापन में निर्णय के समय व्यस्त रहते है उस ब्रह्मतेज का सभी सम्मान व इच्छा को सदैव अनुगृहीन करते है। क्षत्रिय रक्षा का राज्य पालन का उतरदायित्व सभालते है, वैश्य व्यापार और शूद्र सेवा को, वे सभी मनुष्य है और सभी में परस्पर स्नेह है। राम कथा का चित्रित वन्य समाज अशिक्षित है पर उनमें स्नेह है सरलता है और वाक् चातुर्य है। सुकुमार राजपुत्रों को वनमार्ग में जाते देखकर ग्रामवासियों के मन में प्रेम उत्पन्न होता है और कैकेयी के प्रति रोष होता है।[14] सीता से उनका सम्बन्ध वे जानना चाहती है और अत्यन्त चार्तुय के साथ प्रश्न करती है उसी चार्तुय से सीता उत्तर देती है:--'नेत्र भांगिमा' से। यह दोनों प्रसंग सभी सम्बद्ध रचनाओं में है।

राजनैतिक आदर्श : शासन की आदर्श कल्पना 'रामराज्य' है यद्यपि वहां प्राचीन पद्धति को ही स्वीकार है। अतः राजतन्त्र की ही स्थापना है पर यह राजतन्त्र निरकुंश साम्राज्य नहीं है शासक में मदान्धता में प्रजा को विस्तृत कर सकने की चेष्ठा नहीं है प्रजा के समुख राजपरिवार का आदर्श है।[15] उसकी प्रसन्नता से प्रजा भी प्रसन्न है। दशरथ के यहां पुत्रों का जन्म होता है प्रत्येक व्यक्ति आनन्दमग्न है। मानों उसके परिवार में यह सुखद घटना घटित हो। राम के वनवास का विरोध प्रजा करती है। वह कैकेयी को उसके अनुचित कृत्य के लिए प्रताड़ित कर सकती है। राम को वन जाने से रोकने का प्रयास करती है। इन सब के पीछे प्रेम है, प्रजा के राजा से मधुर सम्बन्ध है। इसीलिए राजतन्त्र प्रजातन्त्र के नजदीक है। साकेत का प्रजा तो बिना विद्रोह के भी सक्षम है।[16] राजा का आदर्श है मुख। वह सुख की भांति सब कुछ ग्रहण कर विभिन्न अंगो का विवेक से निर्वाह करता है। राज परिवार प्रजा की आलोचना प्रशंसा दोनों के पात्र है। राजा का कर्त्तव्य भौतिक ही नहीं प्रजा की आत्मिक प्रगति भी है। प्रजा सुखी हो, कोई मानसिक चिन्ता न हो, चाहे राजा को कष्ट हो। लोकसाधन राजा का उद्देश्य है चाहे उसके लिए असीम मानसिक कष्ट के साथ सीता निर्वासन भी सहना पड़े। समता शासन की अभिनव पद्धति का प्रयोग भरत के नंदीग्राम निवास में किया गया है। कृषि-प्रधान राज्य के प्राण ग्रामों में रहते है इसी प्रकार राज्य का केन्द्र भी ''नंदीग्राम'' है। राज्य का चौदह वर्षो तक शासक के बिना सुचारू ढंग से चलते रहना आज भी आश्चर्य चकित बात है। यही पर दिव्य राजनैतिक आदर्श स्थापित किया गया है।

धार्मिक आदर्श : धर्मानुकूल आचरण का महत्त्व है इसलिए मर्यादा की कथा है। धर्म लोक वेद सम्मत है। धर्म में प्रायः कृत्य यज्ञ, तपोवन का जीवन प्रधान है। इह लोक से अधिक परलोक को महत्त्व' मिला है। प्रत्येक मनुष्य के व्यवहार में परलोक की चिन्ता हैं राम साक्षात विष्णु के अनुरूप है। इस दृष्टि से स्पष्ट है कि वैष्णव मत में स्वीकृत आदर्शो की यहां स्थापना हैं यहां धर्म शास्त्र हैं वह नियमन करता है शासन करता है। धर्म की रक्षा करना ही क्षत्रिय का धर्म है अतः ऋषि यज्ञ की रक्षा कथा नायक का दायित्व हैं। वह धर्म ही व्यक्ति की

संचित पूंजी है। इस धर्मानुकूल आचरण में आंतरिकता है। कथा अनुकरणीय है? क्या नहीं? क्या स्वीकार योग्य है? क्या त्याज्य? इसका निर्णय धर्म करता है। अपने मत परलोक सम्बन्ध धारणाओं में वे दृढ़ है। जाबालि के तर्क के खण्डन में यह स्पष्ट है। राम कथा में आरम्भ में धर्म के सार्वभौमिक मूल्यों की स्वीकृत है। राम की आज्ञाकारिता और त्याग, भरत का त्याग, प्रेम और भक्ति, हनुमान की भक्ति, लक्ष्मण का सेवक धर्म, बन्धुत्व, कौशल्या का मातृत्व मानवता के उच्चतम मूल्यों द्वारा स्वीकृत एवं प्रशंसित है। फलतः रामकथा ने एक ऐसा सार्वभौम-धार्मिक आदर्श प्रतिपादित किया जो सम्प्रदाय विशेष से सम्बद्ध नहीं था किन्तु बाद में अनके सम्प्रदायों से उसे मिला लिया गया। जैन और बौद्ध जैसे नास्तिक दर्शनों तथा वैष्णव आस्तिक मत में राम का मिलना इसका प्रमाण है। राम साहित्य शैव और वैष्णव संस्कृति से संघर्ष और अन्ततः उनके सामजस्य की कथा है। राक्षस शैव है राम वैष्णव, किन्तु राम विजयी होकर भी विभीषण का राज्य नहीं लेते अपितु राम विभीषण में परस्पर सौहार्द स्थापित होता है जो इस संघर्ष की सुखद परिणति का सूचक है। मानस में तो राम शिव के और शिव राम के भक्त ही है।

इस प्रकार से राम काव्य में व्यापक आदर्शो की स्थापना है। उसका धर्म सार्वभौमिक मूल्यों पर आधारित सर्वस्वीकृत धर्म है। उसके पारिवारिक, सामाजिक, राजनैतिक तथा वैयक्तिक आदर्श सार्वकालिक है। आज भी वे उसी प्रकार ग्राह्य और स्वीकार किये जाने योग्य है। यही कारण है कि लोक परम्परा में इस सांस्कृतिक विजय की उद्घोषणा हमें मिलती है। हमारे त्यौहार राम से सम्बद्ध है, हमारे लोकगीतों में राम और उनका परिवार दिखाई देता है। वन में जन्में राम के पुत्रों को लेकर रचे गए कुछ गीत भी मिलते है लोक गीतों में रामकथा व आना आज भी रामकाव्य का संस्कृति पर तीव्र प्रभाव प्रदर्शित करता हैं। यह प्रभाव इतना गहरा है कि हमारे अभिवादन का ढंग " जै राम जी की" हो गया। हमारा अन्तर्मन "अपने राम।"

इस प्रकार निष्कर्षत कह सकते है कि राम का आचरण सर्वथा अनुशासित था मर्यादा थी, उनका श्रेय "आचार्यानुशासन" से अनुप्रेरित था। जितने श्रेयस्कर कर्म है, वे ही सेवनीय है जो उत्तम आचरण है वे ही अनुकरणीय है। राम शास्त्र वचनों के लिए प्रतिवद्ध दिखाई देते है। उनकी यह प्रतिबद्धता किसी राजनैतिक सिद्धान्त अथवा संकुचित सीमित और निर्दिष्ट सामाजिक मूल्य से उत्प्रेरित नहीं है, वह सहज और स्वतः स्फूर्ति है। जीवन एक निश्चित विधान के अर्न्तगत प्राप्त हुआ है, शास्त्र उनकी सहजता में सहायक एवं उसकी सम्पन्नता के पूरक है माता एवं पिता में देवभाव, भाईयों के लिए सहज स्नेह और समानता का आग्रह, पापी के प्रति अकलुष, प्रजा के लिए व्यक्तिनिष्ठ, भावनाओं का परिष्कार, गुरूओं में, श्रद्धा, ब्राहमण एवं ऋषियों के सत्कृत्यों को निर्धारित करने का दृढ संकल्प, जनजाति, वनवासी एवं ग्रामीण के प्रति अगाध प्रेम में मर्यादाऔर निश्चित विधान के प्रतिबद्ध दिखाई देते है। उनके आचारण में उच्छृखंलता और स्वेच्छा चारिता के लिए कोई स्थान नहीं है। उनकी इसी विधान परकता ने उन्हें व्यक्तिवाद के सीमित दायरे से उठाकर द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद के चिन्तन को ही मूलाधार मानकर चलने वाला समाजवाद उपर की ओर हाथ उठाए "बौने समान दिखाई देता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूचीः-

1) धीरेन्द्र वर्मा, हिन्दी साहित्य कोश-भाग-1-2, ज्ञानमंडल लि. वाराणसी सं 2020
2) डॉ. शिवकुमार मिश्र, भक्ति काव्य और लोक जीवन, पीपुल्स लिटरेसी, दिल्लीः- 1983, पृ0 512
3) वीरेन्द्र मोहन, भक्ति काव्य और मानव मूल्य, प्रकाशन संस्थान नई दिल्ली पृ0 183
4) तुलसीदास गीतावली, स0 मुनिलाल, प्रकाश गीता प्रैस, गोरखपुर, 1986, पृ0 68

5) आशागुप्त भक्तिसिद्धान्त, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद
6) प्रा. विजय एस. सांजीत्रा, सूरदास और तुलसीदास का राम भक्ति काव्य, पैराडाइज, पन्तिसर्स, जयपुर
7) आ. रामचन्द्रशुक्ल, गोस्वामी तुलसीदास, इंडियन प्रैस लिमिटेड, प्रयाग, चतुर्थ संस्करण 1951
8) डॉ. उदयभानु सिंह, तुलसी, राधाकृण प्रकाशन, दिल्ली, 1972.
9) डॉ. विजय नारायण सिंह, तुलसी के राम कथा काव्य, तुलनात्मक और विश्लेषणात्मक अध्ययन, संजय प्रकाशन, वाराणसी, 1978.
10) डॉ. रमानाथ त्रिपाठी- अभिनंदन ग्रन्थ, सं. डॉ. भगीरत मिश्र, ओ.पी. पीतमपुरा- दिल्ली-1987
11) डॉ. प्रेमशंकर, राम काव्य और तुलसी, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली- 1977
12) डॉ. राम निरंजन पाण्डेय, नव हिन्द पब्लिकेशनस, हैदराबाद, 1960
13) प्रा. विजय एस. सोजीत्रा, सूरदास और तुलसीदास का राम भक्ति काव्य, पैराडारज पब्लिसर्स, जयपुर
14) कामिलबुल्के, रामकथा, हिन्दी परिषद, प्रयाग विश्वविद्यालय 1970
15) डॉ. राजूरकर रामकथा और तुलसी, पुस्तक संस्थान कानपुर, 1974
16) डॉ. नन्द किशोर तिवारी मध्ययुग के भक्ति काव्य में माया, शोध साहित्य प्रकाशन, इलाहाबाद, 1976
17) डॉ. मुंशीराम शर्मा, भक्ति का विकास चौखम्भा, विद्या भवन वाराणजी 1958
18) डॉ. विनय मोहन शर्मा, तुलसीदास रामचरित मानस और एक नयी भावार्थ रामायण (एक तुलनात्मक दृष्टि) अनादि प्रकाशन, इलाहाबाद, 1975
19) डॉ. प्रेम शंकर भक्ति काव्य की भूमिका, राधा कृष्ण प्रकाशन, नयी दिल्ली, 1977
20) डॉ. श्री धर सिंह, मानस का कथा शिल्प, आनन्द पुस्तक भवन, वाराणसी 1951 पृ0 स.
21) डॉ. नगेन्द्र, भारतीय साहित्य कोश, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, नयी दिल्ली, 1981- पृ0 स.
22) डॉ. राजबली पाण्डेय, हिन्दू धर्म कोश, उत्तर प्रदेश, हिन्दी संस्थान, लखनऊ, 1978

"शास्त्रीय संगीत में राम"

डॉ. इला शर्मा

पूजा कोटिगुणं स्तोत्र स्तोत्रत्कोटिगुणोजपः।
जेपात्कोटिगुणं गाने गानात परतन्नहि।।

अर्थात् पूजा से करोड़ों गुना श्रेष्ठ स्तोत्र है, स्तोत्र से करोड़ों गुना जप, और जप से करोड़ों गुना गान, श्रेष्ठ होता है गान से परे कुछ भी नहीं, इसी गान के महत्व को समझने के लिए हमे गान के अवलोकन हुेत प्रारम्भ जानना अत्यन्त आवश्यक है।

प्रारम्भ से ही भारत धर्म परायण देश रहा है। विभिन्न धर्मों में आस्था रखने वाले व्यक्ति भारत के वासी है। सभी धर्मों में ईश्वर के भिन्न-भिन्न रूप प्रचलित हैं सभी अपने अपने इष्ट को मानकर उनकी उपासना करते हैं, यही प्रथा अनादि काल से आज तक भिन्न रूपों में विद्यमान है। संगीत का प्रारम्भिक रूप शक्ति भावना से ओत प्रोत है यह सनातन, शाश्वत और सारभौम रहा है।

हृदयगत भावों का प्रकटीकरण जितना स्वर और लय के माध्यम से सरल एवं सहज है, उतना सम्भवतः किसी अल्य में देखने को नही मिलता क्योंकि 'एकाग्र' गेयता में ही 'मधुमती' अथवा 'विषोक' जैसी स्थिति प्राप्त होती है जहाँ पहुँचकर उपासक को सांसारिक माया-मोह, विषय-विकारों का मान नहीं रहता और वह स्वर्गिक आनन्द सागर में हिलोरे लेता है ब्रह्मानंद-सहोदर में विलीन हो जाता है।

नारदीय वीणा से लेकर मध्यकालीन भक्त कवियों तक संगीत ही आराधना का माध्यम रहा है, प्राचीन काल की ये परम्परा के पीछे यही गूढ़तत्व निहित रहा है। यज्ञों के अन्तर्गत सामगान का उद्देश्य जनरंजन से होते हुए विश्व को संचालित करने वाली अव्यक्त शक्ति की आराधना हो रहा है प्राचीन जन संगीत की धुनों का आध्यात्मिक साधना के लिए प्रयोग वैदिक संगीत का वैशिवटय माना जा सकता है, ऋग्वेद की ऋचाओं का गान देवताओं की प्रसन्नता के लिए आवश्यक ही नहीं

अपितु अनिवार्य माना जाता है। सामगान संगीत परम्परा पर तत्व अनुसंधान के अनुरूप सार्थक सिद्ध हुआ है।

संगीत की उत्पत्ति आरम्भ से वेदों के निर्माता ब्रह्मा जी द्वारा शिव को और शिव जी द्वारा यह कला देवी सरस्वती को प्राप्त हुई इसलिए माँ सरस्वती को वीणा-धारिणी, बागेश्री, आदि नामों से जाना जाता है। और उन्हें संगीत और साहित्य की अधिषठात्री माना है। सरस्वती जी से यह कला नारद जी और नारद जी यह ऋषि मुनियों में परिवर्तित हुई नारद जी ने यह कला स्वर्ग मे गन्धर्व, किन्नर तथा अप्सराओं को संगीत शिक्षा प्रदान की वहाँ से ही यह कला भरत, नारद और हनुमान आदि मुनि आदि में परिलक्षित संगीत कला के प्रचारक के रूप में अवतरित हुऐ।

अर्थात् ब्रह्मा जी (द्रुहिण) ने जिस संगीत को शोधकर, भरत मनि ने महादेव जी के सामने जिसका प्रयोग किया तथा इस प्रकार यह मुक्तिदायक है वही 'मार्गी सगीत कहलाया'।

वास्तविक रूप मे संगीत का सही अर्थ गाायन, वादन नृत्य इन तीनों कलाओं के समावेश को संगीत कहते हैं वास्तव में ये तीनों कलाऐ गायन, वादन, नृत्य एक स्वतंत्र रूप होते भी एक दूसरे के पूरक हैं अतः संगीत शब्द गीत शब्द में 'सम उपसर्ग लगाकर बना है सम' यानी सहि तथा गीत यानि गान। गान के सहित अर्थात् क्रियाओं (नृत्य) वादन के साथ किया हुआ कार्य संगीत कहलाता है। संगीत का प्राचीन नाम गान्धर्व शब्द के रूप में जाना जाता है! अर्थात् वाल्मीकि रामायण में लव-कुश के रामायण-गान के लिए गान्धर्व शब्द का प्रयोग किया गया जो गति व बाध्य के लिए प्रयुक्त किया गया। भरत मुनि ने भी गान्धर्व शब्द का प्रयोग गति और वाध के लिए किया अर्थात् नारदीय शिक्षा में 'गान्धर्व शब्दार्थ' "गेति गेय बिन्दुः प्राज्ञाधोंतका रूप्रवादनम्। शास्त की दृष्टि से 'श्री रामोरस विग्रह' रोमो रमयतापर" है वेदों ने रसों वे सः कहकर राम एवं परब्रह्म का ही निर्देश किया है उस अगाध सागर को उद्धेलित तरणित करने वाली स्वामिनि गीता जी सच्चिनन्दमयी रसमूर्ति है

तत्वत दोनों अभिन्न होते हुए भी केवल रससिद्ध के लिए युगल प्रभु स्वरूप में दर्शन देते हैं श्री "राम रसिका राजेश्वर" है तो श्री जानकी जी रसिक राजेश्वरी।

शास्त्रीय संगीत में रागों के गायन हेतु आवश्यक तत्व, रागों का नियम ही है। शास्त्रीयता नियमबद्धता का ही सही रूप है। शास्त्रों द्वारा बाँधा हुआ शास्त्रीय संगीत जिसे कलाकार द्वारा किसी रा की अभिव्यक्ति के लिए, राग का गायन समय, स्वर समुदाय, बंदिश, ताल, बादी-संवादी, छन्द एवं अलंकार योजना एवं राग के नियमों का पालन ये आधारभूत तत्व हैं। शास्त्रीय संगीत रागों के गायन हेतु आवश्यक तत्व रागों का नियम हो उसकी पहचान है राग शास्त्रीय संगीत की बुनियाद है, बीज है, आत्मा और तत्वरूप है प्रत्येक राग किसी विशेष भाव को व्यक्त करता है जो कि प्रयोग किये जा रहे स्वर पर निर्भर होता है जो कि सुनने वाले के मन पर स्वर का ऐसा प्रभाव पड़ता है कि स्रोता भी भाव विभोर हो जाता है और यही शास्त्र रूप सुनने में मनोरंजक लगने लगता है, और शास्त्र का मनोहारि रूप हमें विभिन्न काव्यों महा काव्यों में प्राप्त होता है। शास्त्र को दृष्टि से देखा जाये तो सबसे अधिक शास्त्र का बखान हमारे प्रसिद्ध ग्रन्थ रामायण में देखने को मिलता है। शास्त्रीय संगीत का अत्यधिक प्रयोग हमें भक्ति संगीत में देखने को मिलता है। भक्ति भावना को जब संगीत का सबल लि जाता है तो भक्त अपने ईष्टदेव के सम्मुख अधिक तन्मयता से भावों को प्रकट करता है आरम्भ से ही संगीत धर्म के आगोष में प्रतित हुआ है और फला-फूला है, इसलिए भक्ति और संगीत ये एक दूसरे के पूरक है भक्ति में श्रवण, कीतन, स्मरण, पादसेवन, अर्चन, वन्दन दास्य संख्य तथा अत्मनिवदेन इन नौ' लक्षणों का समावेश है जिनमें माध्यम से असराधक अपने अराध्य देव की सेवा कर स्वंय को समर्पित कर देता है। भक्ति में स्थिरता व तल्लीनता संगीत के माध्यम से ही आती है। संगीत हमेशा संस्कृति का परिचायक रहा है, इसीलिए संगीत एवं काव्य के विकास में भक्ति कालीन कवियों का विशेष योगदान रहा है। इस काल में कवियों ने संगीत के माध्यम से ईश-उपासना का मूल मन्त्र समाज को उच्च एवं नये आयाम के दिये हैं भक्ति भावना के साथ शासत्रीय संगीत को योग रूप में भी प्रयोग होने लगा "नाद ब्रह्म" जिसका मतलब है।

ध्वनि ही ईश्वर है क्योंकि जीवन का आधार कंपन से है यह कंपन ही ध्वनि है जिससे इंसान महसूस कर सकता है और एक खास अवस्था में पहुँच जाये तो पूरा जगत ध्वनि हो जाता है।

पूरा जगत इन्हीं तरह के अनुभव और समझ से विकसित हुआ शास्त्रीय संगीतज्ञों को देखने मातृ से ज्ञात होता है कि स्वभाविक रूप से ध्यान की अवस्था में रहते हैं, वे संतों जैसे हो जाते हैं इसलिए इस संगीत को महज मनोरंजन के साधन के तौर पर ही नहीं देखा गया बल्कि यह आध्यात्मिक प्रक्रिया के लिए एक साधन की तरह है रागों का प्रयोग इंसान की समझ और अनुभव को ज्यादा उन्नत बनाने के लिए किया गया है।

संगीत-परमेश्वर की प्राप्ति नाद योग (शास्त्रीय-संगीत) में शीघ्र सुगमता से हो सकती है। इसलिए पाँच वेद 'सामवेद' का उपवेद या गान्धर्व वेद कहते हैं। साहित्य का भाग 'ऋग्वेद' स्वरों का सामवेद, तालाभिनय 'यजुर्वेद और (राग)' अर्थवेद से लेकर चारों वेदों का सार भरत शास्त्र (अर्थात् भाव, रस व ताल बनाया गया), जिसे आजकल 'संगीत' कहते हैं। योग में अभ्यास-योग और ज्ञान-योग ऐसे दो भेद हैं। अभ्यास योग की शाखा मन्त्र योग और मन्त्रयोग की शाखा, स्मरण मन्त्र योग अर्थात् राग, ताल, गति, नृत्य, वाद्य इत्यादि से देवताओं का ध्यान करना ह, अतः संगीत साधना भी एक प्रकार की योग साधना ही है जिसके अभिभूत होकर स्रोता ध्यान मगन हो जाता है और उस ध्यान से उपजे भाव को प्रदर्शित करने के लिए संगीत साधना में रूचि लेता हे, और आनन्द प्राप्त कर प्रेरणादायी रचनाये करने लगता है इसका साक्षात उदाहरण गोस्वामी तुलसीदास जी जिनके अथक प्रयास में रामायण जैसे महाकाव्य की रचना की। पुराणों के उपरान्त हमें महाकाव्यों काल मिलता है इस काल के प्रसिद्ध महाकाव्य रामायण और महाभारत हैं ईसा से लगभग 500 वर्ष पूर्व वालमीकि ऋषि ने रामायण को लिखा था। रामायण आधार पर यह विदित होता है कि इस काल में स्वंयवर की प्रथा चालू थी और वर-वधु के चुनाव के अवसर पर संगीत का आयोजन चला करता था राम चन्द्र जी के विवाहोत्सव पर, धनुष तोड़े जाने पर, जयमाल, पर, चौदह वर्ष वनवास के बाद वापस लौटने पर अनेक स्थानों पर संगीत का आयोजन होना प्राप्त था जब लक्षमण जी सुग्रीव के अंतरमहल में प्रवेश करते समय वीणा-वादन के शुद्र संगीत को सुनते हैं वालमीकि-आश्रम में लव कुश को संगीत की शिक्षा दी जाती है रामायण काल में हमें जितने उत्कृष्टएवं सुरम्य संगीत की झांकी मिलती है उतनी इससे पूर्व के काल मे नहीं मिलती। इस काल में जब राजा ही संगीत मर्मज्ञ थे तो फिर उसकी प्रजा संगीत प्रिय क्यों ना होती वैदिक काल में संगीत उच्च स्तर पर प्रतिष्ठित था। इस काल के संगीत की कुछ विशेषतायें थी।

संगीत के द्वारा ईश्वर-आराधना का मौलिक भाव वैदिक युग से ही भारत द्वारा सम्पूर्ण विश्व में फैला। इस काल के संगीत का शास्त्रीय रूप इतना पवित्र एवं शुद्ध है कि उसके मुकाबले विश्व के अन्य देशों के संगीत में वैसा उत्तम रूप प्राप्त नहीं होता। इस काल में कवि और संगीतज्ञ का घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हो चुका था साहित्यकार और संगीतकार दोनों को एक-दूसरे का पूरक समझा जाता था वैदिक काल में कलाकारों का चरित्र बड़ा ही उज्जवल और उच्चकोटि का होता था वे कला की साधना के लिऐ बड़े से बड़े त्याग करने को सदैव तैयार रहते थे।

इन्हीं सभी आदर्श गुणों से समाहित स्वरूप जो धर्म और संस्कृति को सज रूप में परिलक्षित करता है वह स्वरूप जो समाज के लिए प्रेरणादायी, कर्त्तव्य परायण, त्यागशील मर्यादा पुरूषोत्तम श्री राम ही संगीत में विराजमान होते हुऐ दिखायी देते हैं, संगीत में राम एक मुख्य पात्र रूप में संस्कृति को धरोहर रूप में पूरा करते हैं, राम पूर्णतः संगीत से ओत प्रोत सभी कलाओं में निपुण है और महजतम रूप में श्री राम की झांकियों को रामायण में चौपाई व दोहों के माध्यम से दर्शाया है जो सुलभता से जनमानस का रंजन करता है अतः संगीत का वर्णन पुराणों में प्राप्त होने के कारण यह स्पष्ट हो जाता है कि हिन्दुओं ने संगीत की सम्बन्ध धर्म से जोड़ दिया था। इन परिस्थितियो में भारतीय संगीत के जन्म का इतिहास खोजने के लिऐ हमें पौराणिक गाथाओं तथा पूर्व काल के अवशेष, जैसे-

रामायण या विनय पत्रिका जिसमें राम की मुख्य भूमिका प्रस्तुत की गई है अर्थात् राम की भूमिका शास्त्रीय संगीत में हमें तुलसीदास जी द्वारा रचित दोहों छन्दों कविता और राग रागीनियों के रूप में सर्वसुलभ हैं।

नौभी निथि मधुमास पुनीता, सुकल पच्छ अभिजित हरिप्रति।
मध्य दिवस अति शीत न धामा, पावन काल लोग विश्रामा।।

मर्यादा पुरूषोत्तम श्री राम साक्षात परब्रह्म है। निराकार अखिलात्मन अविनाशीतत्व परमात्मा ही लोक, वेद तथा धर्म की रक्षा के लिए मर्यादा पुरूषोत्तम श्री राम रूप में अवतीर्ण हुए। श्री राम का पुण्य प्राकट दिवस चैत्र शुक्ला नवमी है हिन्दु धर्म में राम, विष्णु, विष्णु के 90 अवतारों मे 6 अवतार हैं राम का जीवन काल एवं पराक्रम महर्षि वालमीकि द्वारा रचित संस्कृत महाकाव्य रामायण के रूप में लिखा गया है। उन पर तुलसीदास ने भक्ति काव्य' श्री रामचरित मानस् रचा था। राम की प्रतिष्ठा मर्यादा पुरूषोत्तम के रूप में है। राम ने मर्यादा के पालन के लिए राज्य, माता-पिता यहाँ तक पत्नी का त्याग कर दिया था। राम का परिवार आदर्श भारतीय परिवार का प्रतिनिधित्व करता है। श्री राम रघुकुल में जन्में थे जिसकी परम्परा 'प्राण जाये पर वचन न जाये' की थी। रघुकुल भूषण श्री राम के समान मर्यादा रक्षक आज तक दूसरा कोई नहीं हुआ।

शास्त्रीय संगीत में राम को रचनाओं के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है 'विनय-पत्रिका' एक क्रम से लिखा हुआ ग्रन्थ होते हुए भी मूलरूप से 'मुक्तक-काव्य' और 'गीत तत्व' मुक्त-काव्य का प्राण माना जाता है गीतिकाव्य की उत्पति तभी होती है जब भावों के आदेश से प्रेरित होकर निजी उदगारों को काव्यों भाषा में प्रकट किया जाता है। व्यक्ति के व्यक्तित्व तथा उसकी आलरिक अनुभूति और भावों को सजीव भाषा में साक्षात् कराने की क्षमता ही गीतिकाव्य की विशेष व्यक्तित्व भाव अनुभूति की तीव्रता उसमें 'रागत्मकिता' का समावेश कर देती है अतः गीतकाव्य की तीन विशेषतायें मानी जा सकती है 'रागात्मक्ता' त्रिजीपन और अनुभूति की प्रधानता। दूसरे शब्दों में हम उन्हें गेयत्व स्वानुभूति का भाव और कोमल भाव की सघनता भी कट सकते हैं जब 'शास्त्रीय सगीत में राम जी की चर्चा हो रही है तो तुलसीदास जी का स्मरण होना स्वभाविक ही है। तुलसीदास जी अपने इष्ट राम का स्मरण संगीत द्वारा ही करना पसन्द करते थे' सर्वाधिक प्रसिद्ध और लोकप्रिय साहित्य रामचरित मानस और विनय पत्रिका भक्ति और दर्शन की द्रावरे से भक्तों विचारकों और दार्शनिकों में अधिक लोकप्रिय है।

गीति काव्य की एक प्रधान विशेषता है उसका गेय होना, अर्थात् जिसे गाया जा सके 'पद' गेय छन्द है, इसलिए 'रामायण और विनय-पत्रिका' में संगीत का समावेश स्वतः ही हो गया है। विनय-पत्रिका में अधिकांश पद रागिनियों में आवद्ध है ये पद-कल्याण, गौरी, आसावरी, भैरवी, केदार, धनाश्री मल्हार, रामकली, तोड़ी मारू बिहाग, बिलावल आदि अनेक प्रकार की राग-रागिनी के आधार पर रचे गये हैं। शास्त्रीय संगीत में राम को कुछ शब्दों में व्यक्त करना असंभव है। परन्तु कुछ उदाहरणों द्वारा जो कि शास्त्रीय नियमों द्वारा बद्ध राम रचनाओं को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

श्री राम-स्तुति-

"जयति सच्चिदव्यापकानन्द यदु,
ब्रह्म विग्रह-व्यक्त लीलीवतारी।
विकल ब्रह्मदि सुर सिद्ध, संकोचवस,
विमल गुन-गेह नर-देहधारी" (राग केदार)
(राग - रामकली)
सदा राम जपु राम जपु राम जपु,
राम जपु मूढ़ मन, बार-बार।
(राग-गौरी)
श्री रामचन्द्र कृपालु भजुमन हरन भवभय-दारुन
नवकंज-लोचन, कंजमुख, करकंज, पदकंज़ारुनं।।
(राग कान्हणा)
जो मन लागै रामचरन अस।
देह गेह सुत बित कलत्र, मगन होत बिनुजतन किये नस-जस।।
(राग बसन्तु)
बन्दौं रघुपति करुना-निधान।
जाते छूटै भव-भेद-ग्यान।।
(राग भैरव) भजन संग्रह
राम राम रघु, राम राम रटु, राम राम जपुजीहा।
राम-नाम नवनेह-मेहको, मन। होढि होहि पपीहा।

(राग विलास)

हे हरि। कवन जतन भ्रम भागै।

(राग सोरढ)

ऐ सो को उदार जग माहीं।

भारतीय संस्कृति के परिचायक श्री राम संस्कृति को धरोहर रुप में हमें प्रदान कर, जगन को आनंदमयी वातावरण में संलिप्त कर एक प्रेरक की मुख्य भूमिका संगीत में समाहित हो जगत का कल्याणकर भारतभूमि को उत्क्रष्ठ बनाये रखने के लिए विभिन्न रुपों में अपने कर्तव्यों को दर्शाते हुऐ प्रेरणा स्त्रोत के रुप में शास्त्र में निहित हैं भक्ति संगीत ना होता तो भक्तों का उदगीथ न होता, छन्द, मात्रा लय

ताल में उनका स्रजन कैसे होता। अर्थात यदि ग्रन्थ गेय शैली से स्रजित नहीं होते यदि, आदि महाकाव्य ''रामायण'' (महर्षि बाल्मीकि कृत) संगीतमय न होता तो राम जी का बखान राग रस-भक्ति रस में अवतरित कैसे होता, भारतीय संस्कृति में श्री राम के विभिन्न पद, भजन, कीर्तन, चौपाई, राग बान्देषे, ध्रुपद आदि शास्त्रीय संगीत निबद्ध उपलब्ध है। देवों की कल्पना निराधार है ईश्वर प्राप्ति जिसका प्रयोग श्रेष्ठ माध्यम संगीत जिसका प्रयोग उपासना की तन्मयता को एकोचित्त बनाता है। ईश्वर के प्रति समर्पण, आराधना की भाव अभिव्यक्ति ही ईश्वर के साक्षात दर्शन कराती है अन्त में मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम शास्त्र अवतरित रुप में संस्कृति में समाहित है। सरल हृदय में सगीत के माध्यम से सहज रुप में साक्षात बसे हैं जो हमारी संस्कृति में रचे-बसे हैं।

ग्रन्थ-सूची

1. रामचरितमानस - तुलसीदास
2. विनय पत्रिका - तुलसीदास
3. भारतीय संगीत का इतिहास - भगवत शरण शर्मा
4. संगीत विषारद - बसंत
5. श्री राम चिंतन - हनुमान प्रसाद के पोद्दार (गीता प्रेस)
6. भक्ति अंक - लक्ष्मी नारायण गर्ग गोरखपुर (जय श्री राम)

The Ramayana influences in south East Asian Countries

DR. JITENDRA PRATAP SINGH

Assistant Prof. (History)
New Standard College of Higher Education
Salethu, Raebareli.

Hindus in 10,000 years have never colonized any country. They have never looted, plundered or enslaved any Country economically. The have never condemned other religions and converted them to Hinduism. They have never destroyed temples of other religions. They have never called people from other religions as Sinners, heathens or kafirs and condemned them to eternal hell. They have never crucified or burhant alive any one whose ideas have been different from their own any yet Bharat has influenced the eastern countries of Japan, Korea, china, Taiwan, Vietnam, Cambodia, Laos, Thailand, Malaysia, Singapore, Indonesia, Etc. This is one of the miracles of humar history.

Homo sapiens reached the region by around 45,000 years ago, having moved east wards from the Indian subcontinent, Homo floresiensis also lived in the area up unit 12,000 Years ago, when they became extinct Austronesian, people, who form the majority of the modern population in Indonesia, Malaysia, Brunei. etc. may have migrated to south east Asia, from Taiwan. They arrived in Indonesia around 2000 B.C and an they spread, through the archipelago, they often settled along coastal areas and confined indigenous peoples such as Negritos of the Philippines or Papuans of New Guinea to inland regions.

Very little is known about south east Asian religions beliefs and Practices before the advent of Indian merchants and religious influences from the 2nd century B.C.E. onwards. Prior to the 13th Century C.E. Hinduism was the main religions in south. east Asia.

The Ramayana is a great epic which knows no boundaries of religion or natio. It has taught the values of life and behavior to men and women over centuries, across India and South-east Asia. There is no finer example in the world of a multi- religious, international culture than the Ramayana. Scores of generations of children have watched performances and narrations of the great epic over 2000 years, to learn the importance of an ethical life. This has been the cornerstone of the life of India and South-east Asia. Many kings in these countries have taken the name of Rama, cities and islands have been named after persons and places in the epic and

symbols of Vishnu. have been royal emblems across the region.

The story of the Ramayana is enacted more often than any other story of the world. It is performed by Hindus, Buddhists and Muslims, It is most important cultural tradition of Thailand Cambodia, Indonesia, Laos, Myanmar, Singapore, Malaysia and Vietnam.

The Ramayana is the great bond of culture which unites India and the countries of south-east Asia.

In the Encyclopedia of Religion and Ethics, Prof. A.A. Macdonnel has written, **"Perhaps no work of world literature, secular in origin, has ever produced so profound an influence on the life and thought of a People as the Ramayana."** According to Romila thaper – **"The Ramayana does not belong to any one moment in history, for it has its own history, which lies embedded in the many Versions which were woven around the the me at different times and places."**

Influence in Combodia- The first chapter of kampuchia or Cambodia starts with a Brahmin king Kaundinya arriving on their shores with gifts of Indian dresses, ornaments and eatables.

The first of these Indianised states to achieve widespread importance was the kingdom of Funan founded in the Ist Century CE in what is now Cambodia- according to legend, after the marriage of and Indian Brahman into the family of the local chief. These local inhabitants were khmer People.

In late 6th century CE, dynastic struggles caused the collapse of the Funan empire. It was succeeded by another Hindu- khmer state, chen-la which lasted until the 9th Century. Then, a khmer king, Jayavarman II (800-850 B.C.) established a capital at Ankor in Central Combodia.

He founded a cult which identified the king with the Hindu gods, Brahma and creator, Vishnu and Preserver, Shiva the god symbolising destruction and reproduction.

Cambodians love for Ramayana, gave to mankind Angkor, wat Probably the world's largest religious monument ever constructed. Built in the 12th Century in Cambodia by suryavarman II. The famous temple of Ankorvat, to which we shall refer in same detail a little letter, Contains Several representations from Rama life. Beautifully crafted, many of the carving were once painted and glided. They decorate and 2- m high galleried walls having roofed walkways that run along the inside of the protective moat, Just outside of the temple complex itself. The reliefs depict scenes from the Hindu epics the Ramayana On the literary side one may refer to Rama- kerti. it is also called Reamker. It is a combodian epic poem, based on the Sanskrit's Ramayana epic. The name means "Glory of Rama. the Reamker is a mainstay of the royal ballet's repertoire. Like the Ramayana, It is the philosophical allegory. exploring the ideals of Justice and tidelity as embodied by the protagonists Prince Rama and Sita. The epic is well known among the khmer people for its portrayal in khamer dance, theatre, called the L' khaon in various festivals across. Cambodia. scenes from the Reamker are painted on the walls of the Royal palace in khmer style in khmer style, and its predecessor is carved into the walls of the Angor wat and Banteay

srei temples, It is considered an integral part of Cambodian culture.

Influences in Thailand- A leading Budhist monk in Thailand told his followers that all aspects of thai culture beginning from the birth of a child to his death are a gift from mother Bharat. Amongst the south-eastern countries, Thailand Seems to have witnessed the maximum in flounces of the Ramayana story. one of its capitals was even named as Ayodhya. The kings of Thailand are called Rama and the Present king of Bhumipal Atulya tej Rama IX etc.

Ramakeerti, the thai Ramayana composed in 17th century is taught in scoots. world's largest Ramayana Painting can be seen on the walls of Emerald Buddha temple in Bangkok Royal Palace. Thai boxing which has now entered the Olympics is based on the fighting skills of Hanuman, Angad, Vali, Sugreev as the Thais claim.

Influences in Malaysia- In Malaysia the prime minister and his cabinet ministers take oath of office by pronouncing the worlds '' URUSAN SERI PADUKA BEGINDA" which means by he orders of Lord Ram's paduka

(as was done by Bharata in Ramayana).

All government orders are issued in the name of sri paduka. The name plate at a mosque in Penang translated into english reads "This mosque has been build by the orders of sri Paduka in 1974.

The malay version of Ramayana , **"Hikayat seri Rama"** composed in the 13th century is among the earliest malay literatures and is studied in the universities as a piece of classical literature. Ramayana shadow plays and dance drama are still a craze in north and eastern provinces malay language too has many wards of Sanskrit and Tamil origin. Sanskrit words like bhakti, Shakti, Sodari, Kadai, Guru, Swami, Jiva etc. Prestigious newly constructed buildings bear Sanskrit names like Chhaya, Surya, Wishwa Putra etc. The Sultan is entitled as Raja Parameswara and the queen is adressed as Rani Parameswari. The malay dress code includes Hindus items like Kurta, Angavastra around the waist and a black cap .

Influence in Indonesia:- Indonesia is the largest muslim country in the world. But their names contain of Hindu gods and goddesses.

The final installment of our survey of the Ramayana epic in south east looks at its dissemination in the island world that the Ramayana was already well known in Java by the end of Ninth century is evident from the magnificent series of reliefs carved into the walls of the temple of prambanan in central Java around 900 A.D. The abduction of sita by Ravana, depicted in stone reliefs in Prambanan temple, central Java This is yet another country dominated by muslim population. Nevertheless, it too has retained the Rama tradition. No visitor to Java can afford to miss the excellent performance of dance dramas based on the Ramayana story.

On the literary side, one may refer to the Ramayana Kakwin, which is the oldest version based on the Ramayana of Valmiki.

The very first rendering of the Ramayana in Indonesia appeared in central java in the language of stone. It was sculpted into balustrades of two temple ,

chandi shiva and chandi Brahma. They stand in the courtyard of a complex of temple, known locally as Lara Jonggrang.

The Village of prambanan has lent its name to this sprawling group of Hindu Temples. The town nearest to the temple is known as yogyakarta, which in old Javanese languages is equivalent to Ayodhya, the birth place of Rama.

In Lara Jonggrang, We have complete Pictorial representation of Ramayana, from Balakanda to uttarakhanda Perhaps there is no sculptural depiction of the epic elsewhere in the world during this period, mid- ninth to mid- tenth centuries. At the famous 10th Century Prambanan temple in central Java, dedicated to Brahma, Vishnu and Shiva, the Ramayana is depicted in bas-relief in several parts. The Sultan of Jogjakarta supports the daily performance of a leather puppet show of either Ramayana or Mahabharata in his palace annexure of a dance balled based on Ramayana performed with the **Prambanan** towards as its back drop The highlight of the extraordinary show is that all the two hundred artistes are muslim. We ask the leading actors how they perform Ramayana with such ardent involvement. The spontaneous reply is **"Islam is our religion. Ramayana is our culture"**

Influence in Laos:- The Laotion version of Ramayana Called **"Palak Palang"** is the most favorite the me of the dancers of Laos. The national school for music & Dance, in this communist country. teaches the Ramayana ballet in the Laotian style. Several Buddhist monasteries and stupas of Laos have sculptures depicting Ramayana in stone as well as in wood panels. There are sculptures of Rama and Krishna and other avatars of vishnu in the shiva temple at wat phu chu champask in southern Laos, which has been declared a world heritage center by UNESCO.

Influence in Burma:- When and how Ramayana came to take pride place in Myanmar's heart is one of academic debate. But the oral tradition of the Rama story Can be traced as for back as the reign of king Anawrabta (A.D. 1044-47) the founder of the first Myanmar Empire, In later periods there are ample archaeological historical and literary evidence to show that Ramayana entered into Myanmar culture at an early date. At old Bagan is a vishnu temple known as Nat Hlaung kyaung which is adorned with some stone figures of **Rama** and **Parasu-Rama.** The Rama story is depicted in the Jataka Sevies of Terra- cota plaques on the panels of petlcik pagoda in Bagan. Rama has been continuously present in the cultures of the post- Bagan periods. In all media of visual arts and all forms of literary art, Ramayan was the favorite theme.

Influence in Philippines :- Is it not surprising that the life-story of Rama reached as for east as philippines? In this context mention may be made of maha radia Lawana which is a brief version of the Ramayana. The word Maharadia is equivalent to Sanskrit Maharaja, while Lawana is Ravana. Interesting also is the fact the Ravana becomes an eminent personage in the Philippine version.

Influence in Vietnam :- Hindu kingdom of champa was a medival state in what is now Vietnam. Temple

inscriptions from champa indicate that Ramayana epic already was known there by the 7th century C.E. How ever, the tradition disappeared there and has only resurfaced recently. from 7th to the 9th century their capital was at indrapura, near Da Nang. Here we find Rama and Krishna in the temples that are predominantly dedicated to shiva or Uma Mahaswari.

A Table below Represents Ramayana's in fluence on SEA Countries, as regards the versions of the epic as well as names of the dynasties.

Combodia	Java	Laos
Malaysia	Philippines	Sumatra
Thiland		
	Kakwin	Phra Lak
Hikayat	Maradia	
Ramakien		
		Phra Lam
Seri Rama	Lawana	
Kaundinya	Shailendra	Srimara
Hikayat	Sri Vijay	Ramakirti
dynasty	dynasty	dynasty
Maharaja	Dynasty	Ravana
		Isanadynasty
		Chakri
		dynasty 37
		rulers names
		Rama

Conclusion:- Over the centuries, Ramayana has inspired and Influenced people in different parts of the worlds.

Ramayana, Sanskrit, Ayurveda, Hindu Values, festivals, dance, music sculpture and arts remain the bedrock of the culture and existence of south east and far east Asia Countries for the past two thousand years. At times it appears that they are more proud of this culture and value systems than we Indian Hindus. Here in south East Asia Hinduism is not a religion but its their daily routine.

According to Dr. V. Raghavan, the distinguished authority on Ramayana, has remarked, **"It is true many stories and episodes have been added in different versions of Ramayana, especially in Southeast Asia and in some of them some of the major deviations from the central Ramayana plot of valmiki occur. But Rama is always the central figure around whom all the other characters revolve and his story illustrates the triumph of good over evil."**

REFERENCES

1. Goldman, Robert, P. The Ramayana of Valmiki, Vol. I Princeton university press, 1984. P.x.
2. Krishnamurthy, k., ed., A critical Inventory of Ramayana studies in the world (CIRSW), Sahitya academy, Delhi, Vol. - I, 1993.
3. Filliozat, Jean, "The Ramayana in South East Asian Epigraphy and Iconography,"
4. Srinivasan, K.S. , " Ramayana Traditions in South East Asia, article in CIRSW. Pxxxxvi.
5. Rakasmani, Kusuma, "The story of Rama in Lao Folk tale, article in Ramayana Its Universal Appeal and Global Role ed. Vyas, L.P. Delhi, 1992.
6. Singaravelu, S, " The Literary Version of Rama Story in Malay" article in CIRSW, P. xciii, footnote. 51
7. Drvahuti, D, "India Malaya and Borneo-cultural synthesis, article in V.C.V. P. 519.
8. Sonoto kapto, "Ramyana- A cultural Legacy in Indonesia " article in RUAGR. P. 65.
9. Anand, kumar swami, a History of Indian and Indo nation Art. London 1927.
10. Kingko, Atagava- The Ramayana epic in Thailand and south east Asia Journel of the Assam Research Society Vol xv 1963.
11. Chaterjee.P.- Indian Culture influences in combodia
12. Francisko, Joan- The Rama Story In the Post Muslim malay Literature of south east asia. The Servah musium Jernal Val.
13. Hucas, C- The old Javanees Ramayana Amestardam 1980